एक खाई जैसी
कोख थी
लोग कहते हैं—
कि खाइयों
से बाहर आना
ग़ैरक़ानूनी है।

—अमृता

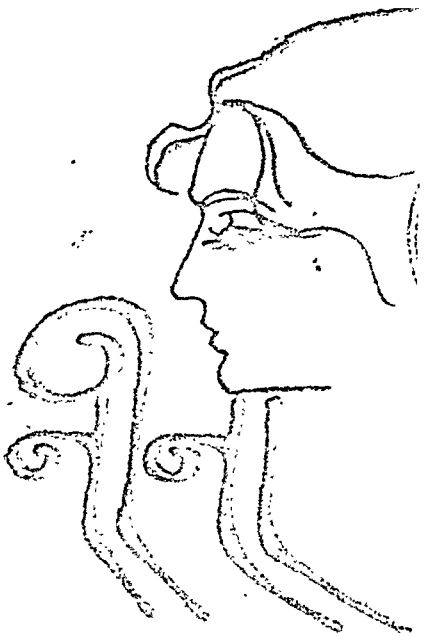

अमानत

अभी रात का पहला ही पहर था लेकिन पोस के अन्तिम दिनों के कारण शरद ऋतु का शीत और रात का अंधेरा एक-दूसरे में घुलकर बहुत गहरे हो गए थे। ऐसे में एक व्यक्ति डाक्टर सलूजा के बंगले के सामने आकर रुक गया। आने वाले व्यक्ति ने झुककर फाटक के पास टंगे हुए डाक्टर के बोर्ड को देखा। रात का अंधकार शायद बोर्ड के सब अक्षरों पर लिपा हुआ था। आगन्तुक ने अपने कोट की घड़ी जेब में से एक टार्च निकाली। टार्च के प्रकाश में बोर्ड के अक्षर चमके और इसके साथ ही स्वयं उस व्यक्ति के फौजी बूटों और फौजी वस्त्रों पर हल्का-सा प्रकाश पड़ा।

फौजी की बायीं बांह में गठरी जैसी कोई चीज़ लिपटी हुई थी जिसे उसने बड़े ज़ोर से अपने पहलू से सटा रखा था। कम्बल की लपेट को उसने बायीं बांह की ओर से कुछ ढीला किया और टार्च के प्रकाश को अपन छाती की ओर घुमाया।

गठरी-सी जान पड़ते हुए कपड़ों में एक सोए हुए बच्चे का चेहरा चमका। मालूम होता था टार्च का प्रकाश एक जगह केन्द्रित नहीं हो पाता, फौजी के दायें हाथ में एक कम्पन-सा उत्पन्न हुआ। फिर उसने टार्च को बुझा दिया और बच्चे के चेहरे पर अपने चेहरे को झुकाकर अपने पूरे शरीर को दीवार का सहारा दिया।

सोए हुए बच्चे का नन्हा-सा कोमल गाल, फौजी के गाल के साथ सटा हुआ था। दोलों की आंखें बन्द थीं। बच्चे की आंखों को नींद ने बंद कर रखा था और फौजी की आंखों को न जाने किस गहरी उदासी ने। बांहों और कपड़ों में लिपटा हुआ बच्चा कुछ हड़बड़ाया, शायद फौजी की बन्द आंखों में से कुछ पानी रिसकर उसके चेहरे पर आ गिरा था।

बंगले के अंदर से एक व्यक्ति फाटक की ओर आया, शायद वह चौकीदार था और फाटक बन्द करने के लिए आया था। फाटक की सांकल पर हाथ डालते समय उसने दीवार के साथ लगे हुए फौजी को देखा।

"अरे कौन हो तुम?" चौकीदार की आवाज में एक रचा-बसा

खुरदरापन था जिसे प्रतिदिन के अनेकों व्यर्थ प्रश्नों और व्यर्थ उत्तरों ने उसका स्वभाव बना दिया था।

फ़ौजी के शरीर में एक कंपकंपी दौड़ गई। कुछ भयभीत-सा होकर उसने चौकीदार की ओर देखा और फिर अपने बच्चे को और भी जोर के साथ अपनी छाती से लगा लिया। बच्चे के गाल पर अपना गाल टिकाकर कुछ देर पहले फौजी को विशेष प्रकार का संतोष प्राप्त हुआ था, लेकिन अब उसे लगा जैसे चौकीदार का स्वर उस चील के पंजों के समान था जो उसके बच्चे के चेहरे पर झपटना चाहती थी।

"अरे कौन हो तुम? बोलते क्यों नहीं?" चौकीदार ने कंधे से लगी हुई लाठी को अपनी मुट्ठी में ले लिया।

"मुझे डाक्टर सलूजा से मिलना है।" फौजी का शरीर एक बुत की तरह निश्चेष्ट-सा था। केवल उसके होंठ धीरे से फड़के।

"तो अन्दर क्यों नहीं आता? बाहर खड़ा क्या करता है?" चौकीदार ने फाटक को अपनी ओर खींचकर फौजी के गुजरने के लिए रास्ता बना दिया। अनजाने तौर पर फौजी के पांव में एक गति उत्पन्न हुई और वह फाटक में से गुजरकर चौकीदार के साथ बंगले के बरामदे में आ गया।

"यहां बैठो, मैं खबर करता हूं। रात की फीस दुगुनी है, दुगुनी।" और चौकीदार ने फौजी के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना उसे एक बेंच पर बैठने का संकेत किया और स्वयं अन्दर चला गया।

जिस समय डाक्टर के पांव की चाप बरामदे तक पहुंची फौजी ने काफी हद तक अपने-आप को संभाल लिया था। उसके शरीर की मामूली हरकत और दरवाजे पर लगी हुई टकटकी से मालूम होता था कि उसकी शिथिलता अब बहुत हद तक दूर हो चुकी थी।

डाक्टर के पांव में हल्के काले स्लीपर थे, मालूम होता था वह बिस्तर में से निकलकर आया है। फौजी ने दायें हाथ को माथे तक ले जाकर डाक्टर को नमस्कार किया।

फौजी की गोद का बच्चा अभी तक सोया हुआ था। डाक्टर ने बच्चे के चेहरे पर झुकते हुए पूछा, "बच्चा बीमार है?"

फौजी के चेहरे पर घबराहट ने अपने रेखाचित्र खींच दिए, "नहीं··· हां···मैं···"

"बोलो।"

"मैं एक फौजी हूं, मुझे कल आर्डर आया है कि मैं तुरन्त नौकरी पर पहुंच जाऊं। मैं घर छुट्टी पर आया था। मेरी घर वाली पिछले हफ्ते मर

गई है। अब मेरे पीछे बच्चे की देखभाल करने वाला कोई नहीं है···"

"हूं। और इस बच्चे को तुम हमारे अस्पताल में रखना चाहते हो?" डाक्टर ने बड़े गौर से बच्चे के चेहरे की ओर देखा।

"जी, मुझे मालूम हुआ है कि आपके अस्पताल में एक ऐसा विभाग भी है, जहां आप अनाथ बच्चों की देख-रेख करते हैं।"

"हां, लेकिन यहां केवल वही बच्चे रखे जाते हैं जिनका कोई वारिस न हो। इसका मतलब यह है कि जिन गैर-कानूनी बच्चों को लोग यहां-वहां फेंक देते हैं उन्हें मारने या फेंकने के बजाय वे यहां दे जाएं। हम अस्पताल की आमदनी में से एक भाग उस बच्चाघर को दे देते हैं।" डाक्टर ने फौजी को समझाया।

"जहां इतना परोपकार करते हैं वहां मेरे बच्चे को भी उसमें रख लीजिए, इसका और कोई नहीं है।" फौजी के स्वर में उदासीनता के साथ-साथ प्रार्थना भी उभर आई।

डाक्टर ने बच्चे के माथे को अपनी उंगलियों से छुआ। बच्चे का माथा तप रहा था और उसका श्वास भी साधारण गति में नहीं था।

"क्या बच्चा बीमार है?" डाक्टर ने पूछा।

"इसे परसों से बुखार आ रहा है। पहले अच्छा-भला था, शायद मां का होका लग गया है।"

डाक्टर ने स्टेथिस्कोप से बच्चे की छाती का निरीक्षण किया। उसकी पीठ देखी, उसके श्वास की गति की भी जांच की। अन्त में उसके फौजी बाप ने कहा, "मुझे अफसोस है कि हम बच्चे को अपने वार्ड में नहीं रख सकेंगे। बच्चे को डबल निमोनिया है, शायद यह बचेगा नहीं।"

फौजी के चेहरे पर एकाएक हल्दी-सी पुत गई।

"डाक्टर, इसका और कोई नहीं है। चाहे मरे चाहे जीए, इसे यहां रख लीजिए। मैं इसे और कहीं नहीं ले जा सकता। मैं आज ही रात की गाड़ी से लड़ाई पर जा रहा हूं।". फौजी का चेहरा पीला पड़ा हुआ था। अपने कांपते हुए हाथ से उसने कोट की जेब में से फौजी हुक्मनामा निकालकर डाक्टर के हाथों में दे दिया।

डाक्टर ने पत्र हाथ में लेकर परे मेज पर पड़ी हुई घंटी बजाई। कमरे में एक नौकर ने प्रवेश किया,

"बीबीजी को बुलाओ।" डाक्टर ने नौकर से कहा। फिर फौजी की ओर मुड़कर बोला, "मेरी पत्नी बच्चों के उस वार्ड की इंचार्ज है। असल में उसी ने अपनी मर्जी से यह वार्ड खोला है। उसे पूछ लीजिए।"

जब तक डाक्टर की पत्नी राजवंती कमरे में आई बच्चे का कंठ में
ा हुआ रोना उसकी छाती की पीड़ा के साथ और भी कठिन हो गया
और फौजी उसे कंधे से लगाए बहलाने की कोशिश करने लगा।
"यह आपके वार्ड में अपना बच्चा छोड़ना चाहते हैं लेकिन बच्चे की
लत अच्छी नहीं है। मैं नहीं कह सकता कि कल तक वह बच भी सकेगा
नहीं—क्या आप इसे रखेंगी ?" डाक्टर ने अपनी पत्नी से पूछा।
"मैं अपने वार्ड में किसी बच्चे की मौत नहीं देख सकती, इसलिए यह
ात मेरे लिए मुश्किल है। अगर इसे बचना नहीं है तो कम से कम मेरी
ांखों के सामने इसकी मौत न हो। इनसे कहिए कि किसी दूसरे वार्ड में
ाखिल कराके इलाज कराएं या घर ले जाकर इलाज करें। अगर बच
ाया तो फिर मैं अपने वार्ड में रख लूंगी। लेकिन यह बच्चे को हमारे वार्ड
में रखना क्यों चाहते हैं ? हमारे वार्ड में तो केवल लावारिस बच्चों को
रखा जाता है।" राजवंती ने आश्चर्य से फौजी के पीले पड़े हुए चेहरे की
ओर देखा।
"इसका वारिस भी भगवान् के सिवा और कोई नहीं है। आप इसे
अपनी शरण में ले लीजिए। अगर मर भी गया तो दो लकड़ियां डालकर
जला दीजिएगा।" फौजी का पीला पड़ा हुआ चेहरा उसकी मानसिक वेदना
से जैसे कजला गया था।
राजवंती ने बच्चे के पीले और बीमार मुंह की ओर देखा, फिर उसने
दोनों बांहें आगे बढ़ाकर, फौजी के कंधे से बच्चे को अलग करके अपने कंधे
से लगा लिया।
बाहर के फाटक के पास जिसने चौकीदार के एक-बोल पर बच्चे को
ज़ोर से अपनी छाती से चिपका लिया था और जो उस समय इस ख्याल से
कांप रहा था कि कोई उसके बच्चे को उससे छीन लेगा, अब उसी ने अपने
बच्चे को डाक्टरों के हवाले करते हुए सन्तोष का सांस लिया।
"आपसे मेरी एक प्रार्थना है..." फौजी ने दोनों हाथ जोड़कर डाक्टर
की पत्नी से कहा, "कहते हैं जिनके यहां सन्तान नहीं, वे आपके हस्पताल में
से किसी बच्चे को ले जाते हैं। आप इस बच्चे को किसी को न दीजिएगा।
क्या मालूम मैं लड़ाई से जिन्दा वापस आ जाऊं, आप मुझ गरीब की अमा-
नत को अमानत समझकर इसे अपने पास रखे रहिएगा।" फौजी का कंठ
भर आया और इससे अधिक वह कुछ न कह सका। अपनी दाहिनी बांह
को आंखों से लगाकर उसने अपने मोटे फौजी कोट की आस्तीन से अपनी
आंखें पोंछ लीं।

"अच्छा···यह आपकी अमानत है।" राजवंती ने बच्चे को हल्के-हल्के थपथपाते हुए कहा। उसकी थपक में शायद बच्चे को अपनी मां के खोए हुए हाथों की थपकी का अनुभव हुआ, उसका अटका हुआ रोना नींद में बदल गया।

डाक्टर ने मेज़ की दराज़ में से एक कागज निकाला।

"आपका नाम ?"

"मेरा नाम, हवलदार जीवनलाल।"

"पता ?"

"नम्बर १२४४०, १०० ए०डी० रेजीमेंट, मार्फ़त ५३ ए० पी० ओ०, दिल्ली।"

"गांव ?"

"मीयां कोट।"

"बच्चे का नाम ?"

"इसकी मां इसे 'तेज' कहकर पुकारा करती थी।" और फौजी की आंखें कमरे के फर्श पर कुछ इस प्रकार टिकी रहीं जैसे वह ईंटों की दर्जों में से खोए हुए दिनों को टटोल रही हों। शायद वह सोच रहा था कि पिछले एक हफ्ते के अन्दर-अन्दर किस प्रकार उसका संसार बदल गया था। रास्तों ने कितने मोड़ खा लिए थे। उसका घर, उसकी घरवाली, उसका बेटा, उसके घोंसले के तीनों तिनके किस प्रकार बिखर गए थे।

"बच्चे की आयु ?"

"दो साल पांच महीने। पिछले से पिछले साल यह शुरू भादों में पैदा हुआ था। संक्रान्ति के दूसरे दिन, मैं उन दिनों छुट्टी पर आया हुआ था।"

डाक्टर ने अपने कागज़ पर फौजी की बताई हुई तिथियां लिख लीं। फौजी ने अपने कोट की जेब से कुछ नोट निकाले और उन्हें डाक्टर की मेज़ पर रखते हुए कहा, "ये थोड़े-से पैसे हैं। आयंदा भी इसके लिए कुछ न कुछ भेजता रहूंगा। अगर मैं लड़ाई में मारा गया तो दया खाकर किस तरह भी हो इसे पाल लीजिएगा।"

अब शायद फौजी के मन में कोई बड़ा हौल उठा। मन की इस कमज़ोरी से बचने के लिए उसने सोए हुए बच्चे की पीठ पर अपने दाहिने हाथ से प्यार किया और अपने पांव को कमरे के दरवाज़े की ओर मोड़ लिया।

फौजी बूटों की आवाज़ बरामदे में से होकर कं

और चली गई और फिर फाटक से बाहर।

डाक्टर और उसकी पत्नी उस कमरे की चुप्पी में मिट्टी के बुतों की तरह खड़े रहे।

"मैं हस्पताल में से आपके वार्ड की नर्स को बुलाता हूं, बच्चे को वार्ड में भेज दीजिए। इस वक्त इसे जो दवाइयां चाहिए, मैं नर्स को लिखे देता हूं।" डाक्टर ने अपनी पत्नी से कहा।

हस्पताल के कमरे बंगले के पिछवाड़े में थे। बीच में एक छोटा-सा ग्राउंड था। हस्पताल के बीच में एक ग्राउंड था। डाक्टर के घर वाले उस ग्राउण्ड का बहुत कम इस्तेमाल करते थे, वे सबके सब बंगले के सामने के ग्राउण्ड में बैठते थे। पिछले भाग की स्वस्थ धूप में कभी-कभी हस्पताल के स्वस्थ होते हुए रोगी कुछ देर के लिए आ बैठते थे या दोपहर के समय बच्चों के उस वार्ड की नर्सें बच्चों को नहला-धुलाकर वहां आ बैठती थीं। शिशिर की दोपहरों और ग्रीष्म ऋतु की शामों को वहां कुछ चहल-पहल हो जाती थी।

"बच्चे का सांस ठीक नहीं चल रहा।" राजवंती ने कहा। बच्चा न जाने नींद के मद में था या बुखार की बेहोशी में, वह उसी प्रकार उसके कंधे से लगा हुआ था।

"नर्स को बुलाऊं?"

"मैं आज की रात इसे वार्ड में नहीं भेजना चाहती। आज बहुत ठंड है और बच्चा बहुत बीमार है।"

"आपको तकलीफ होगी···" डाक्टर ने कहा और अपनी पत्नी के चेहरे की ओर देखता रहा। राजवंती का चेहरा उतरा हुआ था, आंखें भीतर धंसी हुई थीं, लेकिन उसका हाथ उसी पहली गति के साथ बच्चे को थपथपा रहा था।

"आज ही की रात थी···वही रात···लोहड़ी से एक दिन पहले··· जब मेरा रवि मुझसे बिछुड़ गया था···यही रात थी।" राजवंती के होंठ धीरे-धीरे हिलते रहे। चेहरा उसी प्रकार उतरा हुआ था, आंखें उसी प्रकार भीतर धंसी हुई थीं, उसका हाथ उसी प्रकार बच्चे की पीठ थपथपा रहा था।

डाक्टर सलूजा को अपनी पत्नी की इस पीड़ा का ज्ञान था। उसकी समस्त पीड़ाएं उसके अपने हृदय में भी थीं। लेकिन उसे अभी तक यह ख्याल न आया था कि आज की रात ही वह रात थी जब उनका इकलौता बेटा रवि हमेशा के लिए उनसे जुदा हो गया था। उसकी सारी डाक्टरी उस

रात अपने बच्चे की मृत्यु के सामने लज्जित होकर रह गई थी। उसकी पत्नी कहती तो कुछ नहीं थी लेकिन उसकी आंखों में से कुछ ऐसा उलाहना उठता था कि डाक्टर सलूजा को अनुभव होता, उसकी डिगरियां और उसकी सारी योग्यता उसकी पत्नी के सम्मुख शर्मसार हैं।

तीन साल हो चुके थे, उनका रवि आज लोहड़ी के एक दिन पहले उनसे बिछुड़ गया था और आज लोहड़ी के एक दिन पहले, उसी रात यह बीमार और बेसहारा बच्चा स्वयं चलकर उनके दरवाज़े पर आया था। अब डाक्टर की समझ में आया कि उसकी पत्नी क्यों इस बच्चे के लिए इनकार नहीं कर सकी, क्यों वह उसे गले से लगाए खड़ी है, क्यों वह उसे नर्स के हवाले भी नहीं करना चाहती···

डाक्टर सलूजा को अपनी पत्नी के दुःख स्मरण हो आए। वह कुछ अधिक पढ़ी-लिखी नहीं थी, डाक्टरी की तो उसे कुछ भी समझ नहीं थी, फिर भी वह एक मां थी। उसने बच्चे को जन्म दिया था और उन्हें पाल-पोसकर देखा था। उसने अपने बच्चे को मरते देखा, उसने आत्मा का रुदन देखा, इसलिए वह सबसे कहीं अधिक मां के दुःख को समझ सकती थी।

डाक्टर सलूजा को याद आया कि कैसे एक दिन एक भोली जवान लड़की ने उसके हस्पताल में एक बच्चे को जन्म दिया था और फिर वह लड़की उसके पांव पर गिरकर रो पड़ी थी। उसने बताया था कि अभी वह कंवारी है, उसके बच्चे के लिए समाज में कोई स्थान नहीं, वह दुःखी है, लेकिन वह मां बन चुकी थी, उसके मन में ममता जाग चुकी थी, वह चाहती थी, उसका बच्चा जीवित रहे, उसने भूल की है लेकिन उसका बच्चा उसकी भूल का दण्ड न भुगते···और फिर जब डाक्टर की पत्नी ने यह सब सुना तो उसे 'जच्चाघर' खोलने का ख्याल आया। रवि की मृत्यु हुए अभी कुछ ही दिन हुए थे कि उसने उसी कुंवारी और दुःखी मां के नवजात बच्चे के साथ इस वार्ड की नींव डाल दी। दो नर्सें रख उसने वार्ड खोल दिया। वह बच्चा वहां पलता रहा। उसके बाद कई ढंग से कुछ बच्चे उनके वार्ड में पहुंचे। कभी कोई किसी बच्चे के साथ एक चिट्ठी रखकर चला जाता और कभी कोई डाक्टर को अपने विश्वास में लेकर बच्चा सौंप जाता। इस वार्ड को खुले तीन साल हो चुके थे। अब नर्सें भी अधिक हो गई थीं और बच्चे भी पांच-छः हो गए थे। उसकी अपनी पत्नी उस वार्ड की इंचार्ज थी। डाक्टर उन बच्चों की देख-रेख अपनी ओषधियों और अपने परामर्शों द्वारा करता था और उसकी पत्नी अपनी मन की पूर्ण ममता के साथ उसकी देख-रेख करती थी।

डाक्टर सलूजा ने अपने विचारों को अपने मस्तिष्क से झटककर अपने ध्यान को सामने के बच्चे की ओर मोड़ा। रात और भी ठंडी और काली हो गई थी। बच्चे को अच्छी तरह लपेटकर डाक्टर और उसकी पत्नी उसे अपने सोने के कमरे में ले गए।

यह पहली रात थी जब राजवंती ने एक पराये बच्चे को अपने साथ सुलाया। वैसे वह अपने वार्ड के बच्चों के साथ कई-कई घंटे खेलती रहती थी। जब नर्सें उन्हें नहला-धुला देती थीं तो वह बड़े शौक से अपने हाथों उनके बाल बना देती थी। हर इतवार की दोपहर को, जो बच्चे रोटी खाने के योग्य हो चुके थे, उन्हें बुलाकर वह अपने घर के सब व्यक्तियों के साथ बड़ी मेज पर खाना खिलाती थी। बच्चे उसे 'माताजी' कहकर पुकारते थे और डाक्टर सलूजा को पिताजी कहते थे। लेकिन फिर भी आज यह पहला बच्चा था जिसे राजवंती ने अपने साथ सुलाया था।

उस रात डाक्टर और राजवंती पूरे दो घंटे तक एक साथ जागते रहे। गरम दूध में दवा की बूंदें मिला-मिलाकर बच्चे को पिलाते रहे। उसकी छाती पर तेल मलते रहे और गरम पानी की बोतल से बच्चे को सेंकते रहे। बच्चे ने कई बार आंखें खोलीं। अपने इर्द-गिर्द के नये और अपरिचित चेहरों की ओर देखकर रोया, फिर दवा और आराम के मिले-जुले चैन के साथ सो गया।

तिनके

दूसरी सुबह बच्चे का रंग फिरा हुआ था। मसले हुए फूल जैसे चेहरे पर रौनक आ गई थी। राजवंती के भीतर यह विश्वास जागता था कि यह बच्चा बच जाएगा। उसका श्वास काफी हद तक अपनी स्वाभाविक गति पर आ चुका था लेकिन राजवंती को एक बात बुरी तरह खल रही थी और वह यह कि बच्चे के पलटते हुए स्वास्थ्य के साथ-साथ बच्चा अपने होश में भी आ रहा था। सुबह अपनी पहली जाग में ही उसने 'बापू' 'बापू' कहकर सबके चेहरों की ओर देखा और हर किसी के हुंकारा भरने पर भी उसने मुंह फेरकर आंखें बंद कर ली थीं।

राजवंती सोच रही थी कि यदि बच्चे की आयु एक वर्ष कम होती तो उसे बहलाना आसान था। एक हफ्ते के अन्दर-अन्दर पहले उसे अपनी मां से जुदा होना पड़ा है और फिर बाप से। उसके मस्तिष्क में दोनों प्रतिमाएं टिकी हुई हैं। इसलिए वह नींद में भी कांप-कांप उठता है।

राजवंती की बस एकमात्र बेटी थी जिसकी आयु लगभग बारह व
की थी। उसके बाद रवि उत्पन्न हुआ था और चला गया था। और बस'
और अब इस नन्हे तेज ने उसका पूरा ध्यान अपनी ओर खींच लिया
दूसरी दोपहर को भी वह तेज के लिए सब कुछ स्वयं ही करती रही। उसे
वार्ड की नर्सें बारी-बारी घर आईं और नये बच्चे को देख गईं। जि
नर्सों को रात के समय वार्ड में रहना था, उन्होंने राजवंती को बड़ा विश्वा
दिलाया कि वे उस बच्चे को वार्ड में कोई कष्ट नहीं होने देंगी, लेकि
राजवंती ने उनसे कहा कि बस एक या दो रातों के लिए और यह उ
अपने पास रखेगी और बीमारी के खतरे का समय गुज़ारकर वह उसे वा
में भेज देगी।

तेज के चेहरे पर एक चमक ज़रूर आती जा रही थी, लेकिन वह ज
भी कमरे, डाक्टर, नर्स और राजवंती के चेहरे की ओर देखता था, उस
होंठ सूख-से जाते थे और चेहरा मुर्झा जाता था।

अगली संध्या तक राजवंती के मन में एक हर्ष-सा जाग उठा था कि
वह थोड़े-से दिनों में ही तेज की बीमारी और उदासी को जीत लेगी
राजवंती ने अपने वार्ड की नर्सों को कहला भेजा कि वे सब बच्चों
अच्छी तरह गर्म कपड़े पहनाकर बंगले में ले आए।

जब रात के समय डाक्टर सलूजा अपने हस्पताल के काम से निपटक
घर आए तो उनके बंगले के भीतर आंगन में लोहड़ी जल रही थी औ
उसके इर्द-गिर्द दरियां बिछी हुई थीं। जिन बच्चों की आयु एक साल
अधिक थी और बैठ सकते थे, वे दरियों पर बैठे जलती आग का तमाश
देख रहे थे और जिनकी आयु एक साल से कम थी, वे नर्सों की गोद में
राजवंती ने कपड़ों में लपेटकर तेज को अपनी गोद में ले रखा था। बच्
के सामने मिठाई की छोटी-छोटी प्लेटें रखी हुई थीं।

बच्चों के वार्ड ने राजवंती के उदास जीवन में बड़ी दिलचस्पी उत्प
कर दी थी। उसके लिए बहुत-सी व्यस्तताएं उत्पन्न की थीं, लेकिन तेज
आकर सचमुच राजवंती में कोई नई चीज जमा दी थी। उसमें जीवन
एक नई लहर आ गई थी।

डाक्टर सलूजा और उनकी बेटी सरला आज राजवंती की ये न
प्रवृत्तियां देखकर बहुत खुश थे। आज कई सालों के बाद उनके घर लोह
जली थी। नर्सों और नौकरों में भी आज एक विचित्र उत्साह भर ग
था। सरला तो पहले से ही सब बच्चों के साथ बारी-बारी खेल रही थ
डाक्टर सलूजा भी आकर उसमें घुल-मिल गए।

बच्चे मामूली शरारतें कर रहे थे। उनमें से सबसे बड़ा बच्चा अधिक से अधिक तीन वर्ष का था और एक-दो उससे कुछ ही छोटे थे। वे कभी आग की किसी जलती हुई लकड़ी को खींच लेते, कभी परे रखी सूखी लकड़ियों में से एक खींचकर आग में फेंक देते। नर्स उनके हाथ पकड़तीं और वे ऊंचे स्वर में 'माताजी' कहकर चिल्ला उठते। राजवंती उन्हें पुचकारती और वे खिलखिलाकर हंसते हुए रेवड़ियों की मुट्ठियां भरते हुए कभी राजवंती की टांगों से लिपट जाते और कभी डाक्टर सलूजा को जा दबाते। सब बच्चे सरला को 'बहनजी' कहकर पुकारते थे।

तेज को यह गहमागहमी अच्छी लग रही थी। वह राजवंती की गोद में से झुककर हंसते हुए नन्हे-नन्हे चेहरों को देख रहा था। उन क्षणों में वह 'बापू' की रट को भूल गया था। उसके पीले पतले होंठों पर मुस्कराहट की एक रेखा देखकर राजवंती खिल उठी।

राजवंती ने भीतर से संगतरों का एक टोकरा मंगवाया। जलती हुई सूखी लकड़ियों में से उठती हुई सुगंध से सारा आंगन महक रहा था। छोटे बच्चे भी नर्सों की गोद में से आकाश की ओर झुक-झुक पड़ते थे। उनके गाल आग की गर्मी और प्रकाश से लाल सूर्ख हो रहे थे। संगतरों को देखते ही सब बच्चे अधीर हो गए और संगतरों के टोकरे की ओर उठ दौड़े।

वास्तव में राजवंती के जीवन में एक बहुत बड़ी कमी आ गई थी। संगतरे को देखते ही उसमें एक विशेष प्रकार की उत्तेजना उत्पन्न हो जाती थी। जब रवि बीमार था, उसकी छाती के रोग के कारण डाक्टरों ने उसके लिए संगतरा बिल्कुल मना कर दिया था। रवि के दिल में संगतरे के लिए लालसा रह गई थी। वह अन्तिम समय तक संगतरा···संगतरा··· कहता रहा था लेकिन राजवंती उसे संगतरा न दे सकी। उस दिन के-बाद आज तक राजवंती ने संगतरे को मुंह नहीं लगाया था। वह अपने बेटे की एक छोटी-सी इच्छा भी पूरी न कर सकी थी इस बात का अरमान उसके जीवन में एक गहरा गड्ढा डाल गया था। राजवंती अपने वार्ड के बच्चों को खूब संगतरे खिलाती थी। अपने हाथों से संगतरों का रस निकाल-निकालकर और शक्कर डालकर बच्चों को पिलाती और इस प्रकार के पछतावे के वशीभूत हो संगतरे की एक तुरी भी अपने होंठों से न लगाती। आज पूरे तीन वर्ष हो चुके थे लेकिन राजवंती के हृदय में पड़ा हुआ वह घाव भरने में नहीं आता था।

बच्चे भरे हुए टोकरे में से संगतरे उछालते रहे, छीलते रहे और खाते रहे। तेज के लिए अभी बड़े परहेज की जरूरत थी लेकिन राजवंती ने

एक-दो तुरियां तेज को भी चुसा दीं।

रात पड़ती जा रही थी। नर्सों ने बच्चों को अच्छी तरह गरम कपड़ों में लपेटा और उन्हें उनके वार्ड की ओर ले चलीं। एक नर्स ने तेज की ओर अपनी बांहें फैलाईं; वह उसे भी दूसरे बच्चों के साथ ले जाना चाहती थी लेकिन तेज ने नर्स के मुंह की ओर देखते ही ज़ोर से राजवंती का कंधा दबा दिया।

"अभी नहीं···कल-परसों देखा जाएगा।" राजवंती ने कहा और तेज को भींच लिया।

कुछ दिनों में ही तेज चंगा-भला हो गया। उसका स्वास्थ्य निखर आया था और उसकी उदासी अन्य बच्चों के साथ से, राजवंती के प्यार से और नर्सों के विशेष देख-रेख से दूर हो गई थी। अब नर्सें उसे अपने वार्ड में ले जाती थीं। वार्ड में जितने बच्चे थे, वहां उतने ही पंघूड़े पड़े थे। तेज सबके पंघूड़े के पास जाता, छोटे बच्चों के हंसने और रोने को आश्चर्य से देखता। अपनी आयु के बच्चों के साथ खेलता और कई बार उनके साथ खेलते-खेलते वहीं सो जाता। नर्सों ने स्टोर में से एक छोटा-सा पलंग निकलवा लिया। वे सोए हुए तेज को यार्ड में ही सुला लेतीं। कभी-कभी जब तेज को नींद न आती तो वह "माताजी के घर जाऊंगा"—कहकर राजवंती के पास बंगले में जाने की ज़िद करता। उसकी देखादेखी अन्य बच्चे भी कुछ ज़िद करते, लेकिन उन्हें वहां सोने की आदत पड़ चुकी थी, थोड़ी-सी ज़िद के बाद वे चुप हो जाते थे। तेज को भी नर्सें बैठा लेतीं। लेकिन कभी-कभी वह अपनी ज़िद में राजवंती के पास आकर ही दम लेता।

अपनी आयु के बच्चों के साथ में भी तेज के लिए एक आकर्षण था। सुबह-सवेरे ही वह फिर वार्ड की ओर भाग जाता। जब नर्सें सब बच्चों को नहजा-धुलाकर तैयार कर लेतीं, राजवंती स्वयं वार्ड में आती और अपने सामने बच्चों को नाश्ता कराती। छोटे बच्चों के लिए दूध की बोतलों को गरम पानी में उबाला जाता। जब बड़े बच्चे खा-पी चुकते तो राजवंती एक नर्स को साथ लेकर सब बड़े बच्चों को बाहर के ग्राउंड में ले आती। बच्चे हंसते, खेलते और भाग-दौड़ करते। अब तेज उनमें खूब हिल-मिल गया था। अब वह अधिकतर बच्चों के वार्ड में ही सोता था।

सुबह यदि राजवंती के आने में ज़रा देर हो जाती तो वे तीनों-चारों बड़े बच्चे बेचैन हो जाते। नर्सों से कहते कि उन्हें जल्दी तैयार किया जाए, वे माताजी के पास जाएंगे। नर्सें उन्हें कपड़े पहनातीं, जुराबें और बूट पहनातीं और बड़े यत्नों से उन्हें मनाती।

तेज के अतिरिक्त अब वहां दो और लड़के थे जिनकी आयु तीन-तीन साल की थी। एक-दो साल की लड़की थी और अन्य दो बच्चे; एक लड़का और एक लड़की बहुत छोटे थे, बस कुछ महीनों के।

सरला जब स्कूल से आती, इस वार्ड का एक चक्कर जरूर लगाती। बच्चों को भी समय की पहचान हो गई थी। वे बहनजी की आवाज को दूर ही से पहचान लेते थे। सरला कई बार उनके लिए छोटे-छोटे खिलौने, मीठी टिकियां या रंगारंग गुब्बारे लाया करती थी। इतवार के दिन जब राजवंती उन्हें अपने बंगले में अपनी मेज पर खाना खिलाती थी, तो उसके बाद अक्सर वह उन्हें मोटर में बिठाकर घंटे-दो घंटे के लिए बाहर की सैर भी करवा लाती थी।

समय की धूलि

समय की धूलि गहरी होती रही। तेज के मस्तिष्क पर अंकित उसके बापू का चेहरा धीरे-धीरे धुंधला होता चला गया। कभी-कभी जब तेज खेल रहा होता, एक जानी-पहचानी-सी आवाज उसके कानों में पड़ती। हड़बड़ाकर उसके हाथों से खिलौने गिर जाते, पलटकर वह पीछे की ओर देखता, लेकिन वहां कुछ भी न होता और वह हैरान-सा होकर जमीन पर गिरे हुए अपने खिलौने बटोर लेता।

लेकिन तेज इन सब बातों के सोचने के लिए बहुत छोटा था। फिर धीरे-धीरे यह सब कुछ भी कम होता चला गया और तेज अपने इर्द-गिर्द के विस्तृत वातावरण में घुल-मिल गया।

इन्हीं दिनों में एक दिन राजवंती ने अपने हस्पताल की लेडी डाक्टर को बुला भेजा और जब राजवंती के कमरे से वापस जाते हुए उस लेडी डाक्टर ने हंसकर कहा—"पहले जाकर डाक्टर सलूजा को बधाई दे आऊं।" तो राजवंती ने अपने निचले होंठ को इस तरह अपने दांतों में दबा लिया जैसे उसके आश्चर्य की कोई सीमा न रही हो।

गत वर्षों में राजवंती को कुछ ऐसा अनुभव हुआ था जैसे उसके तन-मन में उसके जीवन की धड़कन पत्थर की तरह जम गई थी। उसकी नसों में लहू तो जरूर दौड़ता होगा, इसीलिए उसका शरीर हिलता-डोलता था। लेकिन इस बात पर उसे पूर्ण विश्वास हो चुका था कि उसके हृदय की जीवन-प्रद नाड़ी धक्-धक् करने की बजाय एक कच्चे धागे का रूप धारण कर चुकी थी। उसे मानो इस बात का पूर्ण विश्वास हो चुका था कि उसके

अन्दर की प्रत्येक वस्तु उसके रवि की मृत्यु के साथ ही समाप्त हो चुकी थी आज उसने निचले होंठ को दांतों में ले लिया, सचमुच उसके आश्चर्य की सीमा नहीं थी कि उसके अन्दर किसी बच्चे का ढांचा तैयार हो रहा था।

डाक्टर सलूजा के चेहरे पर एक स्वाभाविक प्रसन्नता उत्पन्न हुई। वास्तव में उन्हें अधिक बेटे-बेटियों की आवश्यकता नहीं थी, वे अपनी एक-मात्र बेटी सरला से ही सन्तुष्ट थे, लेकिन वे राजवंती में दिन-प्रतिदिन सोती जा रही दिलचस्पियों को अवश्य जगाना चाहते थे। अपने रवि की चोट को उन्होंने जैसे-तैसे सहन कर लिया था लेकिन वे देखते थे कि राज-वंती के पैरों को उस ठोकर ने बेतरह लहूलुहान कर दिया था। अब वे सोचने लगे कि प्रकृति ने राजवंती के हाथों के लिए एक ऐसा सहारा भेज दिया था जिसके आसरे उसके घायल पैर भी बड़ी आसानी से जीवन के पथ पर डग भर सकेंगे।

डाक्टर सलूजा ने प्रकृति की इस घटना पर और भी गहरी तरह विचार किया। प्रकृति के बड़े-बड़े हाथों के पीछे छोटे-से तेज के नन्हे-नन्हे हाथ हिल रहे थे। राजवंती और डाक्टर सलूजा को स्वाभाविक रूप में इस बात का विश्वास हो गया कि उस तेज ने ही उन जमी हुई नसों में मोह-ममता के लहू का संचार किया था। जब नन्हे तेज ने राजवंती की छाती पर सिर रखकर गर्म-गर्म श्वास लिए थे, न जाने उसके अन्दर से कौन-सा चश्मा फूट निकला था, जिसने पानी के एक ही छींटे से घर-भर पर उदासी की जमी हुई धूलि को धो डाला था।

घर का रंग-रूप निखर आया था और जीवन के बंद होंठों पर हंसी खेलने लगी थी।

तेज पहले ही सारे घर का प्यारा था, अब और भी प्यारा हो गया। उसके प्यार-दुलार में और वृद्धि हो गई। कभी बैठे-बैठे राजवंती के दिल में एकाएक एक हौल-सा उठता था कि किसी दिन अचानक तेज का बाप आएगा और उसे अपने साथ ले जाएगा। तेज तो उसके आंगन में किसी की अमानत थी। उस पर किसी और ही का अधिकार था—राजवंती के दिल में एक हूक-सी उठती, उसके अन्दर एक ऐसा अपनापन-सा जाग उठता था कि वह तेज को अपना केवल अपना बना लेना चाहती थी। फिर राज-वंती यह भी सोचती कि तेज का बाप जब से उसे छोड़कर गया है, कई महीने गुजर चुके हैं, उसने दो अक्षर लिखकर भी नहीं भेजे। 'काश, वह जिन्दा हो' और यह सोचकर वह अपनी जिन्दगी के लिए प्रार्थना करने लगती। राजवंती तेज पर अपना पूरा अधिकार जमा लेना चाहती थी,

लेकिन वह किसी प्रकार तेज के बाप के प्रति अशुभ न सोचना चाहती थी।

धीरे-धीरे राजवंती के अन्दर उसका बच्चा हिलने-जुलने लगा और वह उसके अंगों के उभरने-फैलने का अनुभव करने लगी। तेज के प्रति उसका स्नेह और भी बढ़ गया था। बच्चे को जन्म देने के पहले उसे एक बात बेतरह परेशान करने लगी कि उस नये चेहरे के मोह में तेज के प्रति उसके स्नेह में कमी तो न आएगी? हालांकि सोचते-सोचते राजवंती को अपने अनदेखे पुत्र के चेहरे में से रवि का चेहरा नजर आता था। नये बालक की मुखाकृति की कल्पना करते समय रवि की मुखाकृति सामने आ जाती थी। यह सोचकर उसे एक प्रकार का सन्तोष प्राप्त होता था कि उसका रवि पुनः छोटे-से चेहरे के साथ उसकी गोद में लौट रहा था। लेकिन राजवंती को इस बात का भ्रम-सा हो गया था कि कहीं उस नये रवि का चेहरा देखते-देखते तेज के चेहरे को न भूल जाए! तेज को भुला देना उसे भगवान् के अपमान के तुल्य मालूम होता था। यह बात उसके दिल में बैठ गई थी कि तेज ने ही उसके रूठे हुए रवि को मनाया है और वही उसे वापस लाया है।

सोचते-सोचते राजवंती को अपने-आप से भय-सा आने लगता। फिर इस प्रकार के समस्त विचारों से पीछा छुड़ाने के लिए उसने अपने दिल में इस चाव को पालना शुरू किया कि उसके घर में बेटे की बजाए बेटी जन्म ले, जो सरला की छोटी बहन बनकर आंगन में खेले। जो किसी रवि के स्थान की पूर्ति न करे और जिसका चेहरा देखकर वह तेज का चेहरा न भूल सके। तेज तो उसके घर में उस रात आया था जिस रात उसका रवि उसे छोड़कर गया था। रवि के खाली स्थान को वह केवल तेज ही की प्रतिमा से भरना चाहती थी।

पोस का पाला उतर आया था, जब राजवंती के घर में एक बेटी ने जन्म लिया। बेटी के चेहरे ने उसकी सारी सोचें समाप्त कर दीं और तेज का स्थान पूर्ववत् स्थापित रहा।

पोस के पाले की उस रात डाक्टर सलूजा के हस्पताल में भी किसी मजबूर मां ने एक बच्ची को जन्म दिया और वह बच्ची अपनी जन्मदाता मां के अंगों से टूटकर हस्पताल के बच्चाघर में दाखिल हो गई।

राजवंती के हृदय में रवि ने जाते समय न जाने कैसा गढ़ा डाल दिया था, जो राह चलते प्यारों को गले से लगाने पर भी भरने में नहीं आता था और उसके भीतर ममता का एक ऐसा सोता फूट पड़ा था जो मुट्ठियां भर-भरके प्यार और सहानुभूति बांटने पर भी समाप्त नहीं होता था और उस

सोते के प्रभाव से राजवंती डालियों से टूटे हुए फूलों को अपने दिल जितने बड़े आंगन में सजा लेती थी।

राजवंती की छोटी बेटी अभी हफ़्ता-भर की थी, तब उसे पता चला कि हस्पताल में नई आई हुई बच्ची बहुत कमज़ोर हो गई है। हस्पताल में यद्यपि सबके सब बच्चे मां के दूध के बिना पले थे लेकिन यह बच्ची दूसरा दुध बिल्कुल न पचा पाती थी। राजवंती की ममता का सोता पहले ही बड़ी रवानी से बहता था, लेकिन इस बच्ची के साथ उसे विशेष लगाव हो गया क्योंकि उसने भी उसी रात जन्म लिया था जिस रात स्वयं राजवंती ने एक बच्चे को जन्म दिया था। दोनों बेटियों की जन्म-रात एक थी, जैसे वे जुड़वां हों। राजवंती ने दोनों के मुंह अपनी छाती से लगा दिए।

घंटों-मिनटों के हिसाब से राजवंती की अपनी बेटी लगभग दो घंटे बड़ी थी। वैसे सेहत के हिसाब से भी वह बड़ी नजर आती थी और दूसरी छोटी। पहले तो कई दिनों तक दोनों को 'बड़ी' 'छोटी' के नाम से पुकारा जाता रहा। फिर डाक्टर सलूजा ने छोटी का नाम 'नीना' रख दिया। छोटी को जब सबके सब 'नीना' कहकर पुकारने लगे तो बड़ी के लिए उससे मिलता-जुलता नाम 'वीणा' आप ही आप सबकी जबान पर आ गया।

तेज कभी एक को उठाता और कभी दूसरे को। दोनों रबड़ की गुड़ियों की तरह कोमल थीं। अगर रोतीं तो दोनों एक साथ रोतीं और अगर सोतीं तो भी इस प्रकार जैसे शर्त बांधकर सोती हों।

सरला के हाथ सयाने और संभले हुए थे। जब वह उन्हें उठाती तो अच्छी तरह बहला लेती, लेकिन तेज के नन्हे और अनजान हाथों में से दोनों निकल-निकल पड़तीं और बहलाएं न बहलतीं। तेज अब चौथे साल में था, बल्कि यह साल भी आधा निकल चुका था। वह उन दोनों बच्चियों के बारे में राजवंती से तरह-तरह के प्रश्न पूछता, "माता जी, ये दोनों कहां से आई हैं?" "माता जी, ये दोनों रोती क्यों हैं?" "माता जी, ये बोलतीं क्यों नहीं?"

"ये बहुत छोटी हैं, जरा सी बड़ी हो जाएं, फिर तुम्हारे साथ खेलेंगी!" राजवंती हंसकर उत्तर देती।

'ये रोती क्यों हैं?' तेज फिर पूछता।

"कहती हैं, तेज हमें प्यार नहीं करता! यह लो, इन्हें चुप कराओ।" और राजवंती तेज को परुंग पर बिठाकर किसी एक को उसकी छोटी-सी गोद में डाल देती।

"यह मुझसे चुप नहीं होती।" तेज फिर कहता और बदलकर दूसरी
ो ले लेता। जब वह भी चुप न होती तो तेज उसे भी दे देता।
"ये रोटी क्यों नहीं खातीं?" तेज अपनी रोटी में से एक टुकड़ा तोड़-
कर उनके मुंह की ओर ले जाता।
"अभी इनके दांत नहीं हैं, अभी वे दूध पीती हैं।" और राजवंती तेज
के हाथ में लिए हुए रोटी के टुकड़े को उसी के मुंह में डाल देती।
तेज कभी एक पंघूड़े की ओर जाता, कभी दूसरे की ओर। धीरे-धीरे
दोनों की आंखों में तेज की पहचान घुलती गई। दोनों तेजी की ओर अपनी
बांहें फैलातीं और हूं···हूं···करके उससे बातें करने की कोशिश करतीं।
देखने में दोनों सुन्दर थीं, लेकिन स्वास्थ्य में बड़ी वीणा केवल दो घंटे
बड़ी नहीं, दो महीने बड़ी मालूम होती थी। वीणा का रंग कुछ अधिक
श्वेत, नक्श कुछ गोल-से और चेहरा भरा हुआ था। नीना का रंग निखार
में था लेकिन अधिक श्वेत नहीं था, नक्श पतले थे और कमजोर चेहरे पर
उसकी आंखें अधिक बड़ी और नीली मालूम होती थीं। जो वस्त्र वीणा
को फंसकर आते थे, के नीना के ठीक बैठ जाते थे।
दोनों की हंसी में भी बड़ा फर्क था। नर्स और नौकर जब दोनों को
खिलाते रंग न झुनझुनों की आवाजों पर वीणा खिलखिलाकर हंस पड़ती,
लेकिन नीना बस मुस्कराकर रह जाती। नीना को खुलकर और खिल-
खिलाकर हंसना नहीं आता था और वीणा की हंसी अन्दर से बाहर तक
छनक उठती थी।
तेज अब अधिकतर अपने वार्ड के बच्चों के साथ ही सोता था। नन्ही
नीना को भी नर्सों ने वार्ड में ले जाकर सुलाने की आदत डालनी शुरु
कर दी थी।
वीणा और नीना ने पहला दांत निकाला—दूध की तरह श्वेत और
सम्पे की कली जैसा। दांत निकालने की पीड़ा को भी वीणा ने कम महसूस किया और नीना ने कमजोर होने के कारण अधिक। कुछ महीनों में ही दोनों के मुंह में नन्हे-नन्हे श्वेत दांतों की दो-दो पंक्तियां बन गईं।
ज्यों-ज्यों दिन गुजरते गए, नर्स छोटी नीना को अधिकतर वार्ड ही में रखने लगीं। यद्यपि कई बार उसकी देखा-देखी वीणा भी वार्ड में सो जाती थी, लेकिन नर्स सोई हुई वीणा को धीरे से उठाकर बंगले में पहुंचा आती थी—नीना वहीं वार्ड ही में सोई रहती।
तेज के नन्हे-से मन में आप ही आप नीना और वीणा का यह फर्क समा गया। वह कुछ सोचना चाहता लेकिन उसकी समझ में कुछ न आता।

कोई सोच प्रत्यक्ष रूप में तो सामने न आती थी; लेकिन उसे किसी सोच की छाया-सी ज़रूर परेशान करती थी।

धीरे-धीरे वे दोनों इतनी बड़ी हो गईं कि खेलते-खेलते किसी खिलौने पर एक-दूसरे से लड़ पड़ें। इस अवस्था में तेज को बीच में पड़कर उनकी दोस्ती करानी पड़ती। तेज का पांचवां साल गुज़र रहा था और वह उन दोनों के मुकाबले में अपने-आप को बहुत बड़ा महसूस करता था। वह दोनों को पुचकार सकता था, दोनों को खिला सकता था और उनकी छीना झपटी को सुलह में समेट सकता था। तेज को वे दोनों अच्छी लगती थीं लेकिन दोनों की लड़ाई में अक्सर वीणा ही की ज्यादती होती थी। चूंकि स्वास्थ्य में वह नीना से तगड़ी थी, इसलिए बड़ी आसानी से वह नीना से अपना मनपसन्द खिलौना छीन लेती। भागने में भी वह नीना से काफी तेज थी और इस प्रकार नीना सदैव हार जाती थी और रोने में भी उसी की आवाज अधिक सुनने में आती थी। तेज को हमेशा ऐसा मालूम होता कि नीना को रुलाया गया है, इसलिए वह हमेशा नीना के ही पक्ष में निर्णय करता था—वीणा के खिलौने लेकर नीना के हाथ में दे देता था। धीरे-धीरे जैसे दोनों के दिलों में ऐसे विचार जड़ पकड़ गए। तेज को देखकर नीना को शह मिल जाती, उसके दुबले-पतले शरीर में एक फुर्ती आ जाती और इधर तेज को देखकर वीणा को जैसे पहले से ही मालूम होता था कि वह नीना की सहायता करेगा, वह स्वयं ही खिलौने नीना के हवाले कर देती। नीना अधिकतर वार्ड में रहती इसलिए भी वीणा से अधिक तेज की साथी थी—जाने-अनजाने में वह तेज पर वीणा से अधिक अपना अधिकार समझने लगी।

तेज और उसके वार्ड के बच्चे अब पाठशाला जाने के योग्य हो गए थे। डाक्टर सलूजा उन्हें शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेजने लगे।

Library Go Bha

पोस का महीना

पोस का महीना राजवंती के मन में एक तूफान मचा देता था। अन्य समय में जो उसका जीवन शान्त-सा रहता था, पोस का हाथ आकर उस को झंझोड़ता था और बड़ी उथल-पुथल मचा देता था। पोस के महीने में ही राजवंती का रवि उसे छोड़कर गया था, पोस में ही तेज ने आकर उसके घाव भर दिए थे और पोस में ही वीणा ने चिड़िया के नन्हे-से बच्चे के रूप में उसके घोंसले में कदम रखा था।

पहले कुछ वर्षों तक पोस का महीना एक काले बादल की तरह राजवंती के जीवन पर छाया रहा था। तेज ने आकर बादलों के मुंह फेर दिए और वीणा के आगमन से उन बादलों से प्रकाश फूट पड़ा था। राजवंती जब भी वीणा का जन्मदिन मनाती, स्वाभाविक रूप से उस बच्चाघर के सारे बच्चे उस इकट्ठ में शामिल होते। वीणा और नीना की सांझी जन्म-रात को सब जानते थे, इसलिए सबकी जबान पर ये शब्द होते—"आज वीणा और नीना का जन्मदिन है।"

यद्यपि राजवंती सब बच्चों के साथ अपनापन अनुभव करती थी लेकिन उनमें से कुछ एक तो पढ़ाई में लग चुके थे और अन्य छोटे बच्चों का अपने वार्ड की नर्सों के साथ ही अधिक मेल-मिलाप था। उनमें से केवल तेज और नीना ही ऐसे बच्चे थे जिनका अधिकार बंगले पर, बंगले वालों पर तथा बंगले की समस्त वस्तुओं पर सबसे अधिक था।

तेज ज्यों-ज्यों बड़ा हो रहा था, स्पष्ट-अस्पष्ट कई प्रकार के विचार उसके मस्तिष्क में उभरने लगे थे। लेकिन कोई लहर तट से कभी ऊपर न उठ सकी थी। तेज के चेहरे पर कभी कोई प्रश्न न आया था और उसका जीवन उछलती-सिमटती नदी की तरह अपने किनारों की रक्षा में चुपचाप बहा जा रहा था।

शुरू-शुरू में जब वीणा और नीना के जन्मदिन मनाए गए, तेज को उनमें कोई भेदभाव नजर न आया। लेकिन ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होता चला गया, तेज आश्चर्य और अचम्भे के साथ उस दिन को देखने लगा। बुलाए गए मेहमानों में से हर कोई पहले वीणा के पास जाता, उसके हाथों में रूमालों और सुन्दर कागजों में लिपटी हुई वस्तुएं देता। वीणा के कमरे में खिलौनों और फिराकों का एक ढेर-सा लग जाता और सबके सब मेहमान जैसे नीना को सर्वथा भूल जाते। नीना के हाथ खाली रह जाते। फिर भी राजवंती, नर्सें और नौकर यही कहते—"आज वीणा और नीना दोनों का जन्मदिन है।"

नीना की देखादेखी वार्ड के अन्य बच्चे भी कई बार पूछते, "मेरा जन्मदिन कब आएगा, मेरा जन्मदिन कब आएगा?" और वीणा के जन्म-दिन पर सब नर्सें हंसकर कह देतीं, "आज सबका जन्मदिन है।"

बच्चों के समस्त प्रश्न मिठाइयों से भरी हुई प्लेटों में गुम होकर रह जाते। लेकिन तेज के कण्ठ में मिठाई का टुकड़ा अटक-सा जाता और उसके होंठों पर कई प्रश्न धरना देकर बैठ जाते। आखिर तेज ने अपने मन के समस्त प्रश्नों से तंग आकर अपना सारा ध्यान पढ़ाई में लगा दिया। हर

समय वह अपनी पुस्तकें लिए बैठा रहता। अपनी कापियों में चित्र बनाता रहता और संध्या समय तक बैडमिण्टन खेलता रहता जब तक कि थक-टूट-कर वह सोने योग्य न हो जाता।

वीणा और नीना के छोटे-छोटे झगड़े अब पीछे छूट गए थे। वीणा वैसे भी अपना अधिक समय बंगले में गुज़ारती थी और नीना बच्चों के वार्ड में। यों भी नीना की समझ में यह बात आ गई थी कि उसे वीणा के साथ लड़ना नहीं चाहिए। उसने वीणा जैसे रेशमी कपड़े और खिलौना मांगना भी छोड़ दिया था। वह अधिकतर अपने वार्ड के बच्चों में ही उठती-बैठती लेकिन उन सबमें से तेज के साथ उसे कुछ ऐसा अपनापन-सा महसूस होता जैसे उस पर उसका जन्मसिद्ध अधिकार हो।

नीना की मामूली-मामूली इच्छाओं और आवश्यकताओं को तेज बड़ी उत्सुकता से देखता और यदि वह किसी प्रकार कोई कमी अनुभव करती तो तेज को महसूस होता जैसे उस कमी में कुछ उसका अपना दोष है। यों तेज अपने ऊपर नीना की एक जिम्मेदारी-सी महसूस करने लगा, जिसके वशीभूत हो वह अपनी छोटी-सी अवस्था में ही अवस्था से कहीं बड़ा जिम्मेदार बन गया।

वीणा और नीना अब पाठशाला जाने के योग्य हो चुकी थीं। उनके स्वास्थ्य में पहले दिन से जो फर्क था, वह मिटा नहीं था। वीणा अब भी बड़ी और नीना छोटी मालूम होती थी, लेकिन गत वर्षों में नीना की जो सुन्दरता छिपी रही थी अब पाठशाला जाने की आयु में आकर उसके अंग-अंग से फूट निकली थी। नीना की छोटी-सी मूर्ति को जैसे मूर्तिकार ने अवकाश के समय में तराशा था। उसके पतले और तीखे नयन-नक्शों में जो रूप आ समाया था, उसने सबका ध्यान अपनी ओर खींच लिया। वीणा और नीना अपनी जन्म-रात से ही साथी थीं लेकिन फिर धीरे-धीरे उन दोनों में खेलने-खाने के साथ के अतिरिक्त एक दूरी-सी आती चली गई थी और अब दोनों की अलग-अलग पाठशालाओं ने उस दूरी को और भी बढ़ा दिया। नीना अपने वार्ड के साथियों के साथ पाठशाला जाने लगी और वीणा किसी अन्य पाठशाला की गाड़ी में।

इसके साथ-साथ तेज के प्रति वीणा और नीना की जो सांझ थी, उसका रूप भी बदल गया। नीना के साथ तेज की सांझ एक प्रकार के अपनेपन में परिवर्तित होती गई और वीणा के साथ एक प्रकार के आदर-सत्कार में। नीना की जिद पर तेज अड़ जाता। कई बातों में उसे टोक देता और उससे नाराज़ भी हो जाता और फिर प्यार करके उसे मना भी

लेता। लेकिन वीणा की किसी बात में वह कभी दखल न देता था—वह कुछ बिगाड़े, कुछ संवारे, तेज उसे कभी कुछ न कहता। वैसे यदि वीणा और नीना को एक साथ किसी चीज की आवश्यकता होती तो वह वीणा की आवश्यकता को पहले पूरी करता। शुरू-शुरू में इस बात पर नीना तेज से रुठ जाती थी लेकिन फिर धीरे-धीरे जैसे उसे तेज के इस भेद का पता चल गया और अब वह स्वयं भी तेज के साथ मिलकर वीणा के सब काम कर देती।

अब तक बच्चाघर में बच्चों के पढ़ने के लिए अलग-अलग कमरे बन चुके थे। अब लड़कों के कमरे अलग और लड़कियों के अलग हो गए। वीणा को कभी इन कमरों में अधिक देर तक बैठने की जरूरत न पड़ती थी। यदि वह कभी आती तो मेहमानों की तरह, घड़ी-दो घड़ी के लिए। वीणा खड़ी होती तो वे भी खड़े हो जाते, वीणा बैठना चाहती तो वे कुर्सियां खाली कर देते। वीणा के आने की आवाज सुनकर वे अपनी मेजें संवार लेते।

केवल नीना ही को इस बात का अधिकार था कि वह तेज की बिखरी हुई पुस्तकों को उनकी मेज पर तरतीब से रखे, उसके मैले वस्त्रों को खूंटी पर से उतारकर वहां नए टांगे, उसे धूप में घूमने से रोके और किसी प्रकार की शिक्षक के बिना अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की मांग करे।

नया घोंसला

डाक्टर सलूजा जिन दिनों कालेज में शिक्षा पाते थे, उन दिनों देवराज से उनकी गहरी मित्रता थी। दोनों के घरों में उनकी मित्रता का आदर किया जाता था बल्कि उनके इस लगाव के आधार पर उनके माता-पिता का भी आपस में मेल-जोल हो गया था। सलूजा ने एफ०एस-सी० करने के बाद डाक्टरी पढ़ना शुरू कर दी और देवराज ने बी० ए० करने के बाद वकालत। दोनों आपस में मिलते-जुलते तो रहे लेकिन कालेज के दिनों की-सी बात न रही। सलूजा डाक्टर सलूजा बन गए और देवराज ने वकालत शुरू कर दी। डाक्टर सलूजा की प्रैक्टिस आरम्भ ही से अच्छी चल निकली थी लेकिन देवराज की प्रैक्टिस उस तरह न चल सकी और उसने पी० एस० आई० की सरकारी नौकरी कर ली और उस शहर से बदलकर किसी दूसरे शहर में चला गया।

बचपन के दिन बीत गए, जवानी के दिन बीत गए, डाक्टर सलूजा

की प्रैक्टिस धीरे-धीरे एक बड़े हस्पताल के रूप में परिवर्तित हो गई और देवराज भी अपनी जगह पर उन्नति करता रहा लेकिन इस प्रकार अलग और दूर हो जाने से दोनों मित्रों में न तो वह पहले जैसा सम्पर्क रहा और न ही बाकायदा पत्र-व्यवहार। पिछले कुछ वर्षों में एक-दो बार अचानक कुछ घंटों के लिए वे एक-दूसरे से मिले लेकिन इससे अधिक कोई सम्बन्ध स्थापित न हुआ।

आज अचानक डाक्टर सलूजा को मालूम हुआ कि देवराज का तबादला फिर इस शहर में हो गया है। पुरानी मित्रता ने एक बार फिर अपना सिर उठाया और डाक्टर सलूजा ने देवराज के परिवार को अपने यहां खाने पर आमंत्रित किया।

राजवंती और डाक्टर सलूजा देवराजके परिवार से अपरिचित थे। यों ही अनुमान से उन्होंने चार-पांच व्यक्तियों के खाने का प्रबंध किया लेकिन जब वे लोग आए तो केवल देवराज और उसकी पत्नी ही थे, कोई तीसरा साथ नहीं था।

"आप अकेले क्यों आए हैं ? बच्चों को क्यों नहीं लाए ? सरला और वीणा सुबह से इन्तज़ार कर रही थीं कि उनके भी कुछ साथी आएंगे।" राजवंती ने देवराज की पत्नी कृष्णा को अपने पास सोफे पर बिठाते हुए कहा।

कृष्णा हंस भर दी, कोई उत्तर नहीं दिया। बल्कि सरला और वीणा को अपने पास बिठाकर उनसे छोटी-छोटी बातें करने लगी।

"सच चाचीजी ! आप किसी को अपने साथ क्यों नहीं लाईं ?" सरला ने झिझक और अपनेपन के मिले-जुले स्वर में पूछा।

कृष्णा पुनः हंस भर दी।

राजवंती कुछ समझ न सकी कि कृष्णा उनके प्रश्नों को इस प्रकार क्यों टाल रही थी। कृष्णा को बातों में लगाने के लिए उसने वीणा द्वारा अपने घरेलू चित्रों का ऐलबम मंगवाया। कृष्णा बड़े ध्यान तथा उत्सुकता के साथ ऐलबम का प्रत्येक चित्र देखती रही और उनके बारे में पूछती रही। बड़ी उमंग के साथ वह सरला और वीणा से उनकी पाठशाला और उनके घर की बातें पूछती रही।

कुछ देर बाद सरला उठकर भीतर चली गई और उसने एक नौकर से ट्रे में शर्बत के कुछ गिलास भिजवा दिए। शर्बत पीने के बाद वीणा भी वहां से उठ गई और अब कमरे में डाक्टर सलूजा, देवराज और उनकी पत्नियां रह गईं।

"सरला तो अब जवान हो गई है, अब तो भाभी जी, आपको इसके ब्याह की चिंता लगी होगी !" देवराज ने बात शुरू करते हुए कहा।

"चिन्ता तो सचमुच लगी हुई है, यह उन्नीसवां साल जा रहा है उसे, अब उसके चाचाजी आ गए हैं, स्वयं चिन्ता करेंगे।" राजवंती ने कृष्णा और देवराज की ओर देखकर पारिवारिक ढंग की बात की और इसके साथ ही राजवंती की पुनः इच्छा हुई कि वह देवराज के बच्चों के बारे में कुछ पूछे लेकिन कृष्णा की पहली चुप्पी के कारण उसने कुछ पूछना उचित न समझा।

"तुम्हारा क्या हाल है ?" डाक्टर सलूजा ने जैसे राजवंती की ओर से बात कर दी।

"हम तो हर प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त हैं।" देवराज ने पहले कृष्णा की ओर देखा और फिर हंसकर यह बात कह दी।

अब राजवंती को पता चला कि कृष्णा ने उसके प्रश्नों का उत्तर क्यों न दिया था और कृष्णा के जबर्दस्ती मुस्कराते हुए चेहरे के पीछे गहरी उदासी के चिह्न नज़र आए—शायद इसका भी रवि मेरे रवि की तरह से रूठकर चला गया है या गोद में कोई खेला ही नहीं—राजवंती सोचने लगी।

"आपकी डाक्टरी किस दिन काम आएगी ?" आखिर सोच-सोचकर राजवंती ने अपने पति से सम्बोधित होकर कहा।

"भाभीजी ! इस आयु में भला कौन डाक्टरी काम आएगी ? अब तो ख्याल ही छोड़ दिया है।" देवराज ने राजवंती के बात समाप्त करते ही कहा।

"उसकी लीला का क्या पता।" राजवंती बोली।

"नहीं, डाक्टर बिल्कुल इनकार कर चुके हैं।" देवराज ने उत्तर दिया।

कृष्णा अपने-आप में सिमट रही थी जैसे अपने-आप को दोषी समझ रही हो। अपने पति की देनदार और समाज की देनदार।

'मां बने बिना स्त्री कैसी अधूरी-सी रहती है।' राजवंती ने मन ही मन में सोचा और फिर सबका ध्यान मोड़ने के विचार से खाना खिलाने के लिए कहलवा भेजा।

खाने की मेज पर सरला और वीणा भी थीं। कृष्णादेवी उन दोनों से बड़े स्नेह से बातें करती रही और राजवंती ने देखा कि अभी कृष्णा के दिल में स्नेह और ममता का सोता सूखा नहीं है। स्वाभाविक रूप से वह

बड़े अच्छे दिल की स्त्री है : राजवंती के दिल में कृष्णा के प्रति एक गहरी सहानुभूति जाग उठी ।

आज तक कृष्णादेवी को ससुराल वालों की कड़वी बातें सुननी पड़ी थीं । बड़ी आयु की स्त्रियां उससे दया तथा तिरस्कारपूर्ण प्रश्न किया करती थीं, लेकिन आज राजवंती से उसे सर्वथा पृथक् और आदरपूर्ण व्यवहार प्राप्त हुआ । मन ही मन कृष्णादेवी राजवंती के समीप आ गई ।

खाना समाप्त हो जाने पर राजवंती कृष्णादेवी को हस्पताल दिखाने ले गई । बच्चाघर दिखलाने के साथ-साथ उसने बच्चों का परिचय भी कराया । आज तेज और नीना अपनी पाठशाला के खेलों में गए हुए थे, राजवंती को इस बात का अरमान रहा कि वह कृष्णा से उन्हें न मिला सकी ।

देवराज और कृष्णादेवी चले गए । रात अभी-अभी बीती थी । अभी आकाश में उषा फूटी ही थी कि डाक्टर सलूजा के बंगले के सामने एक मोटर आकर रुकी । राजवंती और उनका पति बिस्तरों में से निकलकर चाय का प्याला पीने को थे, जब उन्होंने देवराज और कृष्णा को आते देखा ।

"कुशल तो है ?" राजवंती ने उनका स्वागत करते हुए पूछा ।

"हां-हां कुशल है ।" देवराज हंस दिया और दोनों बरामदे में ही चाय की मेज़ के पास बैठ गए ।

राजवंती ने दो और प्याले मंगवाए और उनके लिए एक-एक प्याला चाय का बनवाया ।

"रात हमने एक फैसला किया है···" देवराज ने चाय का घूंट भरते हुए कहा ।

राजवंती और डाक्टर सलूजा दोनों उसके चेहरे की ओर देखने लगे ।

"हम आपके बच्चाघर में से कोई बच्चा लेकर क्यों न अपने घर की शोभा बढ़ा लें ।"

"कोई हर्ज नहीं···" डाक्टर सलूजा ने हंसकर कहा, "बस एक ही शर्त है, आप उसे अपना पूरा ध्यान और उसे उसका पूरा अधिकार दे सकें ।"

"हां, यह तो पहली बात है । असल में बच्चे की कमी हममें इतनी उदासी पैदा नहीं करती जितनी लोगों और सगे-सम्बन्धियों की बातें···आपसे क्या छुपाना, स्वयं मेरे सगे भाई यह कह देते हैं कि आखिर मेरा पैसा उनके लिए ही तो है ।···भाई मेरे लिए बेगाने नहीं हैं, लेकिन उन्हें मेरे दर्द का

कोई अहसास नहीं। बस मेरे पैसे पर उनकी नजर है···उन्हें अपनी भाभी के साथ कोई हमदर्दी नहीं···उन्हें···।" देवराज ने चाय का प्याला मेज पर रख दिया। एक वेदना उसके चेहरे पर उभर आई।

"मैं जानता हूं···मैं जानता हूं···" डाक्टर सलूजा ने देवराज के कन्धे पर हाथ रखा। राजवंती ने देखा, कृष्णादेवी की आंखें भरी हुई थीं।

"लेकिन हमारी आयु बड़ी हो गई है। आज से पालने लगेंगे तो कहीं बीस साल के बाद बच्चा अपने पांव पर खड़ा हो सकेगा। मैं नहीं चाहता कि हम बच्चे को इतनी छोटी आयु में छोड़कर चल दें कि लोभी लोग उसे पैरों तले कुचल डालें···अगर आज्ञा दें तो किसी छोटे बच्चे की जगह हम कोई बड़ा बच्चा ले लें···?" देवराज ने बड़ी गम्भीरता से कहा।

"जैसा कहेंगे, हो जाएगा···।" डाक्टर सलूजा ने कहा।

"जो लोग आपके बच्चाघर में से बच्चा ले जाना चाहते हैं उनके लिए क्या-क्या बातें होती हैं?" देवराज ने पूछा।

"अपनी ओर से मैं यह विश्वास कर लेता हूं कि बच्चा ले जाने वालों को सचमुच बच्चे की आवश्यकता है और कल को यदि कोई आवश्यकता न रही तो बच्चे को कोई कष्ट तो नहीं होगा···आगे जो बच्चे का भाग्य···।"

आज इतवार का दिन था। सुबह ही पाठशाला के खेल आरंभ होने थे। आज तेज और नीना वीणा को अपनी पाठशाला में ले जाकर खेल दिखाना चाहते थे, इसीलिए ये सुबह ही सुबह वीणा को तैयार कराने आ पहुंचे।

"तेज बेटा!" राजवंती ने उसे आवाज दी।

"जी माताजी!" तेज ने कहा और आकर बड़े अदब से राजवंती के पास खड़ा हो गया।

"तुम लोगों के खेल किस समय शुरू होंगे?"

"पूरे नौ बजे माताजी।"

"मेरा बेटा जरूर जीतेगा।" राजवंती ने तेज की पीठ पर अपना हाथ रखा।

"यह कैसे हो सकता है कि आपका बेटा हार जाए।" तेज ने उत्साह-पूर्वक तुरन्त उत्तर दिया। यद्यपि तेज को अपनी जीत पर पूरा भरोसा था फिर भी इतने मान-भरे और भावुक से उत्तर पर वह स्वयं ही लजा गया। देवराज और कृष्णा ने आश्चर्य के साथ तेज की ओर देखा।

"मैं तो उस दिन खुश हूंगा जब तेज बाहर के देशों की टीमों के साथ

जाकर खेलेगा और जीतेगा।" डाक्टर सलूजा ने और भी गौरव से तेज को कहा। तेज ने आदरपूर्वक सिर झुका लिया और फिर सबको नमस्कार करके वीणा के कमरे की ओर चला गया।

"आपने तो कहा था कि आपकी बस दो ही बेटिया हैं···" कृष्णादेवी ने आश्चर्य से राजवंती से पूछा।

"वैसे तो सारे बच्चाघर के बच्चे मेरे बच्चे हैं।" राजवंती हंस दी।

"यह बच्चा भी बच्चाघर का है?" कृष्णा ने और भी आश्चर्य से पूछा।

"हां···!" राजवंती का हृदय तेज के प्रति प्यार तथा मान से भर गया।

देवराज ने अपनी आंखों में एक प्रश्न-सा भरकर अपनी पत्नी की ओर देखा। कृष्णादेवी के चेहरे पर जैसे उत्तर अंकित था, वह हंस दी। इस प्रश्न और इस उत्तर को राजवंती और डाक्टर सलूजा ने भी देखा और समझ लिया।

"यह बच्चा···" देवराज कहने लगा।

"यह बच्चा हमारे पास किसी की अमानत है—न जाने कोई किस समय अपनी अमानत लेने आ जाए।" राजवंती तुरन्त कह उठी।

देवराज और राजवंती का चेहरा एकदम उतर गया। उनकी इस उदासी को दूर करने के लिए राजवंती ने तेज की बाबत बताना शुरू किया :

"जब लड़ाई शुरू हुई थी, इसके फौजी पिता ने लड़ाई पर जाने से पहले इसे हमारे हवाले कर दिया था और उसने कहा था, 'मेरी आपसे प्रार्थना है कि इस बच्चे को किसी को न दीजिएगा, क्या मालूम लड़ाई से मैं जीवित लौट आऊं, मुझ गरीब की अमानत समझकर इसे अपने पास रखिएगा···।'" और राजवंती का कंठ भर आया। देवराज और कृष्णादेवी का ध्यान भी अपने दुःख से हटकर तेज के अभागे फौजी पिता की ओर चला गया।

"लड़ाई को खत्म हुए तो एक समय हो चुका है, अब तक उसे वापस आ जाना चाहिए था···।" एक लम्बे विलम्ब के बाद देवराज ने कहा।

"हां, आ जाना चाहिए था, जाने क्यों नहीं आया। हमें कभी उसका कोई पत्र नहीं मिला।" डाक्टर सलूजा ने उत्तर दिया। और उसके इस उत्तर के साथ एक बार पुनः देवराज और उसकी पत्नी का चेहरा चमक उठा।

"क्या मालूम वह किसी देश का कैदी बन गया हो···कई बार कैदी कई साल के बाद आ पहुंचते हैं···।" राजवंती ने धीमे से कहा और सब एक चुप्पी छा गई।

वीणा तैयार होकर माताजी से आज्ञा लेने के लिए आई, तेज और नीना भी साथ थे। देवराज और कृष्णा ने बड़ी अभिलाषायुक्त नजरों से तेज की ओर देखा। तेज मानो आकाश पर चमकता हुआ एक सितारा था, देवराज और कृष्णा का हाथ उस तक न पहुंच सकता था।

नीना तेज की ओट में थी लेकिन जब वह माताजी से मिलने के लिए आगे बढ़ी तो कृष्णा की आंखें नीना के चेहरे पर जम-सी गईं। नीना के वस्त्र बिल्कुल सादा थे लेकिन उसकी अबोध सुन्दरता अवर्णनीय थी। कृष्णा सोचने लगी, उसने बम्बई के बड़े-बड़े क्लब देखे हैं, बड़े-बड़े साहबों और अफसरों के घरों में भी जा चुकी है, लेकिन शायद ही कभी उसने इस जैसी सुन्दर बच्ची देखी हो।

वीणा, नीना और तेज एक साथ सबको नमस्कार करके चले गए।

"यह वीणा की सहेली होगी?" कुछ देर बाद कृष्णा ने पूछा।

"यह भी मेरी बच्ची है, हमारे बच्चाघर की बच्ची।" राजवंती ने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया।

"क्या यह भी किसी की अमानत है?" देवराज ने निराशापूर्वक पूछा।

"यह आपकी अमानत है···।" राजवंती हंस पड़ी। देवराज और कृष्णा को यों एकदम अपने भाग्य पर विश्वास न आया। दोनों राजवंती के चेहरे की ओर देखते रहे।

"यह बात ठीक है देव! पुत्रों के साथ तो जायदाद-सम्बन्धी कई प्रकार के झगड़े उत्पन्न हो जाते हैं, लेकिन बेचारी बेटियां···हमें अपने बच्चाघर के सम्बन्ध में एक बात बहुत परेशान कर रही है। हम बच्चों को पाल-पोस लेंगे, उन्हें शिक्षा भी दिला लेंगे, लड़कों के लिए काम भी ढूंढ़ लेंगे लेकिन लड़कियों के विवाह का क्या करेंगे···" डाक्टर सलूजा का स्वर बहुत गम्भीर हो गया।

"खानदानों के ख्याल और दहेज आदि के लालच के सामने समस्त गुण फीके पड़ जाते हैं···।" राजवंती ने अपनी गम्भीर सोच को डाक्टर सलूजा की सोच में मिला दिया।

"जैसे भी हो, यह लड़की मुझे दे दीजिए···।" कृष्णादेवी के स्वर

कुछ ऐसी उत्सुकता और अभिलाषा आ गई जिसने राजवंती का दिल हिला दिया।

डाक्टर सलूजा और राजवंती ने आपस में एक-दूसरे को देखा और फिर डाक्टर ने कहा, "वह बड़ी अबोध बालिका है, मुझे विश्वास है कि आपके हाथों में उसका भाग्य चमक उठेगा।"

देवराज और कृष्णा देवी को एक साथ ऐसा लगा जैसे अब तक वे अपनी सगी बेटी से बिछड़े रहे थे और अब तक वह बिछोह असह्य हो उठा था। उनका घोंसला इस बच्चे के लिए बेचैन हो गया था और दोनों के हृदय अपनी बेटी का मुंह देखने के लिए तड़प रहे थे।

वीणा, नीना और तेज पाठशाला जा चुके थे। कृष्णा का जी चाहता था कि वह उड़कर पाठशाला में पहुंचे और अपनी बेटी को ले आए। उन्हें दोपहर तक पाठशाला से लौटना था, कृष्णा के लिए ये घंटे भारी हो गए।

डाक्टर सलूजा ने कुछ जरूरी कागजात देवराज को दिए, जो वे कानूनी तौर पर ऐसे अवसर पर दिया करते थे।

कृष्णा और देवराज वहां से खाली हाथ न लौट सके। वे दोनों सोच रहे थे कि क्या सचमुच भाग्य ने उनके गढ़े भर दिए थे? क्षण-भर के लिए देखा हुआ नीना का चेहरा उनके दिलों में उथल-पुथल मचा रहा था। और उस एक नज़र में ही वे नीना के माता-पिता बन गए थे।

बच्चाघर के बड़े बच्चे अब अबोध नहीं थे। धीरे-धीरे उन्होंने नर्सों और नौकरों से वास्तविकता जान ली थी, इसीलिए डाक्टर सलूजा और राजवंती के प्रति उनके दिलों में अथाह आदर था। जब किसी बच्चे को कोई ज़रूरतमन्द अपने साथ ले जाता, तो अन्य बच्चे पूछने लगते, "वह कहां गया है?" और नर्सें उत्तर देतीं, "उसकी मां आई थी, वह ले गई है।" कई बार कोई छोटा बच्चा पूछ बैठता, "मेरी मां कब आएगी?" इस प्रश्न का किसी के पास कोई उत्तर न होता था। लेकिन बड़े बच्चे अब कभी ऐसा प्रश्न नहीं करते थे।

दोपहर के समय जब वीणा, नीना और तेज पाठशाला से लौटे, कृष्णा ने लपककर नीना को अपनी छाती से लगा लिया। नीना ने आश्चर्य से उसके चेहरे की ओर देखा।

"ये तुम्हारी माताजी हैं, और ये तुम्हारे पिताजी!" राजवंती ने बड़े प्यार से नीना को पास बिठाकर देवराज और कृष्णादेवी से मिलाया।

इससे पहले जितने बच्चे भी बच्चाघर से ले जाए गए थे वे सबके सब बहुत छोटे थे, उन्हें कुछ भी पूछने या बताने की आवश्यकता न पड़ी

थी, लेकिन नीना सयानी हो चुकी थी, उसमें लकड़ियों का स्वाभाविक संकोच उत्पन्न हो आया और उसने हर प्रकार के संकोचों से बचने के लिए राजवंती की गोद में अपना चेहरा छुपा लिया।

"जाओ बेटी! अपने वार्ड के सब बच्चों से मिल आओ और अपनी जरूरत की सब चीजें अपने सूटकेस में रख लो।" राजवंती ने बड़े जोर से नीना को अपनी छाती से लगाया।

"चीजें ले जाने की क्या जरूरत है, यहां किसी के काम आ जाएंगी।" कृष्णादेवी ने कहा और अपनेपन के आवेश में उसका कंठ भर आया। आज पहली बार कृष्णा ने किसी के लिए ऐसा अपनत्व अनुभव किया था।

नीना पहले तो बहुत देर तक लाजवंती के गले से अलग न हुई, फिर अपने चेहरे के समस्त लक्षणों को छिपाती हुई वह जल्दी से कमरे से निकल गई। जब नीना बाहर के बरामदे में पहुंची, वहां तेज खड़ा था। तेज न हिला, न बोला। नीना ने चुपचाप उसकी कमर के गिर्द अपनी बांहें डाल दीं और उसके पहलू में अपना चेहरा छुपा लिया।

काफी समय तक तेज का शरीर निश्चेष्ट रहा। फिर एकाएक उसने बड़े जोर से नीना को अपने साथ सटा लिया। जब उन्होंने एक-दूसरे के चेहरों की ओर देखा, दोनों के चेहरे आंसुओं से भीगे हुए थे।

मां

ग्यारह वर्ष की छोटी-सी नीना में अपनी आयु से कहीं बड़ी भावनाएं जागृत हो चुकी थीं। उसके झुके हुए चेहरे ने अभी नजर भरकर अपनी नई मां की ओर नहीं देखा था। हस्पताल से आते समय जब वह अपने माता-पिता के बीच कार में बैठी तो जैसे वह अपने-आप में सिमटती चली गई। अपनी कोठी की सजावट ने भी उसमें संकोच उत्पन्न किया और कोठी के नौकरों, ड्राइवरों में भी उसे झिझक-सी महसूस हुई।

देवराज का तबादला अभी हाल ही में इस शहर में हुआ था, इसलिए उसके इर्द-गिर्द का वातावरण और सब नौकर-चाकर नये थे। कृष्णा ने सब नौकरों से यह कहा कि उनकी नौकरी बाहर होने के कारण उनकी बेटी यहां होस्टल में पढ़ती थी, अब वह अपने घर में रहकर पढ़ा करेगी। सब नौकर-चाकर नीना को छोटी बीबी कहकर पुकारने लगे।

कृष्णादेवी के चाव का कोई ठिकाना नहीं था। छोटी बीबी का कमरा तैयार करने में एक भगदड़-सी मच गई। पढ़ने की मेज, मेज के लिए अलग

से लैम्प, कुर्सियां, छोटा पलंग—कमरे की सजावट के लिए कृष्णा की नजरों में वस्तुएं जंचती नहीं थीं। आज वह अपने स्नेह की चारों कन्नियां खोलकर उसमें नीना को ढांप लेना चाहती थी। देवराज प्रसन्न था, उसके घर की पत्थर जैसी चुप्पी टूट गई थी। यद्यपि नीना अभी तक एक सुन्दर पुतली की तरह चुपचाप बैठी थी लेकिन उसके इर्दगिर्द घर की पूरी रौनक खेल रही थी।

वह स्वाभाविक रूप से गम्भीर थी। प्रसन्नताओं से वह कभी अधिक हंसी नहीं थी और न ही उदासियों से कभी अधिक रोई थी। आज ग्यारहवें वर्ष में भी उसमें पन्द्रहवें-सोलहवें वर्ष जैसा ठहराव था। कुछ ही क्षणों में हो गए इस साधारण परिवर्तन को वह बड़ी सुशीलता से ग्रहण कर रही थी।

यदि नीना में आयु से अधिक ठहराव आ गया था तो कृष्णा की आयु कम से कम पन्द्रह-बीस वर्ष पीछे सरक गई थी। आज उसमें जवानी की भावुकता जाग उठी थी। खाना खाते समय वह नीना की पतली-लम्बी उंगलियों की ओर देखती रही। ग्रास को कितने सलीके से तोड़ती थी, किस प्रकार धीरे-धीरे मुंह की ओर ले जाती थी, सब्जी आदि उठाने और रखने का उसका ढंग कितना श्रेष्ठ था। कृष्णादेवी की नजर नीना के चेहरे पर से अलग न होती थी। उसे कुछ ऐसा लग रहा था जैसे सोलह वर्ष के बाद 'पूरन' आकर अपनी 'इच्छरां' से मिला हो। कृष्णा को कुछ ऐसा अनुभव होता था कि उसने स्वयं अपने लहू-मांस से नीना को जन्म दिया था और किसी शाप के वशीभूत वह ग्यारह वर्ष तक नीना का मुंह न देख सकी थी। वह सोचती, आज वह क्या-क्या शगुन न मनाए···।

खाना समाप्त होते ही कृष्णादेवी ने ड्राइवर को बुला भेजा और नीना को साथ लेकर बाहर चली गई। उसका जी चाहता था कि हर बाजार में से गुजरते हुए नीना कहती चली जाए "यह भी लूंगी, वह भी लूंगी।" और वह चीजें रखवा-रखवाकर गाड़ी को अन्दर-बाहर हर ओर से भर ले। आज कृष्णा की आंखों को कपड़ों के रंग और डिजाइन पसन्द नहीं आ रहे थे। वह चाहती थी कि नीना को कुछ ऐसे वस्त्र लेकर दे जिन्हें आज तक किसी ने न पहना हो।

उस रात कृष्णादेवी ने अपने सोने के कमरे में पलंग तो तीन बिछवाए लेकिन जब नीना अपने पलंग पर सो गई तो कृष्णादेवी अपने पलंग से उठकर उसी के साथ जा लेटी। न जाने कब तक वह सोई हुई नीना के अबोध मुख की ओर देखती रही। फिर उसे अपनी बांहों में लेकर वह कोमल

अंधेरों और मधुर सपनों में खो गई।

प्रातःकाल जब अभी कृष्णादेवी उसी प्रकार सोई पड़ी थी, नीना की आंख खुल गई। नीना के माथे से कृष्णादेवी का श्वास टकरा रहा था और उसकी बांह नीना के शरीर के गिर्द लिपटी हुई थी।

नीना जिस प्रकार जागी थी उसी प्रकार निश्चेष्ट लेटी रही ताकि उसके हिलने से कृष्णादेवी की नींद न उचट जाए। उस समय नीना के भीतर से कोई सोई पड़ी भूख जाग उठी। उसे पहली बार अनुभव हुआ कि मां किसे कहते हैं। कल सुबह से वह आश्चर्यचकित-सी थी। अभी तक उसने कृष्णादेवी के चेहरे की ओर नजर भरकर नहीं देखा था। जैसे कोई दहकते हुए सूरज के सामने अपनी आंख नहीं टिका सकता। लेकिन अब जब कि कृष्णादेवी सो रही थी, नीना उसके चेहरे की ओर देखने लगी··· देखती चली गई···और फिर जैसे उसकी भूखें बिलबिला उठीं, उसकी प्यासें भड़क उठीं और उसके मुंह से बड़े ऊंचे स्वर में निकल गया—"मां···"

नीना अपनी ही आवाज से घबरा गई और सोई हुई मां के साथ चिमट गई। कृष्णादेवी के कानों में जैसे धरती का अणु-अणु कह रहा था—"मां ···मां···मां···।" नीना की इस आवाज को कृष्णादेवी ने सुनी, देवराज ने भी सुना और दोनों को जैसे किसी आकाशवाणी ने कह दिया, "आज आपको आपका आश्रय मिल गया है।"

देवराज के दफ्तर जाने का समय हो गया था। आज जब वह तैयार हो चुका तो उसने धीरे से नीना के पास जाकर कहा, "बेटी! क्या बाजार से कोई चीज मंगवानी है?" उस समय नीना ने अपने शरीर में जो थर-थराहट अनुभव की वह उसके लिए एक विचित्र अनुभव था। उसने धीरे से देवराज की बांहों के साथ अपना सिर सटा दिया।

फासले

अभी तक वीणा के लिए तेज कुछ अधिक अपना नहीं था जैसे दोनों के बीच नीना की ओट होने के कारण वीणा ने उसे अच्छी तरह पहचाना ही न हो। लेकिन अब जब से नीना चली गई थी वीणा के लिए जैसे एकाएक ही उसका पूरा अपनापन जागृत हो उठा था।

यद्यपि वीणा भी तेज से उतनी ही छोटी थी जितनी कि नीना! लेकिन वीणा को अपने हाथों से काम करने की उतनी आदत नहीं थी, जितनी कि

नीना को। वीणा देखती तेज के वस्त्र इससे पहले कभी इतने मैले और ऊबड़-खाबड़ नहीं हुए थे, उसकी पुस्तकें कभी इस प्रकार बिखरी हुई न होती थीं और कभी वह इस प्रकार चुपचाप-सा नहीं रहता था। इस हफ्ते पाठशाला का यह पहला खेल था जिसमें तेज पहले की तरह पहला नम्बर प्राप्त न कर सका था और उसने अपनी इस हार को चुपचाप पी लिया था। तेज ने यह दावा भी नहीं किया था कि अगली बार इस हार की कसर पूरी कर देगा। वीणा हैरान थी, लेकिन उसे इस बात की इच्छा हुई कि अपने हाथों तेज के सब काम कर दिया करे।

वीणा चुपचाप तेज के कमरे में जाती और उसकी पुस्तकें आदि संवारने लगती। लेकिन वह अभी पहली या दूसरी पुस्तक को ही हाथ लगाती थी कि तेज उसके हाथ से पुस्तक लेकर स्वयं झाड़ने-पोंछने लगता जैसे वीणा के सम्मुख वह अपनी असावधानी के लिए लज्जित हो जाता हो। वीणा को यद्यपि बिखरे हुए वस्त्रों को संभालने की आदत नहीं थी, कमीज के टूटे हुए बटन लगाने और कमरे की अन्य वस्तुओं को सलीके से रखने की आदत नहीं थी फिर भी उसे बड़ी उत्सुकता रहने लगी कि वह तेज के सब काम संभाल ले।

ज्यों-ज्यों वीणा तेज के निकट होती चली गई, तेज के पांव जैसे ठिठक-कर पीछे हटते चले गए। तेज सोचता कि सचमुच उसमें कोई गुण नहीं था। उसकी पढ़ाई, उसकी सफाई और उसके खेल केवल नीना के गुणों के आधार पर ही ठीक ढंग से चल रहे थे। उसे कुछ ऐसा अनुभव होता जैसे वह सबकी नजरों में हल्का पड़ गया था। अन्यथा वीणा इस प्रकार उस पर दया न करती। वीणा ज्यों-ज्यों तेज के काम अपने हाथों से करने लगी, त्यों-त्यों तेज अपनी नजरों में गिरता चला गया।

इससे पहले तेज वीणा के कमरे में निस्संकोच चला जाता था। एक तो नीना हमेशा उसके साथ होती थी और उसकी उपस्थिति में उसे कभी परायेपन का अनुभव न हुआ था। वह समय-असमय वीणा को बुला सकता था, उसके कमरे में जाकर उसे खेल खेलने के लिए बाहर ले जाने के लिए मना सकता था, उससे झगड़ सकता था, उससे बहस कर सकता था। लेकिन अब नीना की अनुपस्थिति के कारण उसे वीणा के कमरे में जाते हुए संकोच होता था, जैसे वीणा के साथ उसका सम्बन्ध केवल नीना के कारण हो और दूसरी बात यह थी कि वीणा जैसे-जैसे तेज पर अधिक ध्यान देने लगी थी, वैसे-वैसे तेज को उसके व्यवहार से दया और सहानुभूति का कुछ ऐसा रंग नजर आने लगा था कि वह वीणा की उपस्थिति में अपनी नजरों

में और भी तुच्छ हो जाता था। वीणा और तेज ने आपस में कभी किसी आवश्यक बात के बिना कोई दूसरी बात न की थी। इससे पहले वे तीनों कई चित्रों, रंगों आदि पर लम्बी बहसें किया करते थे, लेकिन अब यदि किसी समय वीणा किसी बात की शुरुआत भी करती तो तेज एक ही वाक्य में बात समाप्त कर देता। दिन पर दिन व्यतीत होते चले गए लेकिन वीणा और तेज की चुप्पी में कोई अंतर न आया।

धीरे-धीरे वीणा के उत्साह में एक प्रकार की उदासीनता घुलती चली गई। शुरू-शुरू में उसके भीतर एक प्रकार के संतोष ने सिर उठाया था कि इससे पहले तेज पर जितने अधिकार नीना के थे अब वे सबके सब स्वयं ही उसे प्राप्त हो जाएंगे लेकिन वीणा देखती कि तेज का संकोच पहले से भी कहीं बड़ा रूप धारण करके उनके बीच आ खड़ा होता था। जब नीना वहां थी तो वीणा के कमरे में हर समय चहल-पहल-सी रहती थी, वह आग्रहपूर्वक वीणा के कपड़े तबदील करवा लेती थी, उसे अपनी पाठशाला के खेल दिखाने ले जाती थी, सरकसों, मेलों में खींच ले जाती थी, और तेज दोनों की परछाईं की तरह हर समय दोनों के साथ रहता था।

अब तेज ने उसे कभी अपनी पाठशाला में चलने को नहीं कहा था, कभी कोई मेला देखने के लिए बुलावा न भेजा था। उसके लिए कभी कोई पुस्तक खरीदकर न लाया था। पहले-पहल तो वीणा इन समस्त बातों को तेज की स्वाभाविक उदासीनता समझकर दरगुजर करती रही लेकिन फिर धीरे-धीरे वीणा के भीतर उसकी अपनी उदासीनता से उसके मन का मान जागने लगा।

वास्तव में तेज के दिल में वीणा के प्रति किसी सम्बन्ध में कोई कमी न आई थी बल्कि उसके प्रति कुछ ऐसा आदर-सत्कार उत्पन्न हो गया था, जो वीणा के सम्मुख उसकी नजरों को झुकाए रखता था। वीणा की समस्त कृपाओं के लिए उसके पास कोई उत्तर नहीं था। इसलिए उसका सामना होते ही उसे एक विचित्र प्रकार की झिझक सी होने लगती थी।

वीणा सोचती, वह जब कभी तेज के कमरे में जाती है, बिना बुलाए जाती है। तेज जब भी उसके कमरे में आता है सदैव उसके बुलाने पर आता है। वीणा के अबोध हृदय में तेज के प्रति एक रुष्टता-सी उत्पन्न हो गई और वह चुपचाप अपने कमरे की खिड़की में बैठकर पढ़ती रहती। हालांकि किसी मामूली-सी आवाज पर भी उसका ध्यान उचट जाता और वह स्वाभाविक सोचने लगती थी कि शायद तेज उधर आ रहा है।

कभी-कभी वीणा का जी चाहता कि वह नीना से इस बात का जिक्र

करे। शायद नीना तेज के इस स्वभाव को जानती हो। वह अवश्य ही उसे बताएगी कि तेज को क्या हो गया है और कई बार वीणा नीना से यह सब पूछने के लिए इतनी उत्सुक हो उठती कि वह अपनी माताजी से इस बात का अनुरोध कर उन्हें मना लेती कि उस शाम को वह उसे नीना के यहां ले चलेंगी। लेकिन जैसे-जैसे नीना का घर निकट आता जाता, वीणा के होंठ सिकुड़ते जाते। वह नीना से मिलती, उसकी नई कापियां उलट-पलटकर देखती; उसकी आलमारी में से नये चित्र निकालकर देखती लेकिन तेज की कोई बात पूछना तो एक ओर रहा वह उसके सामने उसका नाम तक न ले पाती। यहां तक कि जब स्वयं नीना तेज के बारे में कुछ पूछती तो वीणा साधारण से उत्तर के अतिरिक्त उस बात को कुछ लम्बा तक न कर पाती।

कभी-कभी वीणा को कुछ ऐसा अनुभव होता जैसे स्वयं उसके मन में से समस्त फासले कम होते जा रहे हैं और तेज उसके समीप···और समीप होता चला जा रहा है। लेकिन कभी-कभी उसे ऐसा भी लगता कि उसके और तेज के बीच और भी अधिक बड़े फासले पड़ते जा रहे हैं और तेज उससे दूर···और दूर होता जा रहा है।

एक जाल

इस बार जब नीना का जन्मदिन आया; तो वह पहले से ही अधिक धूमधाम से मनाया गया। अब नीना कॉलेज जाने लगी थी और उसकी सहेलियों में कई एक की वृद्धि हो गई थी। एक वृद्धि इस बार यह हुई थी कि देवराज के निकट सम्बन्धियों में से उसका एक भाई और भाभी भी आए थे। वे इस शहर में नहीं रहते थे और पहली बार उनके यहां आए थे और उन्होंने नीना को पहली बार देखा था।

इस बार जब देवराज के उस भाई और भाभी ने नीना के यहां यह दिन मनाया तो रात सोते समय तक उन दोनों की आंखों में देवराज का धन और नीना का रूप समा चुके थे। रात के एकांत में जब वे दोनों सोने लगे तो दोनों के मन की बात, दोनों के जबान पर आ गई।

"मुझे वह समय याद आता है जब ये हमारे छोटे बच्चे को गोद लेना चाहते थे लेकिन फिर न जाने किस सगे-सम्बन्धी की बातों में आ गए थे।"

"हमारे भोले को अगर ये अपना मुतबन्ना बना लेते तो आज वह हर

में और भी तुच्छ हो जाता था। वीणा और तेज ने आपस में कभी किसी आवश्यक बात के बिना कोई दूसरी बात न की थी। इससे पहले वे तीनों कई चित्रों, रंगों आदि पर लम्बी बहसें किया करते थे, लेकिन अब यदि किसी समय वीणा किसी बात की शुरुआत भी करती तो तेज एक ही वाक्य में बात समाप्त कर देता। दिन पर दिन व्यतीत होते चले गए लेकिन वीणा और तेज की चुप्पी में कोई अंतर न आया।

धीरे-धीरे वीणा के उत्साह में एक प्रकार की उदासीनता घुलती चली गई। शुरू-शुरू में उसके भीतर एक प्रकार के संतोष ने सिर उठाया था कि इससे पहले तेज पर जितने अधिकार नीना के थे अब वे सबके सब स्वयं ही उसे प्राप्त हो जाएंगे लेकिन वीणा देखती कि तेज का संकोच पहले से भी कहीं बड़ा रूप धारण करके उनके बीच आ खड़ा होता था। जब नीना वहां थी तो वीणा के कमरे में हर समय चहल-पहल-सी रहती थी, वह आग्रहपूर्वक वीणा के कपड़े तबदील करवा लेती थी, उसे अपनी पाठशाला के खेल दिखाने ले जाती थी, सरकसों, मेलों में खींच ले जाती थी, और तेज दोनों की परछाईं की तरह हर समय दोनों के साथ रहता था।

अब तेज ने उसे कभी अपनी पाठशाला में चलने को नहीं कहा था, कभी कोई मेला देखने के लिए बुलावा न भेजा था। उसके लिए कभी कोई पुस्तक खरीदकर न लाया था। पहले-पहल तो वीणा इन समस्त बातों को तेज की स्वाभाविक उदासीनता समझकर दरगुजर करती रही लेकिन फिर धीरे-धीरे वीणा के भीतर उसकी अपनी उदासीनता से उसके मन का मान जागने लगा।

वास्तव में तेज के दिल में वीणा के प्रति किसी सम्बन्ध में कोई कमी न आई थी बल्कि उसके प्रति कुछ ऐसा आदर-सत्कार उत्पन्न हो गया था, जो वीणा के सम्मुख उसकी नजरों को झुकाए रखता था। वीणा की समस्त कृपाओं के लिए उसके पास कोई उत्तर नहीं था। इसलिए उसका सामना होते ही उसे एक विचित्र प्रकार की झिझक सी होने लगती थी।

वीणा सोचती, वह जब कभी तेज के कमरे में जाती है, बिना बुलाए जाती है। तेज जब भी उसके कमरे में आता है सदैव उसके बुलाने पर आता है। वीणा के अबोध हृदय में तेज के प्रति एक रुष्टता-सी उत्पन्न हो गई और वह चुपचाप अपने कमरे की खिड़की में बैठकर पढ़ती रहती। हालांकि किसी मामूली-सी आवाज पर भी उसका ध्यान उखड़ जाता और वह ख्वाहमख्वाह सोचने लगती थी कि शायद तेज उधर आ रहा है।

कभी-कभी वीणा का जी चाहता कि वह नीना से इस बात का जिक्र

करे। शायद नीना तेज के इस स्वभाव को जानती हो। वह अवश्य ही उसे बताएगी कि तेज को क्या हो गया है और कई बार वीणा नीना से यह सब पूछने के लिए इतनी उत्सुक हो उठती कि वह अपनी माताजी से इस बात का अनुरोध कर उन्हें मना लेती कि उस शाम को वह उसे नीना के यहां ले चलेंगी। लेकिन जैसे-जैसे नीना का घर निकट आता जाता, वीणा के होंठ सिकुड़ते जाते। वह नीना से मिलती, उसकी नई कापियां उलट-पलटकर देखती; उसकी आलमारी में से नये चित्र निकालकर देखती लेकिन तेज की कोई बात पूछना तो एक ओर रहा वह उसके सामने उसका नाम तक न ले पाती। यहां तक कि जब स्वयं नीना तेज के बारे में कुछ पूछती तो वीणा साधारण से उत्तर के अतिरिक्त उस बात को कुछ लम्बा तक न कर पाती।

कभी-कभी वीणा को कुछ ऐसा अनुभव होता जैसे स्वयं उसके मन में से समस्त फासले कम होते जा रहे हैं और तेज उसके समीप···और समीप होता चला जा रहा है। लेकिन कभी-कभी उसे ऐसा भी लगता कि उसके और तेज के बीच और भी अधिक बड़े फासले पड़ते जा रहे हैं और तेज उससे दूर···और दूर होता जा रहा है।

एक जाल

इस बार जब नीना का जन्मदिन आया; तो वह पहले से ही अधिक धूमधाम से मनाया गया। अब नीना कॉलेज जाने लगी थी और उसकी सहेलियों में कई एक की वृद्धि हो गई थी। एक वृद्धि इस बार यह हुई थी कि देवराज के निकट सम्बन्धियों में से उसका एक भाई और भाभी भी आए थे। वे इस शहर में नहीं रहते थे और पहली बार उनके यहां आए थे और उन्होंने नीना को पहली बार देखा था।

इस बार जब देवराज के उस भाई और भाभी ने नीना के यहां यह दिन मनाया तो रात सोते समय तक उन दोनों की आंखों में देवराज का धन और नीना का रूप समा चुके थे। रात के एकांत में जब वे दोनों सोने लगे तो दोनों के मन की बात, दोनों के जबान पर आ गई।

"मुझे वह समय याद आता है जब ये हमारे छोटे बच्चे को गोद लेना चाहते थे लेकिन फिर न जाने किस सगे-सम्बन्धी की बातों में आ गए थे।"

"हमारे भोले को अगर ये अपना मुतबन्ना बना लेते तो ——— ———

चीज़ का मालिक होता।"

"पहले तो ये चाहते थे, फिर न जाने क्या हुआ? इस कृष्णादेवी ने एक ही रट पकड़ ली कि माता-पिता जीते रहें, मैं क्यों उसके माता-पिता से छीनूं।"

"हमें भला लड़के से मुंह मोड़ लेते? आखिर वह हमारा बेटा था, हम मिलते-जुलते रहते और लड़के को भी ज़रा समझ आ जाती, वह फिर से हमारा हो जाता।"

"इसीलिए तो शायद देवराज माना नहीं था। अब इस लकड़ी को कोई पूछने वाला है न बताने वाला, किसी को क्या मालूम कि वह इनकी अपनी बेटी है या नहीं, बल्कि इनके तो मजे हो गए हैं।"

"तुम अगर थोड़ी-सी सयानी हो जाओ तो अब भी कुछ नहीं बिगड़ा, यह सारा धन अब भी तुम्हारे घर आ सकता है।"

"वह कैसे?"

"हम देवराज से कहें कि हमारे बड़े लड़के के साथ नीना की सगाई कर दे।"

"आपने तो सचमुच मेरे मुंह की बात छीन ली है। मैंने तो जब से इस घर में पैर डाला है, मेरे दिल में यही बात समाई हुई है, लेकिन मैं आपसे डर के मारे न कहती थी।"

"भला इसमें डरने की क्या बात थी?"

"मैं सोचती थी कि आप जात-पांत का बड़ा खयाल करते हैं, कहीं यह न कहने लगें कि लड़की न जाने किस जात की है, भगवान् की भगवान् ही जाने..."

"सोना भी कभी भ्रष्ट हुआ है। तुम देखती नहीं हो, लड़की निरा सोने का बुत बनकर तुम्हारे घर आएगी—तुम सारी उम्र बैठी राज भोगना।"

"हमारे जगन का सितारा बड़ा तेज है। अगर यह काम हो जाए तो कल को मेरा जगन ही इन सब हवेलियों का मालिक हो जाएगा।"

"अजी यह हवेली तो सरकारी है।"

"चलो सरकारी ही सही, लेकिन इनका बैंकों में तो बहुत-सा रुपया होगा। आयु-भर कमाया ही कमाया है, कहीं एक पैसा खर्च नहीं किया, जो कुछ भी है, यह लड़की ही तो उसकी मालिक है।"

"लड़की के जन्मदिन पर वह इतना खर्च करता है तो ब्याह पर न जाने क्या कुछ करेगा?"

"मैं कहती हूं, आप अच्छी तरह उससे बात पक्की कर लें। इन शहरियों का कुछ पता नहीं होता, ऐसा न हो कि किसी दूसरी जगह बात-चीत कर लें। लड़की ब्याहने योग्य हो गई है, अब घर रखने योग्य नहीं रही।"

"मैंने ही तो तुमसे यह बात कही है और अब तुम ही मुझे उपदेश देने लगी हो।"

"आपकी आदत जो है···हर बात में ढील करने की···"

"अच्छा, फिर तुम बात करो।"

"मेरे बस में हो तो मैं कल शगन लेकर जाऊं।"

"मुझे एक तरकीब सूझी है।"

"क्या ?"

"जगन तो पहले ही मुझसे झगड़ता है कि मैंने उसे कॉलेज से क्यों उठा लिया है ?"

"उसका तो गांव में जी भी नहीं लगता।"

"मेरा खयाल है कि उसे फिर से यहां कालेज में पढ़ने दें।"

"भगवान्-भगवान् करके उसकी पढ़ाई से जान छुड़ाई थी, अब से सौ रुपये महीने का खर्च सिर पर डाल लें। फिर यहां होटलों में रहकर अल्लम-गल्लम खाएगा, बड़ी मुश्किल से घर के दूध-दही से उसके चेहरे का रंग फिरा था।"

"अजी यहां होटलों का अल्लम-गल्लम खाकर उसके दिन फिर जाएंगे।"

"तीन साल से उसने पढ़ाई छोड़ रखी है, अब किस तरह पढ़ेगा ?"

"देखा जाएगा, तुम समझना कि तीन साल के लिए उसे घर ले जाकर ज़रा उसकी सेहत ही अच्छी कर दी है। यहां रहेगा तो इनके घर आता-जाता रहेगा। कौन जाने लड़की-लड़का एक-दूसरे को चाहने लगें···बस फिर पौ बारा है···।"

"अगर फिर भी उन्होंने लड़की की शादी किसी दूसरी जगह कर दी तो···"

"फिर हमारी किस्मत···"

"मुझे तो पारसाल भी ज्योतिषी ने कहा था कि जगन की किस्मत बड़ी तेज है।"

"बस अब एक ही तरीका है···उसकी किस्मत ने ज़ोर मारा तो सब दरवाज़े खुल जाएंगे···"

और जगन के मां-बाप तरह-तरह की बातें सोचते रहे, दूसरे दिन गांव को लौट गए। लेकिन उन्हें गए अभी पूरा हफ्ता भी नहीं हुआ था कि जगन शहर पाकर कॉलेज में दाखिल हो गया और होस्टल में रहने लगा।

जगन

जगन के मां-बाप ने उसे कुछ ऐसा विश्वास दिला दिया था कि उसे अनुभव होता था, नीना के साथ उसका सम्बन्ध पक्का हो चुका है, इसलिए वह इस बात पर विशेष ध्यान नहीं देता था कि किसी ने उसे अच्छी तरह बुलाया है या नहीं। यह स्वयं ही नीना के यहां चला जाता, घंटों बैठा रहता, समय पर बिना किसी प्रकार की झिझक के चाय-पानी पीता और घर की छोटी-बड़ी बातों में अपनी टांग अड़ाता।

नीना स्वभावतः हर किसी से बड़ी अच्छी तरह मिलती थी। जगन के फिर से कालेज में दाखिल होने का वास्तविक कारण भी उसे मालूम नहीं था। सम्बन्धी होने के नाते वह जगन से हमेशा हंसकर बात करती थी। अगर कभी वह जगन की ओर ध्यान न देती तो जगन उसे स्वाभाविक लज्जा समझकर नज़रअन्दाज़ कर देता।

वह इसी प्रकार आता रहा। कभी-कभी तेज भी आता था। जब कभी तेज आता, नीना प्रफुल्लित हो उठती। नीना की यह प्रफुल्लता धीरे-धीरे जगन को अखरने लगी। ऐसे समय में नीना भूल जाती कि उसे किसी दूसरी ओर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त जगन को वह सारे घरवालों का साझा अतिथि समझती थी। लेकिन तेज को वह केवल अपना अतिथि समझती थी। जगन तो शायद अपने चाचा-चाची से मिलने आता था लेकिन तेज केवल उसीसे मिलने आता था—नीना सोचती और वह तेज की आवभगत में खो जाती।

यह मामूली-सी चुभन धीरे-धीरे जगन को बेतरह चुभती गई।

जगन के हाथ ज्यों-ज्यों आगे बढ़ रहे थे, नीना दूर से दूरतर होती मालूम होती थी। तेज के बारे में वह सबको बिना पूछे मश्वरे दे-देकर देख चुका था लेकिन हर बार उसके मश्वरे को वह आदर प्राप्त न होता कि जिसकी उसे आशा होती थी। क्रोध में आकर उसने एक-दो पत्र अपने बाप को भी लिखे। पत्रों का उत्तर आने के बजाय उसका बाप स्वयं आकर उससे मिल गया और उसे समझा गया कि इस खेल को खेलने के लिए बड़ी सहनशीलता की आवश्यकता है।

जगन की गलतफहमी दूर हो गई। उसने अपने दोनों हाथों को मरोड़ा, नीना उसके हाथों में नहीं आ रही थी। शुरू-शुरू में कभी वह यह भी सोचता था कि वह नीना के साथ अपना सम्बन्ध जोड़कर नीना पर एक प्रकार का उपकार कर रहा था। वह तो जन्म से ही एक अनाथ लड़की थी और अब भी उसके चाचा की दया पर पल रही थी···

लेकिन उसके मूल्यांकन में गलती हुई। जगन के जाट हाथ तड़पकर रह गए। एक छोटी-सी, कोमल-सी लड़की उसके हाथों में नहीं आ रही थी और वह यह सोचने से भी न रह सका कि इस अनाथ लड़की का यह साहस कि वह सदा अपनी मन-मर्ज़ी करती है···उसे नीना से प्यार तो नहीं लेकिन लगाव ज़रूर हो गया। नीना से विवाह करके उस पर उपकार करने की भावना तो समाप्त हो गई लेकिन नीना को एक बार अपनी बनाकर उसका मान तोड़ने की लगन ज़रूर लग गई।

"तेज···तेज···" जगन तेज के नाम से घृणा करने लगा। तेज को भी वह उतना तुच्छ समझता था जितना नीना को। "अनाथ··· कमीना···" और यद्यपि मन-ही-मन में वह समझ लेता कि तेज की कोई हैसियत नहीं थी जो वह उसके रास्ते में खड़ा हो सकता···लेकिन उसके मस्तिष्क की गहराइयों में यह विचार पत्थर की चट्टान की तरह स्थिर था कि उसके रास्ते में, सब रास्तों को रोकने वाला केवल एक तेज ही था···एकमात्र तेज।

जब कभी वह कोई सपना देखता. वह कुछ इस प्रकार का होता— तेज की मुट्ठी में पत्थर का एक टुकड़ा है, कभी वह पत्थर पत्थर नज़र आता है और कभी हीरा···जगन उसकी मुट्ठी खोलने की कोशिश करता है···वह उस हीरे या पत्थर को प्राप्त करना चाहता है···वह तेज की मुट्ठी को खोल देना चाहता है, तोड़ देना चाहता है···कभी वह पत्थर के उस टुकड़े को छीन लेता है और फिर उसे पता नहीं चलता कि वह उसे क्या करे···और वह उसे फेंक देता है और कभी पत्थर के उस टुकड़े को अपनी मुट्ठी में दबाकर भाग खड़ा होता है···भागे चला जाता है···भागे चला जाता है और फिर एकाएक उसे ठोकर लगती है और पत्थर का वह टुकड़ा उसके हाथ में गड़ जाता है···

ठोकर लगाने की पीड़ा से या छीना-झपटी की चोट से जगन का सपना टूटा जाता। वह दांत पीसता और नीना के प्रति क्रोध से उसकी आंखें लाल हो जातीं···वह अपनी चौड़ी, भारी, और जाटों जैसी हथेली को खोल-खोलकर देखता कि एक छोटी-सी कोमल-सी लड़की

नहीं आ रही थी।

एक गीत

एक दिन प्रातःकाल जब नीना जागी, उसके चेहरे पर किसी सपने का रंग निखरा हुआ था। उसकी आंखें चमक-चमक पड़ती थीं और उसके गाल दहक रहे थे। उसके भीतर से एक हुलारा-सा उत्पन्न हो रहा था जिसके झोंकों से सिर से पांव तक उसका बदन डोल रहा था। उसके भीतर एक सुगन्ध-सी उठ रही थी, जिसकी महक से वह झूम-झूम पड़ती थी।

उसे अपना सपना याद आया : वह थी, वीणा थी और उसके कालेज की सहेलियां थीं। न जाने कहां से तेज उनके साथ खेलने को आ गया और पहली बारी उसके सिर आ गई। एक नदी थी जिसके किनारों पर ऊंचे-ऊंचे सरकंडे के पतले और लम्बे बूटों में लड़कियां छुप गई थीं। आंख-मिचौनी के उस खेल में तेज 'चोर' बना हुआ था और पंजों के बल श्वास रोके बैठी नीना के कंधों पर किसी ने अपनी दोनों हथेलियां रख दी थीं। सरकंडों के लम्बे और पतले बूटों ने दोनों के सिरों पर ऊंचा होकर दोनों को अपनी ओट में ले लिया था।

"मैंने तुम्हें ढूंढ़ लिया है।" तेज ने नीना के कानों के पास अपना मुंह ले जाकर धीमे से कहा।

"भला यह क्या बात हुई···" नीना ने मुंह ऊंचा करके एक तरह से तेज को उलाहना दिया। अब नीना को 'चोर' बनना था।

"मैंने तुम्हें ढूंढ़ लिया है।" तेज ने फिर कहा और कुछ ऐसी नजरों से नीना की ओर देखा कि वे नजरें उसके हृदय में उतर गईं।

दोनों हथेलियां नीना के कंधे पर पड़ी थीं। सरकंडों के बूटों ने अपनी पतली लम्बी बांहें फैलाकर दोनों को ढांप रखा था। दोनों शरीरों में एक कम्पन-सा उठकर एक-दूसरे में घुल-मिल रहा था।

तेज को जीती हुई बाजी और नीना को अपने सिर आई हुई बाज

भूल गई। नदी के भीगे किनारों पर और ऊंचे लम्बे सरकंडों की दीवारों की ओट में तेज और नीना के श्वास एक-दूसरे से टकरा रहे थे।

इस सपने की याद से नीना का जाग रँगारंग थी। उसके चेहरे पर एक रंग निखर आया, उसके हृदय में एक हुलारा-सा उठा, उसके भीतर से एक सुगन्ध उठी और नीना ने देखा रोशनदान के रंगीन शीशों में से गुजरी हुई सूरज की एक किरण ने सामने की दीवारों पर सातों रंग बिखेर दिए थे।

नीना की माता ने जब चाय का प्याला बनाकर नीना के सामने रखा तो पहला घूंट लेती हुई नीना से माता ने कहा कि रात उनका फोटोग्राफर उसके जन्मदिन वाला फोटो बनाकर दे गया था। रात चूंकि वह सोई पड़ी थी, इसलिए उन्होंने उसे जगाया नहीं।

जब माता ने फोटो पर लिपटा हुआ कागज उतार उसे नीना के सामने किया तो फोटो में अपने साथ सटकर खड़े तेज को देखकर नीना के हृदय के समस्त तार झनझना उठे।

"ऐसा तो फोटो उतरवाते समय भी नहीं हुआ था!" नीना मन-ही-मन में सोचने लगी। उसे तेज पसन्द था, इतना पसन्द कि जितना कोई और पसन्द नहीं था, फिर आज ऐसी झनझनाहट पहली बार उसके शरीर में उत्पन्न हुई थी···। तेज के साथ वह सैकड़ों बार तरह-तरह के खेल खेली थी···लेकिन आज ऐसी आंखमिचौनी उसने पहली बार खेली थी··· तेज उसके मन-मस्तिष्क में था लेकिन आज उसे लगा कि तेज उसकी नस-नस में समाया हुआ था।···

तेज फोटो वाली नीना के दायें हाथ खड़ा था और वीणा बायें हाथ खड़ी थी। उस फोटो की ओर देखते-देखते नीना हंस पड़ी और चाय का मीठा और गरम घूंट लेते हुए उसने सोचा—"कितने अच्छे लोग उसके दायें-बायें खड़े हैं!"

अपने भीतर से उठते हुए हुलारों से डोलते हुए और हृदय में से उठती हुई सुगन्धियों से झूमते हुए नीना फोटो को हाथ में लेकर अपने कमरे की खिड़की में जा खड़ी हुई।

उगते हुए सूरज की पहली किरण के साथ ही बादलों के कुछ नन्हे-नन्हे टुकड़े जाग पड़े थे और अब नीना की आंखों के सामने आपस में आंखमिचौली खेल रहे थे।

नीना के होंठों पर एक गीत के बोल उभरते रहे और फिर उसके होंठों से उसका स्वर स्पष्ट रूप से निकलने लगा। नीना गा रही थी:

अज वगदी पुरे दी वा
दो अखियां दी नींदर विच तूं
सुपना बन के आ
आज वगदी पुरे दी वा[1]

और नीना ने ये बोल कितनी बार दुहराए। दुहराते-दुहराते वह इस प्रकार आगे बढ़ी :

हुने मैं खुशियां दा मुंह तकिया
हुने तां पई आं दलीले
हुने तां चन्न असमाने चढ़या
हुने तां बद्दल नीले···
हुने जिक्र-सी तेरे मिलन दा
हुने विछोड़े दा···
अज वगदी पुरे दी वा।[2]

और नीना ने अपने होंठ अपने दांतों में दबा लिए ! "क्यों ! भला मैं यह क्यों गा रही हूं ? मेरा मिलन विछोह नहीं बनेगा···मेरे आकाश पर कभी बादल नहीं आएंगे···मैं, भला मैं पसोपेश में क्यों पड़ गई हूं···।" नीना की समझ में कुछ नहीं आ रहा था कि उसके भीतर से बादल का कौन-सा टुकड़ा उठ-उठकर उसकी प्रसन्नताओं को ढांप रहा था···वह अच्छी-भली, हंसती-खेलती, विचारों में घिरी जा रही थी···उसके मिलन का गीत आप-ही-आप विछोह का गीत बना जा रहा था···ऐसा क्यों··· उसे अपने-आप पर और अपने उन बोलों पर क्रोध आने लगा लेकिन उस गीत के बोल तो आप-ही-आप उसके होंठों से निकलते चले आ रहे थे···।

कभी सूरज की कुछ किरणें बादलों को छा डालतीं थीं और कभी

---

१. आज पुरवाई बह रही है।
मेरी नींद भरी आंखों में
तुम सपना बनकर आओ।
आज पुरवाई बह रही है।

२. अभी-अभी मैंने प्रसन्नताओं का मुंह देखा था।
और अभी मैं बसवसों में पड़ गया हूं
और अभी आकाश पर चांद निकला था
और अभी नीले बादल घिर आए हैं
अभी-अभी तुम्हारे मिलन की चर्चा थी
और अभी विछोह का जिक्र होने लगा है।

नीचे झुके हुए बादल सूरज को छुपा लेते थे। न जाने क्यों आज बादलों का रंग नीना के चेहरे पर उदासियां बिखेर रहा था। नीना का जी चाह रहा था कि वह बादलों के उन टुकड़ों को अपने हाथों में लेकर तोड़-मरोड़-कर परे फेंक दे और सूरज की सुनहरी किरणें पूरी धरती पर बिछ जाएं।

किरणें एक बार फिर फूटीं और नीना के चेहरे पर फिर एक चमक आ गई। वह फिर गाने लगी :

कदमा नू दो कदम मिले ने
जमीं ने सुन लई सो
पानी दे विच घुल गई ठंडक
पौना विच खुशबो···
पर दिन दा चानन भेत न सांभे
ते रात न देंदी राह···
अज वगदी पुरे दी वा
दो अखियां दी नींदर विच तूं
सुपना बन के आ।
आज वदगी पुरे दी वा···।[1]

और गाते-गाते नीना के भीतर से वह उत्साह न फूटा, जो उसका जी चाहता था कि उसके भीतर जागे और अकारण ही फैली हुई इस उदासी को क्षण-भर में धो डाले···।

नीना आगे न गा सकी, लेकिन उसे महसूस होता कि उसका गीत अधूरा था। पहले बंद को दुहराते समय उसके भीतर उदासी जागती थी और दूसरा बंद गाने के लिए उसके भीतर कोई उत्साह उत्पन्न नहीं होता था और उसे समझ न आती थी कि वह उस गीत का तीसरा बंद किन शब्दों के साथ शुरू करे···

---

१. मेरे कदमों के साथ तुम्हारे कदम आ मिले।
और धरती ने उनकी चाप सुन ली।
पानी में ठंडक घुल गई।
और वायु में सुगन्ध।
दिन का प्रकाश भेद को सम्भाल नहीं पाता।
और रात भी पनाह नहीं देती।
आज पुरवाई बह रही है।
मेरी नींद-भरी आंखों में तुम सपना बनकर आओ।

नीना ने ऊपर आकाश के शून्य में देखा और उसे लगा कि आज की
ह के साथ अवश्य ही उसके रात के सपने का सम्बन्ध था, तभी तो सूरज
लाल किरणें और बादलों के नीले टुकड़े आपस में घुल-मिल रहे थे और
ोलिए उसके मन में उसकी प्रसन्नताएं और उसकी उदासियां एक-दूसरे
जूझ रही थीं। गीत के तीसरे बंद के लिए उसके मन में बहुत कुछ भाव
त्पन्न होते रहे और सिमटते रहे लेकिन उसके होंठों तक एक शब्द भी न
आ पाया।

वीणा के आगमन पर नीना को सन्तोष हुआ कि उसे व्यर्थ के विचारों
से छुटकारा मिल गया था। नीना ने चाय मंगवाई और वे इधर-उधर की
छोटी-छोटी बातों में व्यस्त हो गईं।

बादलों का मलेटी रंग धीरे-धीरे नीला होता चला गया और फिर उस
नीलेपन में कुछ कालापन भी घुल गया। अब चारों ओर कुछ ऐसा हल्का-
हल्का अन्धकार फैल गया कि सुबह का दूसरा पहर पहचानना कठिन हो
गया। इधर-उधर की छोटी-छोटी बातों से निकलकर आज वीणा के होंठों
पर एक बड़ी बात आ खड़ी हुई।

"नीना! बात तो कुछ नहीं होती लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि
दिल बैठने लगता है।" वीणा बोली और इस साधारण-सी बात से उनकी
पहली सब बातों का रुख भी बदल गया।

"हां···!"

"क्या कभी तुम्हें भी ऐसा लगा है?"

"हां···।"

"ऐसा क्यों होता है?"

"न जाने क्यों···"

"तुम्हें कैसा लगता है?"

"आज सुबह जब मैं उठी थी, तो बहुत खुश थी, इतनी खुश मैं पह
ी न हुई थी। लेकिन फिर ऐसा हुआ···न जाने फिर क्या हुआ···
र यह कहते-कहते नीना को अपने जन्मदिन वाले उस फोटों की
ा गई और उसने उठकर वह फोटो वीणा को दिखाया।

एकाएक वीणा के चेहरे का रंग बदल गया। उसकी नजरें फो
जिस स्थान पर पड़ी थीं, वहीं टिकी रह गईं, और फिर उसके हाथ थ
उठे और उनमें लिया हुआ फोटो डोल गया।

"वीणा!"

"हूं।"

"वीणा !"

"अगर आज मैं तुम्हें एक बात बताऊं''''और यह कहते समय वीणा का चेहरा केसर के फूल जैसा हो गया।

"कौन-सी बात वीणा ?"

"नीना !'''कोई किसी के खयालों में क्यों आता है ?"

"वीणा !"

"दिन की जाग में और रात के सपनों में'''तेज !" वीणा की नज़रें झुक गईं। अगले शब्द उसके होंठों में अटक गए लेकिन जो कुछ वह कहना चाहती थी, वह बात बिजली की एक सूक्ष्म-सी रेखा की तरह नीना के शरीर में उतर गई।

वीणा का चेहरा झुका हुआ था। यदि इस समय वह नीना के चेहरे की ओर देखती तो वह देखती कि नीना का चेहरा हल्दी जैसा पीला पड़ गया था।

बादलों के नीले रंग में मिले हुए कालेपन ने अपने-आप को पानी की नन्ही-नन्ही बूंदों में घोल दिया। नीना ने एक बार खिड़की के पर्दे पर गिरती हुई बूंदों की ओर देखा और उसने देखा कि भरे हुए बादल हल्के होते जा रहे हैं। उसके मन में इच्छा उत्पन्न हुई कि उसकी आंखों की भी झड़ी लग जाए और उसका भरा हुआ मन हल्का हो जाए।

"वीणा'''!" नीना ने धीमे स्वर में कहा, लेकिन उसकी आंखें ज्यों की त्यों रहीं और बादल भीतर-ही-भीतर घुलते रहे।

"जो बात मैंने तेज से भी नहीं कही, वह आज मैंने तुमसे कह दी है'''" वीणा ने कहा और उसी प्रकार नज़रें झुकाए हुए फिर वह बोली, "मुझे जल्दी जाना है माताजी ने कहा था'''।"

"बारिश हो रही है।"

"मोटर के शीशे चढ़ा लूंगी'''और वीणा ने एक बार फिर उस फोटो की ओर ऐसे देखा जैसे फोटो में बैठे हुए तेज को भी वह अपने साथ उठा ले जाना चाहती हो।

आज वीणा ने नीना से अपने दिल की बात कही थी, इसलिए वह उसकी ओर देखते हुए भी लजाती थी। वीणा चली गई और प्रतिक्षण दूर होती गई उसकी मोटर की आवाज़ नीना को ऐसी लगी जैसे कोई उसके शरीर में से आत्मा निकाल ले गया हो और उसका शरीर मिट्टी की एक मुट्ठी की तरह उसकी पकड़ में से सरकता जा रहा हो।

फोटो उसी प्रकार मेज़ पर पड़ा था। नीना उसी प्रकार उन दोनों

के बीच खड़ी थी। तेज अब भी उसकी दाईं ओर था और वीणा बाईं ओर।

"अभागन···!" नीना ने अपने चित्र की ओर देखा और उसके मुंह से निकल गया। उसके भीतर एक कसक-सी उठी और उसने सोचा कि वह तेज और वीणा के बीच क्यों खड़ी थी ? उसे मिट जाना चाहिए था, उसे समाप्त हो जाना चाहिए था···यह स्थान उसका स्थान नहीं था।

"मैंने तुम्हें ढूंढ़ लिया है···।" जैसे तेज ने स्वयं आकर उसके कानों में कहा। उसका सपना···सरकंडे के बूटे···तेज···और उनके घुलते-मिलते श्वास···।"

"नहीं, नहीं, नहीं···" नीना ने अपने दोनों कानों में अपनी उंगलियां डाल लीं कि उसे तेज की आवाज़ सुनाई न दे।

"मैंने तुम्हें ढूंढ़ लिया है···" तेज की आवाज़···फिर आई। तेज उसके कानों के पास नहीं, उसके भीतर बोल रहा था। नीना ने ज़ोर से अपनी छाती को दबा लिया कि तेज की आवाज़ भीतर से भी उत्पन्न न हो सके··· और गीत के बिसरे हुए बोल नीना के होंठों पर आ गए :

हुने मैं खुशियां दा मुंह तकिया
हुए तां पई आं दलीले
हुने तां चन्न असमानें चढ़िया
हुने तां बद्दल नीले
हुने तां जिक्र-सी तेरे मिलन दा
हुने विछोड़े दा···
अज वगदी पुरे दी वा।

और नीना सोचती रही कि अब वे कुछ घंटे पूर्व भी उसने ये बोल गाए थे लेकिन इसका अर्थ नहीं समझा था। न जाने क्यों ये बोल उसके होंठों पर आ गए थे। न जाने क्यों इस होनी की सूचना उसे मिल गई थी और फिर उसने दूसरा बंद गाया :

कदमां नू दो कदम मिले सन
जिमी ने सुन लई सो
पानी दे विच घुल गई ठंडक
पौना विच गुमवो
पर दिन दा चानन भेत न सांभे
ते रात न देंदी राह···
अज वगदी पुरे दी वा।

सुबह जब उसने वह बंद गाया था तो उसके मुंह से निकला था, "कदमां नू दो कदम मिले ने" और अब इस पंक्ति का "ने"[1] स्वयं ही "सन"[2] बन गया था। उसे समझ नहीं आ रही थी कि कैसे उसके मिलन का पहला गीत आप-ही-आप विरह का गीत बनता जा रहा था···और नीना के होंठों पर अपने गीत का तीसरा बंद भी आ ही गया, जो सुबह से नहीं आ रहा था :

अज मेरे दो कदमां नालों
कदम छुटक गए तेरे
हथ मेरे अज विथां मापन
अखियां टोहन हनेरे
ज़िमीं तो लैके अम्बरां तीकर
घट्टां कलियां शाह···
अज वगदी पुरे दी वा।
दो अखियां दी नदीर विच तूं सुपना बन के आ···।

और गाते-गाते नीना की आंखें छलक उठीं। उसके सपनों में आने वाला व्यक्ति आज उसके जीवन का सपना बनता जा रहा था।

दुर्घटना

सबकी जीवन-गाड़ी अपने-अपने स्थान पर हचकोले खा रही थी, लेकिन सबके पांव एकदम डोल गए जबकि डाक्टर सलूजा की नई गाड़ी के साथ एक दुर्घटना हो गई।

दोनों ज़रूमी टांगों के साथ डाक्टर सलूजा अपनी कोठी में पहुंचे। डाक्टरों के झुरमुट में सलूजा साहब ने न तो अपनी चिकित्सा पर विशेष

---

१. हैं। २. थे।
३. आज मेरे कदमों से।
तुम्हारे कदम जुदा हो गए हैं।
आज मेरे हाथ फासले नाप रहे हैं
और आंखें अंधेरे में टटोल रही हैं।
धरती से आकाश तक
काली भंयकर घटाएं छा गई हैं।
आज पुरवाई बह रही है।
मेरी नींद-भरी आंखों में तुम सपना बनकर आओ।

यान दिया और न ही आपरेशनों आदि से विशेष आशा लगाई। भाग्य ने
उन्हें होने वाली घटना का निश्चय दिला दिया और उन्होंने अपनी दोनों
बेटियों को अपने पास बुलवा भेजा।

तेज पहले से ही परछाईं की तरह उनके साथ लगा हुआ था। राजवंती
भी क्षण-भर के लिए अलग न हुई। वीणा ने रात-भर पलक तक न झपकी
थी और अगली सुबह को सरला भी आ पहुंची :

"दिल मजबूत करने का समय है बेटी! रोने का नहीं।" डाक्टर
सलूजा ने बड़े प्यार से सरला को धैर्य दिया। लेकिन केवल सरला ही का
नहीं सबका धैर्य आंखों के पानी में डूबा हुआ था।

तेज ने सोचा, शायद किसी को डाक्टर सलूजा के साथ अपने मन की
बात करनी हो और उसकी उपस्थिति के कारण न कर पाए, इस विचार
से कुछ समय के लिए वह वहां से हट गया।

"अब तुम सब पर और भी जिम्मेदारियां आ गई हैं। सबसे अधिक
वीणा की जिम्मेदारी...।" डाक्टर सलूजा ने कहा।

"आप पिताजी! वीणा के लिए दो शब्द मुंह से निकाल दीजिए..."
सरला ने बड़ी अधीरता से कहा।

"नहीं...अब समय नहीं है..."

"पिताजी...आप नहीं जानते..." सरला की आवाज रुक गई।

"क्या...?"

"कहीं वीणा का जीवन दुःखी न हो जाए..." सरला का मन रो
उठा। उसे इच्छा हुई कि वह अपने सब दुःख अपने स्नेही पिता के साम
रख दे फिर न जाने कभी वह इस मुंह को देख सकेगी या नहीं...इस
पहले उसने कभी अपने माता-पिता के सामने दिल की भड़ास नहीं निका
थी...लेकिन आज उसे ऐसा लग रहा था कि अब वह कहे बिना नहीं
सकती। रुकते-रुकते उसने कहा, "पिताजी! वीणा की जिन्दगी ख़त
है...ये सब आराम आप ही के साथ हैं...आपकी दौलत के लिए लोगों
आंखें अंधी हो गई हैं।..." और इससे आगे सरला स्पष्ट रूप से कु
न कह सकी, फफक-फफककर रोने लगी।

"मुझे तेज पर उतना ही विश्वास है, जितना आज रवि पर हो
वह आपसे कभी मुंह नहीं मोड़ेगा...वह मेरे कामों को और मेरे
इज्जत को बचाएगा...आप लोग आंखें बन्द करके उस पर भरो
से...।"

"ठीक है पिताजी! लेकिन..." सरला आगे कुछ न कह सक

"मैं जानता हूं सरला ! इसलिए तो मैं ये सब बोझ तेज पर डाल रहा हूं···काश ! रमेश (सरला का पति) भी इस योग्य होता।" सरला के पिता ने सरला के मन की बात जान ली। उसने स्वयं ही वह कुछ कह दिया जो सरला न कह सकती थी।

"और क्या बुरा है पिताजी, अगर···" सरला कहते-कहते रुक गई।

"अभी तुम्हारी मां तुम लोगों के पास है···वह जैसा उचित समझेगी, करेगी···" डाक्टर सलूजा ने कहा। उनकी बेचैनी प्रतिक्षण बढ़ती जा रही थी और प्रतिक्षण वह निढाल होते जा रहे थे। फिर उन्होंने हस्पताल के सब इंचार्ज डाक्टरों को बुलवाया और तेज को पास बिठाकर कहने लगे :

"आप सबने मेरे साथ आयु का बहुत बड़ा भाग गुजारा है। मैं नहीं चाहता कि किसी एक आदमी के कम हो जाने से सब काम रुक जाएं। काम तो दीये की ज्योति की तरह होते हैं···और इस ज्योति को जलते रहना चाहिए···अगर एक बत्ती समाप्त हो जाए तो उसके स्थान पर दूसरी बत्ती रख देनी चाहिए···" डाक्टर सलूजा कह रहे थे, सबके मन उनके स्नेह से भीगे हुए थे और सबके गाल अपने आंसुओं से।

उन्होंने फिर कहा—"तेज आप सबसे छोटा है···अभी कुछ अनजान भी है लेकिन फिर भी मुझे विश्वास है कि आप इसे मेरी जगह समझेंगे···।"

हस्पताल के सब डाक्टरों ने आदरपूर्वक अपने सिर झुकाए। तेज के पूरे शरीर में इतनी बड़ी ज़िम्मेदारी की ऐसी झुरझुरी उत्पन्न हुई कि उसे लगा, मानो उसके पैरों के नीचे की धरती का सहारा डोल उठा हो। अपने डोलते माथे को उसने डाक्टर सलूजा की घायल टांगों पर रख दिया।

नये आने वाले कमरे में आते और पहले के बैठे हुए सब पीड़ाओं, वेदनाओं को होंठों में दबाकर वहां से उठ जाते। अब आने वालों में देवराज, कृष्णादेवी और नीना थे।

जिस समय नीना ने अपना सिर डाक्टर सलूजा की छाती पर रखा, उनकी अपनी आंखें भी सजल हो उठीं। बड़े प्यार-दिलासे के बाद उन्होंने उसे कमरे से बाहर भेज दिया। अब कमरे में केवल राजवंती रह गई थी या नीना के माता-पिता।

"आपके लिए मेरे पास एक अमानत है···" डाक्टर सलूजा ने देवराज से कहा।

"जी···" देवराज का स्वर रुक गया।

दिया और न ही आपरेशनों आदि से विशेष आशा लगाई।
होने वाली घटना का निश्चय दिला दिया और उन्होंने अपनी दोनों
यों को अपने पास बुलवा भेजा।
तेज पहले से ही परछाईं की तरह उनके साथ लगा हुआ था। राजवंती
क्षण-भर के लिए अलग न हुई। वीणा ने रात-भर पलक तक न झपकी
ी और अगली सुबह को सरला भी आ पहुंची :
"दिल मजबूत करने का समय है बेटी! रोने का नहीं।" डाक्टर
सलूजा ने बड़े प्यार से सरला को धैर्य दिया। लेकिन केवल सरला ही का
नहीं सबका धैर्य आंखों के पानी में डूबा हुआ था।
तेज ने सोचा, शायद किसी को डाक्टर सलूजा के साथ अपने मन की
बात करनी हो और उसकी उपस्थिति के कारण न कर पाए, इस विचार
से कुछ समय के लिए वह वहां से हट गया।
"अब तुम सब पर और भी जिम्मेदारियां आ गई हैं। सबसे अधिक
वीणा की जिम्मेदारी ...।" डाक्टर सलूजा ने कहा।
"आप पिताजी! वीणा के लिए दो शब्द मुंह से निकाल दीजिए..."
सरला ने बड़ी अधीरता से कहा।
"नहीं...अब समय नहीं है..."
"पिताजी...आप नहीं जानते..." सरला की आवाज रुक गई।
"क्या...?"
"कहीं वीणा का जीवन दुःखी न हो जाए..." सरला का मन रो
उठा। उसे इच्छा हुई कि वह अपने सब दुःख अपने स्नेही पिता के सामने
रख दे फिर न जाने कभी वह इस मुंह को देख सकेगी या नहीं...इससे
पहले उसने कभी अपने माता-पिता के सामने दिल की भड़ास नहीं निकाली
थी...लेकिन आज उसे ऐसा लग रहा था कि अब वह कहे बिना नहीं रह
सकती। रुकते-रुकते उसने कहा, "पिताजी! वीणा की जिन्दगी खतरे में
है...ये सब आराम आप ही के साथ हैं...आपकी दौलत के लिए लोगों की
आंखें अंधी हो गई हैं।..." और इससे आगे सरला स्पष्ट रूप से कुछ भी
न कह सकी, फफक-फफककर रोने लगी।
"मुझे तेज पर उतना ही विश्वास है, जितना आज रवि पर होता...
वह आपसे कभी मुंह नहीं मोड़ेगा...वह मेरे कामों को और मेरे घर
इज्जत को बचाएगा...आप लोग आंखें बन्द करके उस पर भरोसा
लें...।"
"ठीक है पिताजी! लेकिन..." सरला आगे कुछ न कह सकी।

"मैं जानता हूं सरला ! इसलिए तो मैं ये सब बोझ तेज पर डाल रहा हूं···काश ! रमेश (सरला का पति) भी इस योग्य होता।" सरला के पिता ने सरला के मन की बात जान ली। उसने स्वयं ही वह कुछ कह दिया जो सरला न कह सकती थी।

"और क्या बुरा है पिताजी, अगर···" सरला कहते-कहते रुक गई।

"अभी तुम्हारी मां तुम लोगों के पास है···वह जैसा उचित समझेगी, करेगी···" डाक्टर सलूजा ने कहा। उनकी बेचैनी प्रतिक्षण बढ़ती जा रही थी और प्रतिक्षण वह निढाल होते जा रहे थे। फिर उन्होंने हस्पताल के सब इंचार्ज डाक्टरों को बुलवाया और तेज को पास बिठाकर कहने लगे:

"आप सबने मेरे साथ आयु का बहुत बड़ा भाग गुज़ारा है। मैं नहीं चाहता कि किसी एक आदमी के कम हो जाने से सब काम रुक जाएं। काम तो दीये की ज्योति की तरह होते हैं···और इस ज्योति को जलते रहना चाहिए···अगर एक बत्ती समाप्त हो जाए तो उसके स्थान पर दूसरी बत्ती रख देनी चाहिए···" डाक्टर सलूजा कह रहे थे, सबके मन उनके स्नेह से भीगे हुए थे और सबके गाल अपने आंसुओं से।

उन्होंने फिर कहा—"तेज आप सबसे छोटा है···अभी कुछ अनजान भी है लेकिन फिर भी मुझे विश्वास है कि आप इसे मेरी जगह समझेंगे···।"

हस्पताल के सब डाक्टरों ने आदरपूर्वक अपने सिर झुकाए। तेज के पूरे शरीर में इतनी बड़ी जिम्मेदारी की ऐसी झुरझुरी उत्पन्न हुई कि उसे लगा, मानो उसके पैरों के नीचे की धरती का सहारा डोल उठा हो। अपने डोलते माथे को उसने डाक्टर सलूजा की घायल टांगों पर रख दिया।

नये आने वाले कमरे में आते और पहले के बैठे हुए सब पीड़ाओं, वेदनाओं को होंठों में दबाकर वहां से उठ जाते। अब आने वालों में देवराज, कृष्णादेवी और नीना थे।

जिस समय नीना ने अपना सिर डाक्टर सलूजा की छाती पर रखा, उनकी अपनी आंखें भी सजल हो उठीं। बड़े प्यार-दिलासे के बाद उन्होंने उसे कमरे से बाहर भेज दिया। अब कमरे में केवल राजवंती रह गई थी या नीना के माता-पिता।

"आपके लिए मेरे पास एक अमानत है···" डाक्टर सलूजा ने देवराज से कहा।

"जी···" देवराज का स्वर रुक गया।

डाक्टर सलूजा ने राजवंती से कहकर अपनी अलमारी के तहखाने में एक लिफाफा मंगवाया।

"आप जब उचित समझें यह पत्र नीना को दे दीजिएगा।"

"नीना को?"

"हां! यह पत्र नीना को जन्म देने के बाद उसकी माता ने लिखा था। इतने सालों तक मैंने इसे संभालकर रखा है। नीना इसे पढ़ने के योग्य तो हो गई थी लेकिन समझने के योग्य नहीं थी। अब वह इस योग्य भी हो गई है...आप जब भी उचित समझें उसे उसकी अमानत दे दें...यह उसकी माता ने अपने जीवन के अंतिम क्षणों में लिखा था..."

"अंतिम क्षण?" कृष्णादेवी के मुंह से निकला।

"हां, और यह पत्र लिखने के बाद की अगली सुबह को वह संसार में नहीं थी।" डाक्टर सलूजा का स्वर अब बहुत धीमा पड़ गया था। बोलते हुए उन्हें बड़ी कठिनाई हो रही थी।

इसके बाद उन्होंने सबको कमरे से विदा कर दिया केवल राजवंती उनके पास थी। कमरे में दरवाजे बन्द थे। नर्स और एक-दो डाक्टर कमरे से बाहर बरामदे के बैठे हुए थे। साथ के कमरे में वीणा, सरला और तेज थे। पूरे बंगले पर एक भयानक चुप्पी छाई थी और उस कमरे के फर्श पर मृत्यु से निस्स्वर पैरों के चिह्न पड़ रहे थे।

बीसवीं

मृत्यु के हाथों ने सबके पांव तले से धरती को सरका दिया लेकि इस भूकम्प का अन्त यहीं तक नहीं हुआ। परसों से रमेश आया हुआ और उसके व्यवहार से राजवंती को ऐसा प्रतीत होता था कि उस टूटे घोंसले के तिनके को भी वह छाती से लगाकर न रख सकेगी।

यही एक समय है, रमेश ने सोचा, जब वह उचित-अनुचित हर प्र का नाम उठा सकता है। अब जबकि उस घर के पैर डावांडोल हैं, वह आसानी से तेज को रास्ते से हटा सकता है...

राजवंती बड़े दृढ़ इरादे की स्त्री थी, उसे किसी प्रकार की फहमी में डालना आसान नहीं था। वर्ष तावर्ष तक उसने अपने हा पोरें तोड़-तोड़कर तेज को पाला-पोसा था और उसे तेज की मुस्का अपने खोए हुए रवि की झलक मिलती थी। लेकिन उसके सामने ए प्रश्न था जिसका उससे उत्तर नहीं बन पड़ रहा था। वह प्रश्न

जीवन का प्रश्न था। वह रमेश को खूब-खूब जान चुकी थी और अब तो रमेश का सारा खोटापन उसके चेहरे पर उभर आया था और वह जानती थी कि अपनी-सी कर गुज़रने पर उतारू रमेश यदि कुछ और न कर सका तो वह बेचारी सरला को, जो फूलों की एक बेल की तरह उसके जीवन से जुड़ी हुई थी, क्षण-भर में तोड़-मरोड़कर पांव तले कुचल सकता था।

और दूसरी ओर राजवंती के सामने अपने घर की आबरू थी, उसके अपनेपन की ममता थी, उसकी वीणा का भविष्य था और हस्पताल के साथ उसके पति का नाम का प्रश्न था···।

राजवंती को कुछ भी नहीं सूझ रहा था। वीणा कुछ कह न सकती थी और बेचारी सरला बस रो सकती थी।

उस रात तेज ने अपने सजल नेत्र राजवंती के पैरों पर रख दिए।

"मैं आपका हूं···और जिस घोंसले में मैंने वर्षों तक आश्रय लिया है उसे मैं अपनी आंखों के सामने उजड़ते नहीं देख सकता···।"

"तेज !"

"माताजी···!"

"तेज···!"

"अगर रमेश भाई की खुशी इसी में है कि मैं···।"

"तेज, मेरे बेटे···!"

"थोड़ा-सा दूर रहने से मैं कुछ बदल तो नहीं जाऊंगा···आपका बेटा तो आप ही का बेटा रहेगा।"

"तुम्हें तो मालूम है तेज ! डाक्टर साहब ने जाते समय सब कुछ तुम्हारे कंधों पर डाल दिया था।"

"मैं अपने अन्तिम श्वास तक भी अपने कर्त्तव्य का पालन करूंगा।"

"लेकिन तुम हमें छोड़कर नहीं जा सकते।"

"मैं कहां जा सकता हूं माताजी ! आपको छोड़कर मैं कैसे जीवित रह सकता हूं।"

"फिर ?"

"अगर इतनी-सी बात से ही घर में शान्ति आ जाए तो क्या बुरा है। मैं रात के छः घंटों के सोने के लिए कहीं कोई कमरा ले लूंगा।"

"फिर यह कमरे वीरान हो जाएंगे तेज।"

"ऐसा न कहिए···कुछ दिन बाद वीणा का ब्याह हो जाएगा और फिर इन कमरों की रौनक लौट आएगी।"

"तेज !"

"मांगें तो हमेशा बेटों के पास रहती हैं···वीणा और सरला जब अपने-अपने घर में रहेंगी उस समय आप अपने बेटे की निर्धनता को स्वीकार कर लीजिएगा। मुझे आपने कौन जुदा कर सकता है···?"

"बस मेरा इतना ही दोष है तेज, कि मैंने तुम्हें अपनी कोख से जन्म नहीं दिया···।"

"आपने मुझे अपने हृदय में से जन्म दिया है माताजी···" और तेज के आंसू राजवंती के हृदय में उतर गए।

"राजवंती को लगा कि उसका अपना रक्त जो तेज के शरीर में घुलता-मिलता-प्रतीत हो रहा था, न जाने रवि के शरीर में इस प्रकार का संचार कर पाता या नहीं···।"

रमेश के चेहरे पर एक चमक आ गई। आखिर उसका प्रयत्न विफल नहीं गया। क्या हुआ यदि तेज रोज आकर हस्पताल का काम संभालेगा, उसका उठना-बैठना तो घर में समाप्त हो रहा था। यों रमेश को इच्छा हुई कि काश, वह डाक्टर होता और स्वयं ही समस्त कार्यों को इस प्रकार सम्भाल लेता कि इस घर में तेज की आवश्यकता ही बाकी न रहती ···लेकिन वह सोचता रहा कि इतनी विजय ही बहुत बड़ी विजय थी। तेज की अनुपस्थिति में वह घर के सब कामों में दखल दे सकेगा। वीणा के ब्याह के सम्बन्ध में अपनी बात मनवा सकेगा और फिर धीरे-धीरे हस्पताल के प्रबन्ध को भी बदल डालेगा।

बिछड़ना इतना आसान नहीं था जिसने सरल और सुन्दर शब्दों में तेज ने राजवंती से कह दिया था। राजवंती के हृदय को जैसे किसी ने मुट्ठी में भर लिया था, वीणा के भीतर से विद्रोह सिर उठा रहा था और तेज के चेहरे पर उसकी वेदना तड़प रही थी।

आज तक तेज ने कभी अपने बीते हुए जीवन के बारे में कुछ नहीं सोचा था। अपनी जन्म देने वाली मां के चेहरे को याद नहीं किया था जैसे उसने अपने जीवन का प्रथम कांड अपनी पुस्तक से निकाल कहीं अलग रख दिया था। लेकिन आज उसके हृदय की समस्त अपूर्तियां जाग उठीं···।

"जो बच्चे एक बार घोंसले में से नीचे गिर जाएं उनके भाग्य में जो भी लिखा हो वही ठीक है···" तेज सोचता रहा और न जाने कौन-सी उदासियां उसके भीतर से उठ-उठकर उसे व्याकुल करती रहीं।

कुछ घंटों में ही तेज की आंखें अन्दर को धंस गईं। उसे अपनी तो अधिक चिन्ता नहीं थी लेकिन उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वह डाक्टर सलूजा की आशा का पालन न कर पा रहा हो। उन्होंने उस घर की

न लगा था। वह एक बड़ी आयु का व्यक्ति था और तेज को हमेशा बड़े अदब से 'डाक्टर बाबू' कहा करता था।

"डाक्टर बाबू !" आज भी अखबार वाले ने कहा।

"हां बाबा !" तेज ने उसकी आवाज पहचानी। वह भी हमेशा उसे 'बाबा' कहकर सम्बोधित करता था। आज भी उसने 'बाबा' कहकर हुंकारा भरा। लेकिन आज उसका जी चाहता था कि कोई व्यक्ति उसे आवाज न दे, कोई आकर उसके सामने खड़ा न हो।

"डाक्टर बाबू ! यह मैं एक नया अखबार आपके लिए लाया हूं।" अखबार वाले ने कहा।

"यहां रख दो बाबा !" तेज ने उसकी ओर नजरें उठाए बिना कहा। क्षण-भर बाद तेज ने देखा कि अखबार वाला अभी तक वहीं खड़ा था।

"बाबा !" तेज ने कहा और कुछ हैरानी से उसके चेहरे की ओर देखा। बाबा उसकी ओर ऐसी नजरों से देख रहा था जैसे उसे तेज का मुर्झाया हुआ चेहरा देखकर हार्दिक दुःख हुआ हो। तेज को अपनी बेरुखी पर कुछ लज्जा-सी आई और उसने मुस्कराकर एक बार फिर कहा, "बाबा !" और इसके साथ ही उसे एक बात करने का विचार आ गया, "क्यों बाबा ! कहीं कोई मकान किराये पर मिल सकता है ?"

"मकान ?"

"हां कोई छोटा-सा मकान या किसी मकान के एक-दो कमरे।"

"मकान बहुत मिल जाएंगे, डाक्टर बाबू।"

"लेकिन जल्दी।"

"कब तक बाबू ?"

"चाहे अभी मिल जाए।"

"अभी ? मैं समझा नहीं डाक्टर बाबू ! मकान किसके लिए चाहिए।"

"मेरे लिए···" और यह कहते समय तेज के माथे पर पसीना-सा आ गया।

"आपके लिए···?" अखबार वाले ने समझा कि आज उसका डाक्टर बाबू उसके साथ मजाक कर रहा था, लेकिन उसने हैरान होकर देखा, डाक्टर बाबू के चेहरे पर इस प्रकार का कोई लक्षण नहीं था लेकिन वह कोई और प्रश्न भी न कर सका।

"जिस कमरे में मैं रहता हूं, उस मकान की ऊपर की छत पर दो कमरे खाली हैं।" जरा रुककर अखबार वाले ने कहा।

तेज ने एक बार भी न सोचा कि वह उन कमरों का रंग-रूप देख ले, जाने वे कौन-सी सड़क पर थे, जाने वे किस प्रकार के थे, "अच्छा बाबा ! तुम जाकर मकान मालिक से किराया पूछ आओ और फिर आकर मुझे ले जाना।" तेज ने ऐसे साधारण ढंग से कह दिया जैसे उन कमरों के अच्छा या बुरा होने की उसे कोई चिन्ता न हो।

"डाक्टर बाबू, आप एक बार देख तो लीजिए···" अखबार वाला आश्चर्य से बोला।

"कोई बात नहीं···तभी देख लूंगा···" और तेज हंस पड़ा जैसे वह अपनी बेपरवाही से स्वयं ही कुछ लज्जित हो गया हो।

"अच्छा बाबू।" कहकर अखबार वाला चला गया।

उस शाम को तेज ने केवल एक बिस्तर और एक छोटा-सा सूटकेस लिया और अखबार वाले के साथ किराये के उन कमरों में उठ आया।

"बाबू, कोई चारपाई···कोई कुर्सी ?" बाबा ने पूछा लेकिन तेज इस बात का कोई उत्तर न दे सका। वास्तव में उसे स्वयं विश्वास नहीं आ रहा था कि उसने सचमुच अपनी राजमाता के बंगले को छोड़ दिया था।

नये मकान की सीढ़ियां चढ़ते हुए तेज काफी हैरान हुआ क्योंकि यह मकान काफी साफ-सुथरा और खुला था। उसका खयाल था कि निःसदेह वहां अंधेरा होगा, गन्दगी होगी और बहुत शोर-गुल होगा।

बाबा ने शायद उसके कमरों को झड़वा-धुलवाकर साफ करवा दिया था क्योंकि कमरे खूब चमक रहे थे। बिस्तर और सूटकेस को तेज ने कमरे की एक नुक्कड़ में रखवा लिया और स्वयं कमरे के आगे बढ़े हुए छज्जे पर खड़े होकर नीचे सड़क पर आते-जाते जन-समूह की ओर देखते हुए न जाने किन विचारों में खो गया।

"डाक्टर बाबू।" न जाने कितनी देर बाद तेज के कानों में बाबा की आवाज पड़ी।

"ओह···बाबा।" तेज ने जैसे हैरान होकर बाबा की ओर देखा। कमरे के फर्श की ओर देखा और कमरे में जलती हुई बिजली के प्रकाश के नीचे एक चारपाई पर बिछे हुए अपने बिस्तर को देखा।

बाबा कहीं से डाक्टर बाबू के लिए चारपाई ले आया था, उसका बिस्तर बिछा दिया था और सूटकेस पर एक कपड़ा बिछाकर खाने की थाली इस तरह रख दी जैसे डाक्टर बाबू आज उसका मेहमान हो।

तेज के हाथ कुछ हिचकिचाए लेकिन जब उसने बाबा के बुजुर्ग चेहरे की ओर देखा, उसके चेहरे पर अंकित चाव ने तेज को कुछ भी कहने न

दिया। उसने सोचा कि आज उसे बाबा का मेहमान बनना ही पड़ेगा, वह कभी ऐसा संकोच नहीं कर सकता कि जिससे ऐसे बुजुर्ग चेहरे का निरादर हो।

तेज ने चुपचाप खाना खा लिया। चुपचाप उसकी चारपाई स्वीकार कर ली लेकिन सोने से पहले वह अपनी राजमाता से मिले बिना न सो सका।

"मैं अभी आ जाऊंगा···" तेज ने कहा और अपनी राजमाता के बंगले की ओर चल दिया।

···दूसरी सुबह तेज की राजमाता आईं और तेज के दोनों कमरे पलंग, अलमारियों और मेज-कुर्सियों से भर गए। कमरों के साथ बने हुए रसोईघर में माताजी ने आवश्यकता के सब बरतन रखवाए, गुसलखाने में खूंटियां लगवाईं और फिर अपने पल्लू से अपनी दोनों आंखें पोंछकर हंस पड़ीं। हंसते-हंसते बोलीं:

"तेज, मैंने रसोईघर में सब बरतन रखवा दिए हैं; लेकिन यहां उस समय तक खाना नहीं पक सकता जब तक मैं स्वयं आकर नहीं पकाऊंगी···।"

"माताजी!" तेज का कंठ भर आया।

"तुम दोनों वक्त मेरे पास आकर खाना खाया करो···फिर जब वीणा का ब्याह हो जाएगा, तुम्हारी मां तुम्हारे पास आकर रहेगी।" और यह कहते-कहते राजवंती का गला भी भर आया।

कुछ ऐसे ही होता रहा। तेज के रसोईघर में खाना तो न पकता लेकिन बाबा उसके लिए चाय बनाता, डबल रोटी सेंकता और उसके सब छोटे-मोटे काम अपने हाथों से कर देता।

तेज हैरान था, संसार में सच भी बहुत था, झूठ भी बहुत था। अखबार बेचने वाले उससे प्यार करते थे और रमेश जैसे व्यक्ति अकारण ही उससे घृणा करते थे।

बाबा उसके लिए अपने बूढ़े हाथ-पैर चलाता था, तेज सोचता—भला उसे क्या पड़ी थी?

बाबा उससे एक पैसा तक न लेता था लेकिन बाबा की छाती में जैसा दिल था, तेज सोचता, वह किसी प्रकार के पैसे से खरीदा नहीं जा सकता।

अब तेज कई बार बाबा को 'जीवन बाबा' कहकर सम्बोधित करता था। उसमें इतना साहस नहीं था कि वह बाबा की किसी बात से इनकार

कर सके बल्कि कई बार किसी वस्तु की इच्छा प्रकट करके उसने देखा था कि उस दिन बाबा का चेहरा पहले से कहीं अधिक चमक उठता था।

एक दिन दोपहर को हस्पताल से आकर तेज अपने कमरे में सो गया। जीवन बाबा अभी अखबार बेचकर लौटा नहीं था कि तेज के कानों में डाकिये की आवाज़ पड़ी।

जीवन बाबा के नाम का एक मनीआर्डर था। तेज ने देखा, मनीआर्डर उस शहर की एक मासिक पत्रिका की ओर से था और मनीआर्डर फार्म के कूपन पर लिखा था 'फ़रवरी अंक में प्रकाशित आपके लेख का पारिश्रमिक'।

तेज ने डाकिये से लौटते समय पुनः आने को कहा और जब बापस अपने कमरे में आकर उसने पिछले महीनों की मासिक पत्रिकाओं को उलटते-पलटते उस पत्रिका के फ़रवरी अंक में एक लेख पर 'जीवनी' लिखा हुआ देखा तो उसके आश्चर्य की कोई सीमा न रही।

जीवन बाबा लौट आया था और जब डाकिये के पुनः आने पर जीवन बाबा ने मनीआर्डर वसूल कर लिया तो तेज ने जाकर जीवन बाबा के दोनों हाथ थाम लिए :

"बाबा···"

"डाक्टर बाबू।"

"बाबा, आपने मुझे कभी नहीं बताया कि आप इतने बड़े लेखक भी हैं—" तेज के मुंह से जीवन बाबा के लिए स्वयं ही 'तुम' से 'आप' निकल गया।

"डाक्टर बाबू!" जीवन बाबा मुस्कराए।

"लेकिन इतने बड़े लेखक होकर भी आप अखबार क्यों बेचते हैं?"

"योंही··· कई बार इन लोगों के पास लेखकों को देने के लिए पैसा नहीं होता···रोज़ का काम चलाने के लिए···" और जीवन बाबा चुप हो गया।

"नहीं बाबा···आप अखबार न बेचा करें···" तेज का स्वर बड़ा भावुकतापूर्ण था।

"पगला बेटा···मेहनत से काहे की शर्म!" जीवन बाबा ने तेज के झुके हुए कंधे पर हाथ रखा।

"कितना अच्छा मालूम होता है···आप मुझे बेटा ही कहा करें··· आप मुझे डाक्टर बाबू कहते रहे हैं···मैं आपको एक अखबार बेचने वाला

समझता रहा हूं···ओह! हमारे देश के लेखक! अखबार बेचने के लिए लगाई हुई हांक उन्हें पैसा दे सकती है लेकिन उनके हाथ में लिया हुआ कलम उन्हें पैसा नहीं दे सकता···" तेज बहुत भावुक हो रहा था।

"बेटा···" जीवन बाबा के होंठ कांपे और उनकी आंखों में आंसू उमड़ आए।

परछाईं

नीना की उदासियां अवर्णनीय थीं। अब तक उसके जीवन में केवल दो व्यक्ति ऐसे आए थे जिनके साथ बैठकर वह अपने दिल की बात कर सकती थी।

लेकिन अब नीना के भीतर कुछ ऐसी वेदना थी जो दोनों में से किसी के साथ बांटी न जा सकती थी। वीणा की खातिर समस्त वेदना को उसने अपने मन में डाल लिया था, उससे वह क्या कहती···कोई अन्य प्रकार की पीड़ा होती तो वह तेज के पास बैठती, उसके चौड़े-चिट्टे और पौरुष हाथों में अपने नन्हे-नन्हे कंपकंपाते हुए कोमल हाथ रखकर एक दीर्घ श्वास ले लेती और जो आंसू उसकी काली पलकों में कांप रहे होते, उन आंसुओं को जब तेज अपनी उंगलियों की पोरों से पोंछकर झटकता तो वह मुस्कराकर तारों का हंसता हुआ प्रकाश अपनी आंखों में भर लेती··· लेकिन अब तो उस वेदना की टीसें उसे दोनों ओर से तड़पा रही थीं।

वह सोचती, उसकी झोली में एक तेज था, एकमात्र तेज और अब उसने वीणा के आगे अपनी झोली उलट दी थी—अपना तेज उसे दे दिया था और अब उसकी झोली खाली हो गई थी, बिल्कुल खाली।

यह खालीपन उसकी आंखों में मूर्तिमान होकर बस गया। हर किसी ने देखा लेकिन जब तेज ने उसकी यह अवस्था देखी तो उसके भीतर कुछ जगा और उसका जी चाहा कि वह अपने-आप को नीना की आंखों में घोल दे···।

तेज आता, नीना के होंठ कांपते लेकिन उसकी वेदनाओं को निकलने का मार्ग न मिलता। तेज पूछ-पूछकर थक जाता लेकिन नीना कुछ न बताती। नीना की चुप्पी नीना के होंठों पर अंकित होकर रह गई थी।

नीना ने परछाइयों का एक आश्रय-सा बना लिया था। उसके लिए न तो दिन के प्रकाश से कोई फर्क पड़ता था न रात के अंधकार से। वह जहां कहीं बैठती, जहां कहीं खड़ी होती हमेशा एक परछाईं-सी उसके साथ लगी

रहती। उसके होंठ उसी प्रकार बन्द रहते। लेकिन वह पूरा-पूरा दिन उस परछाईं से बातें करने में गुज़ार देती। वह परछाईं उसकी हर बात का उत्तर देती, उसके आंसुओं को अपनी हथेलियों पर ले लेती, अपनी उंगलियों से उसके होंठों को हंसा देती और उसके शरीर को अपनी दोनों बांहों में भर लेती—वह परछाईं, वह मूर्ति हमेशा उसके साथ रहती।

नीना को उसकी उपस्थिति का अनुभव होता, उसे उसके स्पर्श का अनुभव होता और वह उसके नयन-नक्श भी पहचान लेती। तेज जैसे दो बुतों में जी रहा था, एक सबको नज़र आने वाले बुत में और दूसरे केवल नीना को दिखाई देने वाली परछाईं में।

नीना की बातें, नीना की हरकतें कुछ पागलों जैसी हो गईं। बैठे-बैठे वह आप ही आप हंसने लगती। वह सोचती कि जो तेज सब लोगों को दिखाई देता है, उस तेज को लोगों ने उससे छीन लिया है, लेकिन अब उसके पास एक ऐसा तेज है जो किसी अन्य को नज़र नहीं आता, उसे भला कोई कैसे छीनेगा। वह मेरे साथ रहेगा, हमेशा-हमेशा मेरे साथ रहेगा।

धीरे-धीरे नीना अपने तेज से भी दूर हो गई। पहले उसे ऐसा लगता था कि किसी दिन उसके बन्द होंठ खुल जाएंगे, उसकी ढकी-छुपी वेदनाएं नज़र आ जाएंगी, तेज के सम्मुख वह अपने सब दुःख-दर्द रख देगी लेकिन अब उसका भय दूर हो गया था। उसने अपनी कल्पनाओं का बुत खड़ा कर लिया था और अब वह अपने बनाए हुए उस बुत के साथ ही जीती थी, अपने उसी बुत के साथ जागती थी।

लेकिन नीना के पागलपन ने सबको परेशान कर दिया। यह सब कुछ जगन ने भी देखा, लेकिन वह कुछ समझ न पाया। इस बात से वह बहुत प्रसन्न था कि अब नीना तेज के उतनी करीब नहीं थी। उसे इस बात का विश्वास अवश्य था कि यदि कोई व्यक्ति नीना के हृदय में धड़कन की तरह समाया हुआ है तो वह तेज ही हो सकता है, अन्य कोई नहीं। हालांकि उसे इस बात का ज्ञान नहीं था कि नीना और तेज के बीच क्या कुछ हो गया था लेकिन उसने यह अवश्य देखा कि अब नीना तेज से बहुत दूर थी···बहुत दूर और वह प्रसन्न था।

पिछले महीनों में जगन बहुत अप्रसन्न रहा था लेकिन अब यद्यपि उसे कारण मालूम नहीं था फिर भी उसे ऐसा लगता था कि उसका मार्ग सरल होता जा रहा था। नीना का पागलपन उसे अच्छा न लगता था लेकिन वह नीना के हर बोल, हर हरकत को हंसकर सह लेता था। यह

का एक काबू था जो उसने बड़े प्रयत्नों से अपने आप पर प्राप्त
था।

नीना परछाइयों के साथ हंसती थी, परछाइयों के साथ खेलती थी
न डाक्टरों के मतानुसार उसके माता-पिता इस बात की कोशिश करते
कि उसे अधिक-से-अधिक सुन्दर वातावरण में रखा जाए। उसके साथी
प्रसन्नचित हों। घर में आने-जाने वालों में अधिकतर ये तीन ही थे—
णा, तेज और जगन। नीना यद्यपि अपने दिल में दृढ़ संकल्प कर चुकी
ी कि वह कभी तेज पर अपनी वेदनाएं प्रकट नहीं होने देगी और यद्यपि
उसकी परछाइयों ने उसके घावों पर नई कोरी पट्टियां बांधकर उन्हें ढक
लिया था फिर भी नीना को अपने रिसते हुए घावों पर इतना विश्वास नहीं
था कि वे पट्टियों को भिगोकर भी कभी अपनी पीड़ाएं प्रकट न होने देंगे।
वह कई बार देख चुकी थी कि तेज के पास बैठे-बैठे तेज और उसकी परछाइं
एक-दूसरे में घुल-मिल जाते थे। वह हाथ पसार-पसारकर देखती लेकिन
उसकी परछाइं उसे अलग खड़ी नजर न आती। वह शिथिल पड़ जाती,
निढाल हो जाती। वह तेज के पास से उठ खड़ी होती और जब फिर अकेली
रह जाती, उसका सहारा उसके पास आ जाता—उसे अपनी बांहों में लेता,
अपने साथ सटा लेता।

नीना को अपने साथी से बड़ी शिकायत थी, उसके दुःखों का साथी,
उसके सुखों का साथी, उसके भेदों को जानकर उसे सबसे बड़े खतरे के
समय अकेला छोड़ जाता था। उस समय वह अपना साथ न निभाता था।
उस समय वह जिसकी परछाइं था, उसी में विलीन हो जाता था और
नीना डरती थी कि वह उससे बातें करते-करते कहीं सचमुच तेज से न
कुछ कह दे इसलिए जहां तक उसका बस चलता था वह तेज के दोनों बुतों
को इकट्ठा न होने देती थी।

यह अवसर भी जैसे जगन के भाग्य ने ही उसे प्रदान किया था। बस
एक वही था जो सबसे अधिक नीना के संग रहता था। नीना के दिल
बहलावे के लिए कृष्णा देवी ने नीना के विवाह के बारे में सोचा और उनके
मन में जो पहली सोच उठी वह जगन के चेहरे पर से गुजरती हुई तेज के
चेहरे पर जा टिकी।

"नीना!" एक रात नीना और उसकी माता घर में अकेली थीं
उसके पिताजी कहीं शहर से बाहर गए हुए थे। शायद नीना को भी नं
नहीं आ रही थी और उसकी माता के मन में अपनी सोच रह-रहकर
उठा रही थी और आखिर उसने धीरे से पुकारा, "नीना!"

'मां।"

"नीना, आज मैं तुमसे एक बात करना चाहती हूं।" और वह उठकर नीना की चारपाई पर आ बैठी। के गर्मियों के अन्तिम दिन थे। वर्षा ऋतु समाप्त हो चुकी थी और कोठियों के बागों में थोड़ा-थोड़ा मच्छर पैदा हो गया था। नीना की चारपाई पर श्वेत मच्छरदानी तनी हुई थी। उगते हुए चांद का हल्का-हल्का प्रकाश मच्छरदानी के छोटे-छोटे छेदों में से होकर नीना के चेहरे पर पड़ रहा था। सफेद रंग और तीखे नयन-नक्श वाली नीना सोने के दूध जैसे श्वेत कपड़ों में चितलेटी हुई थी।

"मां!"

"मैं सब कुछ तुमसे पूछकर करूंगी नीना!"

"क्यों मां?"

"तुम्हारा ब्याह···" और मां अपनी नीना के माथे पर धीरे-धीरे हाथ फेरने लगी।

"ब्याह···?" नीना हक्की-बक्की रह गई।

"हां नीना···।"

"·····"

"जहां तुम कहोगी।"

"मां···" और नीना ने करवट बदलकर अपना चेहरा मां के हाथों में छुपा लिया।

"अभी तक मैंने तुम्हारे पिताजी से भी नहीं पूछा···लेकिन तुमसे पूछती हूं···तुम्हें तेज़ कैसा लगता है?" मां ने अधिक बातें बनाने की बजाय सीधा प्रश्न किया। तेज के सम्बन्ध में वह कई दिनों से सोच रही थी।

नीना के माथे में, मुंह में, हाथों और पैरों में जैसे बिजली-सी दौड़ गई। बिजली उसके रोम-रोम में चमकी। उसे ऐसा लगा कि प्रकाश का एक सैलाब उमड़ आया था, उसके दायें-बायें चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश था और उसकी अपनी आत्मा भी प्रकाश में घुल गई थी।

"नीना," मां की आवाज़ से नीना कुछ होश में आई। बिजलियों का प्रकाश अपने आकाशों में ही विलीन हो गया था। केवल उनका कम्पन अभी तक नीना के शरीर में था और अब उसकी आंखों के सामने काले स्याह अंधेरों का लसैाव उमड़ आया था।

जगन का एक काबू था जो उसने बड़े प्रयत्नों से अपने आप पर प्राप्त किया था।

नीना परछाइयों के साथ हंसती थी, परछाइयों के साथ खेलती थी लेकिन डाक्टरों के मतानुसार उसके माता-पिता इस बात की कोशिश करते थे कि उसे अधिक-से-अधिक सुन्दर वातावरण में रखा जाए। उसके साथी बड़े प्रसन्नचित हों। घर में आने-जाने वालों में अधिकतर ये तीन ही थे—वीणा, तेज और जगन। नीना यद्यपि अपने दिल में दृढ़ संकल्प कर चुकी थी कि वह कभी तेज पर अपनी वेदनाएं प्रकट नहीं होने देगी और यद्यपि उसकी परछाइयों ने उसके घावों पर नई कोरी पट्टियां बांधकर उन्हें ढक लिया था फिर भी नीना को अपने रिसते हुए घावों पर इतना विश्वास नहीं था कि वे पट्टियों को भिगोकर भी कभी अपनी पीड़ाएं प्रकट न होने देंगे। वह कई बार देख चुकी थी कि तेज के पास बैठे-बैठे तेज और उसकी परछाईं एक-दूसरे में घुल-मिल जाते थे। वह हाथ पसार-पसारकर देखती लेकिन उसकी परछाईं उसे अलग खड़ी नजर न आती। वह शिथिल पड़ जाती, निढाल हो जाती। वह तेज के पास से उठ खड़ी होती और जब फिर अकेली रह जाती, उसका सहारा उसके पास आ जाता—उसे अपनी बांहों में लेता, अपने साथ सटा लेता।

नीना को अपने साथी से बड़ी शिकायत थी, उसके दुःखों का साथी, उसके सुखों का साथी, उसके भेदों को जानकर उसे सबसे बड़े खतरे के समय अकेला छोड़ जाता था। उस समय वह अपना साथ न निभाता था। उस समय वह जिसकी परछाईं था, उसी में विलीन हो जाता था और नीना डरती थी कि वह उससे बातें करते-करते कहीं सचमुच तेज से न कुछ कह दे इसलिए जहां तक उसका बस चलता था वह तेज के दोनों बुतों को इकट्ठा न होने देती थी।

यह अवसर भी जैसे जगन के भाग्य ने ही उसे प्रदान किया था। बस एक वही था जो सबसे अधिक नीना के संग रहता था। नीना के दिल बहलावे के लिए कृष्णा देवी ने नीना के विवाह के बारे में सोचा और उनके मन में जो पहली सोच उठी वह जगन के चेहरे पर से गुजरती हुई तेज के चेहरे पर जा टिकी।

"नीन,!" एक रात नीना और उसकी माता घर में अकेली थीं। उसके पिताजी कहीं शहर से बाहर गए हुए थे। शायद नीना को भी नींद नहीं आ रही थी और उसकी माता के मन में अपनी सोच रह-रहकर सिर उठा रही थी और आखिर उसने धीरे से पुकारा, "नीना!"

'मां।"

"नीना, आज मैं तुमसे एक बात करना चाहती हूं।" और वह उठकर नीना की चारपाई पर आ बैठी। के गर्मियों के अन्तिम दिन थे। वर्षा ऋतु समाप्त हो चुकी थी और कोठियों के बागों में थोड़ा-थोड़ा मच्छर पैदा हो गया था। नीना की चारपाई पर श्वेत मच्छरदानी तनी हुई थी। उगते हुए चांद का हल्का-हल्का प्रकाश मच्छरदानी के छोटे-छोटे छेदों में से होकर नीना के चेहरे पर पड़ रहा था। सफेद रंग और तीखे नयन-नक्श वाली नीना सोने के दूध जैसे श्वेत कपड़ों में चितलेटी हुई थी।

"मां!"

"मैं सब कुछ तुमसे पूछकर करूंगी नीना!"

"क्यों मां?"

"तुम्हारा ब्याह···" और मां अपनी नीना के माथे पर धीरे-धीरे हाथ फेरने लगी।

"ब्याह···?" नीना हक्की-बक्की रह गई।

"हां नीना···।"

"·····"

"जहां-तुम कहोगी।"

"मां···" और नीना ने करवट बदलकर अपना चेहरा मां के हाथों में छुपा लिया।

"अभी तक मैंने तुम्हारे पिताजी से भी नहीं पूछा···लेकिन तुमसे पूछती हूं···तुम्हें तेज़ कैसा लगता है?" मां ने अधिक बातें बनाने की बजाय सीधा प्रश्न किया। तेज के सम्बन्ध में वह कई दिनों से सोच रही थी।

नीना के माथे में, मुंह में, हाथों और पैरों में जैसे बिजली-सी दौड़ गई। बिजली उसके रोम-रोम में चमकी। उसे ऐसा लगा कि प्रकाश का एक सैलाब उमड़ आया था, उसके दायें-बायें चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश था और उसकी अपनी आत्मा भी प्रकाश में घुल गई थी।

"नीना," मां की आवाज़ से नीना कुछ होश में आई। बिजलियों का प्रकाश अपने आकाशों में ही विलीन हो गया था। केवल उनका कम्पन अभी तक नीना के शरीर में था और अब उसकी आंखों के सामने काले स्याह अंधेरों का सैलाब उमड़ आया था।

नीना कांप उठी। वह अंधेरों के गहरे सागरों में वही चला आ रहा

नीना ने अपने हाथ पसारे, उसका आश्रय उसके पास नहीं आया, आज फिर उसे अकेला छोड़ गया था—उसका आश्रय भी क्या आश्रय था, ना के पांव कंपकंपाए, जो हर कठिन समय पर उसे छोड़-छोड़ चला ाता था।

"माता···जी···" नीना के मुंह से निकला और अगली बात उसके हृदय में ही रह गई। शायद वह यह कहने जा रही थी कि माताजी! आप यह क्या कह रही हैं? आप मेरे दोनों वुतों को एक बनाना चाहती हैं? आप नहीं जानतीं कि मैंने सौ-सौ यत्नों से दूसरा वुत गढ़ा है। अपने हाथों से मेरे कल्पना-महल को मत ढाइए। दोनों वुत एक हो जाएंगे और फिर कोई मुझसे वह वुत छीन लेगा। मेरे हाथों में कुछ भी नहीं रहेगा···माताजी··· माताजी···

"क्यों नीना?" मां ने नीना का सिर अपनी गोद में ले लिया। एक बार नीना ने अपना सिर उठाया, अपनी दोनों आंखें खोलीं। चांद का श्वेत प्रकाश जाली के छेदों में से गुजरकर मां के चेहरे पर पड़ रहा था।

नीना अपना आपा भूल गई। उसे लगा कि अंधेरों के सैलाब में से किसी परी ने उसका हाथ पकड़ लिया था। चांद की श्वेत किरणों ने उसके लिए एक चादर-सी बुन दी थी और वह परी उसके सिर पर वह चादर तान रही थी। परी के होंठ मुस्करा रहे थे और नीना के चेहरे को अपने हाथों में लेकर उसे वरदान दे रही थी।

नीना के भीतर एक उत्सुकता उत्पन्न हुई। यह वरदान···उस वरदान को दबोच लेने के लिए उसके हाथ फैले हुए थे; उसका रोम-रोम जैसे विछ जा रहा था।

नीना को दिखाई दिया कि सागर-तट की भीगी हुई रेत में उसके प घंसते चले जा रहे हैं। रेत ऊपर होती जा रही है और उसका शरीर नी और नीचे होता चला जा रहा है। सागर की लहरों में से एक निकलती है। वह उस परी से वरदान मांग रही है और परी उसे वरदा रही है लेकिन वह उस वरदान को पकड़ नहीं पा रही। रेत ऊपर और होती जा रही है और वह नीचे और नीचे···

"माताजी···!"

"नीना!"

"मेरा सांस घुटा जा रहा है···रेत!" और वह कहते-कहते चुप

नीना पागलों जैसी हरकतें जरूर करती थी लेकिन पागल जैसी बातें कभी न करती थी। उसकी मां सहम गई, बातें करना उसने छोड़ दिया और धीरे-धीरे नीना का माथा दबाने लगी।

नीना का अंग-अंग निढाल हो गया। जैसे उस पर मनों रेत पड़ गई हो। मां दबाती रही। चांद का प्रकाश नीना की चारपाई पर से परे हट गया। रात के अंधेरे में मां-बेटी एक-दूसरे के साथ सटी पड़ी रहीं।

जब उषा फूटी, मां ने देखा, नीना गहरी नींद में सो रही थी। वह धीरे से उठी और मच्छरदानी को उसी प्रकार तानकर कोठी के भीतर चाय तैयार करवाने के लिए चली गई।

नीना कभी इतनी देर तक नहीं सोई थी। लेकिन आज काफी रात तक वह सो नहीं सकी थी इसीलिए मां ने उसे जगाया नहीं।

मेज़ पर चाय रखवाकर, मां अभी तक नीना के जगने की प्रतीक्षा कर रही थीं कि तभी तेज आ गया।

"नीना अभी तक सो रही है।" मां ने हंसकर कहा।

"अभी तक सो रही है?"

"रात काफी देर तक जागती रही थी।"

"मैं जगा दूं···?" तेज ने पूछा।

"हां जगा दो···" मां ने कहा और तेज नीना को जगाने बाहर चला गया।

मच्छरदानी ने किसी हद तक दिन के प्रकाश को रोक रखा था और नीना बाईं करवट सोई पड़ी थी।

तेज काफी देर तक मच्छरदानी के पास खड़ा मच्छरदानी के पर्दे को उठाए नीना के चेहरे की ओर देखता रहा। वास्तव में कई महीने हो गए थे, तेज कभी जी भरकर नीना के पास नहीं बैठा था। नीना कभी ऐसे अडोल नहीं खड़ी हुई थी कि तेज उसके चेहरे की ओर दो मिनट तक भी देख सके। इस समय नीना को उसके पास से जाने की जल्दी नहीं थी। उसे इस बात की खबर तक नहीं थी कि कौन उसके पास खड़ा उसकी ओर टकटकी बांधे देख रहा था।

तेज बचपन में नीना के साथ खेलता रहा था। नीना के हाथों को उसने सैकड़ों बार छुआ होगा और सैकड़ों बार उसने नीना से हंसी-मज़ाक किया होगा, रूठा होगा, मना होगा लेकिन आज तेज को उन समस्त दिनों से कुछ अलग प्रकार का अनुभव हो रहा था। वह नीना से हाथ-भर दूर खड़ा था और नीना के बदन से कोई चीज़ उठ-उठकर उसके बदन में उतरती जा

रही थी।

तेज के मन में कभी दुविधा उत्पन्न नहीं हुई थी। एक समय से वह जानता था कि वह अपने हृदय के पूरे वेग के साथ नीना से प्रेम करता था लेकिन आज का अनुभव उसे बेतरह परास्त कर रहा था।

सोई हुई नीना के चेहरे पर जाने क्या था कि तेज पर एक नशा-सा छाता चला जा रहा था। कुछ क्षणों तक उसी प्रकार निश्चेष्ट खड़े रहने के बाद तेज के कीले हुए हाथों में हरकत पैदा हुई। उसने नीना के कोमल हाथ को अपने हाथ में लिया।

हाथ को हाथों में ले लेना आसान था लेकिन हाथों में से छोड़ देना बहुत कठिन था। नीना के सोए हुए शरीर में एक लहर-सी उत्पन्न हुई और जब उसकी आंखें खुलीं, उसकी नजरों के सामने उसका तेज था।

न जाने रात-भर नीना क्या-क्या सपने देखती रही थी और न जाने उसकी आंखों के सामने कौन-सा वरदान फूलता-फलता रहा था। नीना का चेहरा ओस से धुले हुए फूल जैसा स्वच्छ और उज्ज्वल हो उठा। उसके सपनों की परी ने सचमुच उसके हाथों पर उसका वरदान रख दिया।

क्षण-भर में ही नीना और तेज की आंखों में सपनों के सुन्दर महल खड़े हो गए।

महलों के सुनहले कंगूरे चमके और नीना ने अत्यन्त उत्सुकता के साथ महल की सुनहली दीवारों में अपने-आप को छुपा लेना चाहा···लेकिन··· नीना की नजरें डोल गईं···उसके महल की सुनहली दीवारें कांप रही थीं··· उसके महल की सुनहली छतें कांप रही थीं···और उसके महल के कंगूरे टूट-टूटकर गिर रहे थे···नीना एक चीख मारकर गिर पड़ी।

तेज घबरा गया। नीना की मां आई, वह भी घबरा गई। नीना ने निढाल होकर अपने दोनों हाथ पसारे, तेज घंटों उसके पास बैठा करता था लेकिन नीना का कल्पित तेज जैसे उसे सदा के लिए छोड़ गया था। तेज और उसकी परछाईं एक हो गए थे। नीना के आश्रय ने उसका साथ छोड़ दिया था। नीना के चेहरे पर से सुन्दर फूलों के सब रंग उतर गए।

बदला

नीना के होंठ बेल से टूटी हुई पत्तियों जैसे मुर्झा गए थे लेकिन अब भी उसे एक भय था कि जिन बोलों को वह संभाल-संभालकर थक गई थी,

वे अब भी एक आवाज़ के रूप में उसके मुर्झाए हुए होंठों पर कंपकपा उठते थे। उसे भय था कि किसी दिन एक आवाज़ उसके होंठों से निकल पड़ेगी। वह एक प्रकार के रूप में तेज के पास जाएगी, एक फरियाद बनकर तेज को बुलाएगी।

जगन सोच-सोचकर थक गया लेकिन उसे नीना की थाह नहीं मिलती थी। इतना ज़रूर हो गया था कि वह प्रतिदिन घण्टों नीना के साथ रहता था। नीना को बाहर ले जाता था, सैर कराता, खेल-तमाशे दिखाता और जहां तक संभव होता उसकी हर छोटी-बड़ी इच्छा को पूरा करता था। इसके लिए नीना भी उसकी कृतज्ञ थी। वह बड़ी शिथिल थी, अकेली और डावांडोल थी। वह बार-बार जगन पर अपनी कृतज्ञता प्रकट करती कि उसने अपना समय नष्ट करके उसके लिए बहुत कुछ किया था। नीना के माता-पिता भी जगन को उसकी इन कृपाओं के लिए धन्यवाद देते थे।

बीते दिनों की हार रह-रहकर जगन के हृदय में चुभती थी लेकिन उसने प्रतीक्षा और सन्तुष्टि के दो शब्द ऐसे पढ़े थे कि जिन्हें वह पूरी तरह व्यवहार में ला रहा था। नीना उदास होती, वह नीना से उसकी उदासी का कारण तो न पूछता लेकिन उसे कोई ऐसा खेल खिलाने लगता, कोई ऐसी बात शुरू कर देता कि नीना का मन बहल जाता। शुरू-शुरू में वह नीना से तेज के सम्बन्ध में कोई तीखी बात कह दिया करता था, उससे कई छोटे-छोटे व्यक्तिगत प्रश्न पूछता था, उसे कहीं आने-जाने से टोक देता था और उसे अनुभव हुआ था कि नीना उससे दूर से दूरतर होती जा रही थी। अब जगन ने तेज के बारे में कभी कोई बात न की थी, कभी नीना की ओर संदेहयुक्त नज़रों से नहीं देखा था, कभी किसी बात से उसे रोका नहीं था और अब उसे अनुभव हो रहा था कि नीना पर उसके अधिकार आप ही आप बढ़ रहे थे। लेकिन उसने नीना पर कोई अधिकार जताने की कोशिश नहीं की थी।

वह नीना को नदी पार के खेतों में ले जाता, खेतियां और कुएं दिखाता, मटर तोड़कर देता और जब कभी कोई नाला पार करना होता, वह धीरे से अपना हाथ बढ़ा देता। शुरू-शुरू में नीना को झिझक होती थी, वह उसका बढ़ाया हुआ हाथ नहीं थामती थी और वह मुस्कराकर चुपचाप अपना हाथ खींच लेता था। लेकिन अब कई बार नीना उसका हाथ थाम लेती थी और वह उसे एक हल्का-सा सहारा दे देता था।

जगन का व्यवहार बहुत अच्छा था और नीना को इस बात का बहुत सन्तोष था।

"मैं आपका बहुत-सा समय नष्ट कर देती हूं।" कभी-कभी नीना कहती। जगन की बातचीत नीना जैसी कोमल नहीं होती थी और उसे इस बात का अनुभव भी था। उसे यह भी याद था कि कुछ मास पूर्व नीना ने कभी उसकी बातों में दिलचस्पी नहीं ली थी और कई बार उसके सामने तेज की प्रशंसा की थी। यह सोचकर वह कभी नीना के साथ लम्बी बातों में नहीं पड़ता था। वह हंसकर, मुस्कराकर नीना की हर बात मान लेता। नीना को भी किसी ऐसे ही साथी की आवश्यकता थी जो उसे जानने-कुरदने की कोशिश न करे और केवल कुछ समय उसके साथ बिताए।

वीणा भी उससे मिलती थी लेकिन वीणा से मिलना उसके लिए कठिन नहीं था। वीणा के सामने अपने मन पर काबू पा लेना उसे बहुत सहल मालूम होता था। बल्कि उसे एक प्रकार का आनन्द-सा प्राप्त होता था कि चाहे उसे अपनी जीती हुई बाजी हारनी पड़ी थी लेकिन अपनी हार के बदले में उसने वीणा को जीत खरीदकर दी थी और वीणा की जीत उसकी खरीदकर दी हुई जीत थी। वह राजवन्ती से प्यार करती थी, वीणा से प्यार करती थी, वर्षों तक वह उस घर में अतिथिस्वरूप रही थी। उसने सदा उस घर में से लिया ही लिया था और अब उसे इस बात का मान था कि वह उस घर को कुछ दे भी सकती है।

वीणा उसे बताती थी कि जब उसका विवाह तेज से हो जाएगा, रमेश भाई के टाले हुए सब झगड़े आप ही आप मिट जाएंगे। फिर तेज को एक छोटा-सा कमरा किराये पर लेकर रहने की आवश्यकता नहीं रहेगी। वह पूरे हस्पताल का मालिक होगा। फिर उस घर की खोई हुई प्रसन्नताएं आ जाएंगी···और नीना ये बातें सुनते-सुनते अपने मन में सोचती कि उस घर की प्रसन्नताओं को वापस लाने में उसका कितना बड़ा हाथ था।

नीना के मन में ऐसे भरपूर क्षण भी आते, उसे अपना बलिदान अच्छा मालूम होता, अपने आंसू, अपने रतजगे और अपनी वेदनाएं अच्छी लगतीं···लेकिन फिर जिस समय उसकी नजरों के सामने तेज का चेहरा आता, उसका भरापन खाली हो जाता, उसका साहस छूट जाता, उसके आंसू उबल पड़ते और उसके दिल में एक कसक-सी उठती थी कि जब तेज का विवाह होगा, वह विवाह के हर छोटे-से-छोटे कार्य को देखेगी, अपने सामने वह अपने अधिकारों को एक-एक करके समाप्त होते देखेगी। उसकी नहनशीलता धरी की धरी रह जाएगी। उस समय उसके होंठों से एक आवाज निकल पड़ेगी। एक पुकार बनकर वह तेज के पास जाएगी। एक फरियाद बनकर वह तेज को बुलाएगी···।

शहर का शोर-गुल बहुत दूर था। नहर से भी तीन-एक मील दूर और खेतों की हरियाली फैली हुई थी और एक सन्ध्या को नीना एक की मेड़ पर बैठी हुई थी। उसके मन में विचित्र प्रकार की उथल-पुथल हुई थी और कुछ हाथ की दूरी पर जगन चुपचाप बैठा था और मग फर्लांग-भर की दूरी पर नीना की गाड़ी खड़ी थी।

तेज शायद मीलों दूर था और सूरज की दूरी का तो कोई ठिकाना ही ं था लेकिन तेज जैसे नीना के भीतर बैठा हुआ था और सामने आकाश ग्रस्त होते हुए सूरज की लालिमा चारों ओर रंग बिखेर रही थी। नीना मन में तरह-तरह के विचार उठ रहे थे, मिट रहे थे।

"नीना।" धीरे से जगन ने आकर कहा।

"जी।" नीना एकदम चौंककर बोली।

जगन के हाथ में सुर्ख रंग का गुलाब का एक फूल था, जिसे उसने नीना के हाथ में दे दिया। फूल नीना की उंगलियों में अटका रहा, अस्त होते हुए सूरज की लालिमा गुलाब के फूल जैसी सुर्ख थी जो इस समय नीना के चेहरे पर फैली हुई थी।

नीना का मस्तिष्क कई वर्ष पीछे की ओर चला गया। नीना ने देखा कि वह तेज का लिखा हुआ नाटक खेल रही थी। तेज उस समय सतीश बना हुआ था और वह सतीश की शीला बनी हुई थी। सतीश जेल की सलाखों के पीछे खड़ा था, उसकी शीला उसे मिलने आई थी। उसके हाथों में गुलाब का एक फूल था जो वह हर मुलाकात पर सतीश की कमीज में लगाया करती थी···और नीना ने गुलाब का फूल अपने तेज की कमीज में लगाने को हाथ आगे बढ़ाया···।

जगन ने नीना के दोनों हाथ अपने हाथों में ले लिए। नीना ने घबरा-कर जब चेहरा ऊपर उठाया, गुलाब का फूल जगन की कमीज में लगा हुआ था और जगन की आंखों में आज वह कुछ था जो नीना ने इससे पहले कभी न देखा था। नीना टूटी हुई बेल की तरह शिथिल पड़ गई।

जगन ने नीना को दोनों बांहों में थाम लिया लेकिन नीना को लगा जैसे उसकी बांहों में अभी उसका दम घुट जाएगा। वह होश में आ गई उसने अपने-आप को संभाल लिया।

"धन्यवाद! अब मैं ठीक हूं।" नीना ने कहा।

"मेरा जी चाहता है, नीना! तुम सारी आयु इसी तरह रहो और तुम्हें सारी आयु इसी तरह संभाले रहूं।" जगन ने धीमे स्वर में कहा। समय जगन की मुखाकृति से प्रतीत होता कि उसे सचमुच नीना से

र हो गया था या किसी पुस्तक में पढ़ा हुआ प्यार का एक वाक्य उसने
च्छी तरह याद कर रखा था।
"जगन !" नीना कंपकंपा उठी।
"नाराज मत हो नीना ! मैं..." और वह इससे आगे कुछ न कह
सका।
नीना एक दीर्घ स्वास भरकर चुप हो गई। उस समय उसका जी
चाहा कि वह ऊँचे स्वर में रोने लगे...इतना रोए...इतना रोए कि वह
पूरी की पूरी अपने आंसुओं में घुलकर बह जाए।
फिर किसी रात के घोर अंधकार में नीना को दिखलाई दिया कि जगन
अपने हाथ पर एक दीपक लिए उसे मार्ग दिखा रहा था।
नीना का भय उसे भीतर ही भीतर खाए जा रहा था कि किसी न
किसी कमजोर घड़ी में उससे वह कुछ हो जाएगा जो होना नहीं चाहिए।
उसके मुंह से वे शब्द निकल जाएंगे जो न निकलने चाहिए। वह, वह कुछ
कर देगी जो करना नहीं चाहिए...और अगर...अगर कुछ हो गया...
तो वह हमेशा-हमेशा के लिए वीणा से लज्जित हो जाएगी...तेज के सुखों को...और वह भी अपने हाथों
माता की देनदार हो जाएगी...तेज के सुखों को...और वह भी अपने हाथों
वह कैसे बर्बाद कर सकती थी।
नीना ने जगन के दिखाए हुए मार्ग में से अपना मार्ग देखना शुरू
किया। नीना सोचती, वह जगन से विवाह कर लेगी, फिर इस समय जो
भावनाएं उसके बस नहीं आती थीं, उन्हें बस में रखने के लिए पूरे समाज
के हाथ उसकी सहायता करेंगे। वह वीणा और तेज से पहले अपना विवाह
कर लेगी। उसकी सोचों को और उसके बोलों को एक थाह मि
जाएगी। फिर उसके बलिदान को कोई खतरा नहीं रहेगा। फिर व
जो कुछ वीणा को देना चाहती थी, स्वयं उसके हाथ भी उसे देने
नहीं रोक पाएंगे। वह वीणा से लज्जित नहीं होगी, वह राजमाता
देनदार नहीं बनेगी, अपने हाथों वह अपने तेज के सुखों को बर्बाद
करेगी...।
जो विचार नीना के पीछे पड़े हुए थे, उनके आगे भागते-भागते
वह थक चुकी थी। जगन एक ठौर बनकर उसके सामने आ खड़ा
था। नीना ने उस ठौर को अपना लिया।
...जगन हैरान था, परेशान था। न जाने भगवान् उस प
ख्याल किस तरह हो गए थे। नीना ने उससे विवाह करने के लिए
दी थी और केवल इतना ही नहीं, वह मंत्रों द्वारा कीले हुए बुत

उसके इशारों पर चलने लगी थी।

जगन समझ नहीं पा रहा था कि उसके बोलों में कौन जादू जाग उठे थे कि वह जो कुछ भी कहता था, नीना मान लेती थी। वैसे एक प्रकार से उसे पूरा विश्वास था कि नीना उससे प्रेम नहीं करती।

···शगुन का सेहरा जब नीना के गले में पड़ा, नीना ने फूलों के असह्य बोझ के सामने अपना सिर झुका दिया। घर-भर में गीतों और बधाइयों के बोल गूंज रहे थे लेकिन नीना के कान जैसे बहरे हो गए थे और होंठ गूंगे। कल से नीना ने तिनका तक तोड़कर मुंह में नहीं डाला था और अब शगुन की मिठाई उसके कण्ठ से नीचे नहीं उतर रही थी।

नीना जब अपने कमरे में लौटी, सन्ध्या के धूमिल प्रकाश में उसने देखा कि तेज कमरे की खिड़की में खड़ा उसकी प्रतीक्षा कर रहा था।

नीना के पांव जैसे पत्थर होकर रह गए और जो नजरें उसने तेज के चेहरे पर डालीं, वे जैसे वहीं जमकर रह गईं।

तेज का चेहरा बुझे हुए ताम्र जैसा हो गया था। वह शायद नीना को बधाई देने आया था लेकिन अब उससे बोला नहीं जा रहा था। नीना के गले में शगुन का हार ज्यों का त्यों पड़ा था और तेज के हाथ में पकड़ी हुई मिठाई की प्लेट ज्यों की त्यों पकड़ी हुई थी।

रक्तप्रवाह में एक चेतना जगी और तेज के होंठों पर जीवन का सबसे बड़ा उलाहना खड़ा हुआ।

"बधाई हो।" तेज के होंठों से निकला और उसने मिठाई का एक टुकड़ा नीना के मुंह की ओर बढ़ाया।

नीना ने चुपचाप मिठाई खा ली। शायद तेज की उंगलियां भी उसके होंठों से छू गई थीं, उसके शरीर में एक कम्पन-सा लहरा गया। उसके दोनों हाथ हिले और गले से शगुन का वह हार उतारकर वह तेज के पैरों की ओर···

लेकिन उसी क्षण वह संभल गई और वह सब न कर पाई जो करने जा रही थी। तेज चला गया। सन्ध्या का धूमिल प्रकाश और भी धूमिल हो गया था। नीना ने अलमारी खोली और हाथ में लिया हुआ हार तेज के चित्र के सामने रख दिया।

धूमिल प्रकाश में धीरे-धीरे किसी ने अंधेरा घोल दिया। कमरे में खड़ी नीना को अपना पसारा हुआ हाथ नजर नहीं आ रहा था लेकिन वह उस चित्र के सामने, और चित्र के सामने रखे हुए अपने हार के सामने ज्यों की त्यों खड़ी थी।

किसी ने कमरे की बिजली जगाई। आने वाला जगन था। आज से जगन इस घर का जमाई था, लेकिन प्रतिदिन आने की आदत आज भी उसे यहां ले आई थी।

नीना ने न तो अपना सिर उठाया, न अलमारी बन्द की और न स्वयं वहां से हिली। जगन ने देखा कि नीना का हार तेज के चित्र के सामने पड़ा था।

"नीना, मुझे पहले ही मालूम था कि तुम तेज से प्रेम करती हो।" यह कहकर वह नीना के पास जा खड़ा हुआ।

नीना ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"मुझे बताओ नीना, तुमने तेज से क्यों ब्याह नहीं किया?" जगन ने पुनः बड़ी संभली हुई आवाज में पूछा।

"मैं उससे ब्याह नहीं करना चाहती।" नीना का अपनी आवाज पर पूरा काबू था।

"या वह नहीं करना चाहता?" इस बार जगन के स्वर में कुछ तीखापन था।

"एक ही बात है," नीना ने धीमे स्वर में कहा।

"लेकिन तुमने मुझे यह क्यों नहीं बताया नीना, कि तुम मुझे नहीं चाहतीं!" जगन का स्वर अब भी तीखा था।

"क्योंकि आप जानते थे।" अपने उसी स्वर में नीना ने उत्तर दिया।

इस बार जगन ठिठका। उसे अनुभव हुआ कि नीना सच कह रही थी। सचमुच उसे मालूम था कि नीना को उससे प्रेम नहीं था और उसे यह भी मालूम था कि वह तेज को चाहती थी।

"आप जानते हैं कि मैंने आपसे कभी प्रेम नहीं किया। आप यह भी जानते हैं कि मुझे तेज से प्रेम है। मैं कभी किसी के सामने झूठ नहीं बोलूंगी। सब कुछ जानते हुए भी आपने मुझसे विवाह के लिए कहा और मैंने स्वीकार कर लिया।" नीना चुप हो गई लेकिन जिस स्वर में नीना ने यह सब कहा था वह स्वर जगन के लिए एक फुंकार से कम न था।

"आज जो अधिकार मैं आपको दे रही हूं, वे कभी किसी दूसरे को प्राप्त नहीं होंगे। लेकिन मैं चाहती हूं आज आपको सब कुछ मालूम हो जाए ताकि आप फिर कभी मुझे उलाहना न दें।" नीना में न जाने ऐसा बल कहां से आ गया था।

कई महीने से जगन के भीतर एक धुआं-सा सुलग रहा था। उसने नीना की प्रत्येक बात मानी थी लेकिन उसे नीना के प्रति सहानुभूति कभी

न हुई थी। उसने नीना से विवाह करने का एक प्रण तो कर रखा था लेकिन उसे कभी नीना से प्रेम न हुआ था। हार-हारकर भी जगन आज जीत के रास्ते पर खड़ा था और जगन ने सोचा कि इस दोराहे पर आकर वह हार के मोड़ की ओर नहीं मुड़ सकता। वह अपना प्रण पूरा करेगा। वह एक बदला लेगा।

महीनों के परिश्रम द्वारा कमाए हुए सन्तोष और प्रतीक्षा के शब्दों को उसने स्मरण किया और हंसकर कमरे में से चला गया।

शहनाई

शहनाइयां बज उठीं। अभी तक नीना ने अपने हृदय के तारों को अपनी सहनशीलता के दोनों हाथों से दबा रखा था लेकिन घर आती हुई बरात का शोर इतना ऊंचा था कि नीना की सहनशीलता जाती रही। उसके हृदय के सूक्ष्म तारों में जो राग सोया पड़ा था, उस राग के सारे सुर जाग उठे···

नीना उन जागे हुए सुरों से भयभीत हो गई। उसे भय हुआ कि अभी उन सुरों में से वह संगीत फूट निकलेगा जिसे गाने के लिए अब उसके कण्ठ में कोई स्वर बाकी न रहा था···।

उसे इच्छा हुई कि वह केवल शहनाई की आवाज़ सुन सके जिसमें वह अपने दिल की सब आवाज़ों को भूल जाए लेकिन उसके मस्तिष्क से ऐसी आवाज़ निकलकर उसके कानों में पड़ रही थी और प्रतिक्षण तीव्र से तीव्रतर हो रही थी कि वह सोचने लगी, अभी यह आवाज़ इतनी तीव्र हो उठेगी कि लोग शहनाई की आवाज़ भी न सुन पाएंगे···।

नीना ने अपने बदन के लाल जोड़े की ओर देखा और महसूस किया कि उसमें से एक सेंक-सा निकल-निकलकर उसके माथे को चढ़ रहा था। उसके माथे पर पसीने की बूंदें आ गईं और वह घबराकर अपने कमरे का दरवाज़ा बन्द करके अपने पलंग पर जा बैठी।

कमरे का अंधेरा और भी गहरा हो गया। बन्द दरवाज़ों के कारण नीना के जोड़े का लाल रंग अंधेरे ही में घुल गया और शहनाई की ऊंची आवाज़ को भी दरवाज़ों ने बाहर ही रोक दिया। उसने शान्ति का सांस लिया।

फिर वह उठी, अपनी अलमारी को खोला और दाएं हाथ से टटोल-टटोलकर एक चित्र निकाला।

कसी ने कमरे की बिजली जगाई। आने वाला जगन था। आज से
इस घर का जमाई था, लेकिन प्रतिदिन आने की आदत आज भी
यहां ले आई थी।
नीना ने न तो अपना सिर उठाया, न अलमारी बन्द की और न स्वयं
से हिली। जगन ने देखा कि नीना का हार तेज के चित्र के सामने पड़ा
।
"नीना, मुझे पहले ही मालूम था कि तुम तेज से प्रेम करती हो।" यह
हकर वह नीना के पास जा खड़ा हुआ।
नीना ने कोई उत्तर नहीं दिया।
"मुझे बताओ नीना, तुमने तेज से क्यों ब्याह नहीं किया?" जगन ने
पुनः बड़ी संभली हुई आवाज में पूछा।
"मैं उससे ब्याह नहीं करना चाहती।" नीना का अपनी आवाज पर
पूरा काबू था।
"या वह नहीं करना चाहता?" इस बार जगन के स्वर में कुछ
तीखापन था।
"एक ही बात है," नीना ने धीमे स्वर में कहा।
"लेकिन तुमने मुझे यह क्यों नहीं बताया नीना, कि तुम मुझे नहीं
चाहतीं!" जगन का स्वर अब भी तीखा था।
"क्योंकि आप जानते थे।" अपने उसी स्वर में नीना ने उत्तर दिया।
इस बार जगन ठिठका। उसे अनुभव हुआ कि नीना सच कह रही
थी। सचमुच उसे मालूम था कि नीना को उससे प्रेम नहीं था और उसे यह
भी मालूम था कि वह तेज को चाहती थी।
"आप जानते हैं कि मैंने आपसे कभी प्रेम नहीं किया। आप यह भी
जानते हैं कि मुझे तेज से प्रेम है। मैं कभी किसी के सामने झूठ नहीं
बोलूंगी। सब कुछ जानते हुए भी आपने मुझसे विवाह के लिए कहा और
मैंने स्वीकार कर लिया।" नीना चुप हो गई लेकिन जिस स्वर में नीना
ने यह सब कहा था वह स्वर जगन के लिए एक फुंकार से कम न था।
"आज जो अधिकार मैं आपको दे रही हूं, वे कभी किसी दूसरे को
प्राप्त नहीं होंगे। लेकिन मैं चाहती हूं आज आपको सब कुछ मालूम हो जाए
ताकि आप फिर कभी मुझे उलाहना न दें।" नीना में न जाने ऐसा बल
कहां से आ गया था।
कई महीने से जगन के भीतर एक धुआं-सा सुलग रहा था। उस
नीना की प्रत्येक बात मानी थी लेकिन उसे नीना के प्रति सहानुभूति क

न हुई थी। उसने नीना से विवाह करने का एक प्रण तो कर रखा था लेकिन उसे कभी नीना से प्रेम न हुआ था। हार-हारकर भी जगन आज जीत के रास्ते पर खड़ा था और जगन ने सोचा कि इस दोराहे पर आकर वह हार के मोड़ की ओर नहीं मुड़ सकता। वह अपना प्रण पूरा करेगा। वह एक बदला लेगा।

महीनों के परिश्रम द्वारा कमाए हुए सन्तोष और प्रतीक्षा के शब्दों को उसने स्मरण किया और हंसकर कमरे में से चला गया।

शहनाई

शहनाइयां बज उठीं। अभी तक नीना ने अपने हृदय के तारों को अपनी सहनशीलता के दोनों हाथों से दबा रखा था लेकिन घर आती हुई बरात का शोर इतना ऊंचा था कि नीना की सहनशीलता जाती रही। उसके हृदय के सूक्ष्म तारों में जो राग सोया पड़ा था, उस राग के सारे सुर जाग उठे···

नीना उन जागे हुए सुरों से भयभीत हो गई। उसे भय हुआ कि अभी उन सुरों में से वह संगीत फूट निकलेगा जिसे गाने के लिए अब उसके कण्ठ में कोई स्वर बाकी न रहा था···।

उसे इच्छा हुई कि वह केवल शहनाई की आवाज़ सुन सके जिसमें वह अपने दिल की सब आवाज़ों को भूल जाए लेकिन उसके मस्तिष्क से ऐसी आवाज़ निकलकर उसके कानों में पड़ रही थी और प्रतिक्षण तीव्र से तीव्रतर हो रही थी कि वह सोचने लगी, अभी यह आवाज़ इतनी तीव्र हो उठेगी कि लोग शहनाई की आवाज़ भी न सुन पाएंगे···।

नीना ने अपने बदन के लाल जोड़े की ओर देखा और महसूस किया कि उसमें से एक सेंक-सा निकल-निकलकर उसके माथे को चढ़ रहा था। उसके माथे पर पसीने की बूंदें आ गईं और वह घबराकर अपने कमरे का दरवाज़ा बन्द करके अपने पलंग पर जा बैठी।

कमरे का अंधेरा और भी गहरा हो गया। बन्द दरवाज़ों के कारण नीना के जोड़े का लाल रंग अंधेरे ही में घुल गया और शहनाई की ऊंची आवाज़ को भी दरवाज़ों ने बाहर ही रोक दिया। उसने शान्ति का सांस लिया।

फिर वह उठी, अपनी अलमारी को खोला और दाएं हाथ से टटोल-टटोलकर एक चित्र निकाला।

"तेज···तेज···" नीना का स्वर बिलख उठा, "तेज···देखो मेरे पैर डोल रहे हैं···मेरे, हाथ कांप रहे हैं···मेरे सिर को न जाने क्या हुआ जा रहा है···तेज मैं गिर पड़ूंगी···मुझे अपने हाथों से थाम लो···तेज···" और नीना के डोलते पैरों को, कांपते हाथों को और घूमते हुए सिर को सचमुच किसी ने पीछे से आकर थाम लिया।

"कौन ?"

"जिसे तुमने पुकारा है।"

"तेज ?"

"हां।"

"तेज, तुम यहां क्यों आए हो ?"

"तुम ही ने मुझे आवाज दी है नीना !"

"मैं···नहीं तेज, मैंने तुम्हें आवाज नहीं दी थीं।"

"अभी तुमने मुझे कई आवाजें दी थीं।"

"नहीं···वह तो···"

"वे आवाजें मुझे नहीं, तुमने मेरे चित्र को दी हैं···है ना ?

"हां।"

"नीना !"

"तुम्हें मेरी कोई आवाज नहीं सुननी चाहिए तेज !"

"नीना !"

"तुम किनारे पर खड़े हो तेज !"

"और तुम ?"

"इन किनारों से आज मेरे सब नाते टूट गए हैं।"

"नीना !"

"और चप्पुओं से भी सब नाते टूट गए हैं।" नीना का स्वर बड़ा भावुक हो गया।

"नीना !"

"तेज, आज भी हर सोहनी* के पैरों के आगे वही चनाब बहती है।"

"लेकिन इन चनाबों को पार करने के लिए अभी मेरी दोनों बांहें काफी हैं नीना।"

* पंजाब की एक लोककथा की नायिका जो अपने प्रेमी से मिलने के लिए घड़े द्वारा चनाब नदी पार किया करती थी और एक दिन नदी में डूब गई थी।

"तेज !"

"हां !"

"तुम्हारी बांहें सदा सावुत रहें···लेकिन तेज, ये बांहें मुझे सहारा देने के लिए नहीं बनीं।"

"ये बांहें अगर तुम्हारा सहारा बन सकें नीना···तो इन्हें दुनिया की और कोई दौलत नहीं चाहिए।"

"पर अब तो पानी भयानक लहरें बन गया है और पवन आंधियों में बदल गई है तेज।"

"मैं तूफानों से भी लड़ सकता हूं नीना।"

"संसार पहले मिलन देखता है तेज, और फिर जुदाइयां। मैंने पहले दिन से ही जुदाइयों का मुंह देखा है और जीवन के अंतिम श्वास तक जुदाइयों ही का मुंह देखती रहूंगी।"

"नीना !"

"भाग्य को बदलना बड़ा कठिन होता है तेज।"

"नीना ! यह सब तुमने क्या कर दिया है ?"

"मैं अभागिन भला क्या कर सकती हूं···"

"नीना !"

"तुम मेरे सामने इस तरह क्यों कहती रही हो नीना, कि तुम्हें जगन से प्रेम है···"

"मैंने यह कभी नहीं कहा तेज···मैंने तो केवल यह कहा था कि मैं उससे ब्याह करूंगी···और मैंने झूठ नहीं कहा तेज···तुम्हारी नीना कभी झूठ नहीं बोल सकती···"

"तुमने अपने-आपसे झूठ बोला है नीना।"

"झूठ नहीं बोला। केवल आज अपने शरीर से अपनी आत्मा को चीरकर अलग किया है।"

"लेकिन क्यों ?"

"मेरा भाग्य कहता था।"

"नीना !"

"डाल से अलग पत्ता भी तोड़ें तो उसमें से पानी रिसने लगता है, मैं तो फिर भी इंसान हूं···और शायद मेरी आंखों से यह पानी हमेशा रिसता रहेगा···"

"तुम्हें यह सहारा अच्छा नहीं लगता नीना। देखो मेरी बांहों ने तुम्हें किस तरह लपेट रखा है।"

"तेज, भगवान से मांगो कि इस समय तुम्हारी बांहों में ही मेरे प्राण
कल जाएं।"
"लेकिन नीना···ये बांहें तुम्हारे लम्बे जीवन को भी लपेटकर रख
कती हैं।"
"नहीं तेज।"
"तुम्हें इन बांहों पर विश्वास नहीं?"
"विश्वास? मुझे केवल इन्हीं बांहों पर विश्वास है तेज। संसार की
किसी अन्य वस्तु पर विश्वास नहीं।"
"तुम्हें मालूम है नीना, तेज ने कभी वचन झूठा नहीं किया।"
"तुम्हारे वचनों पर मुझे भरोसा है तेज। लेकिन संसार के वचनों का
मुझे कोई भरोसा नहीं है।"
"नीना!"
"लेकिन तुम्हारी बांहें और तुम्हारे वचन मेरे भाग्य में नहीं हैं।"
"नीना!"
"तेज!"
"मेरी बांहें आयु-भर खाली रहेंगी और मेरे वचन आयु-भर मेरे होंठों
में दबे रहेंगे।"
"नहीं तेज···ये बांहें बड़ी कीमती हैं और ये वचन बड़े सुन्दर।"
"लेकिन ये तुम्हारे लिए ये नीना···और तुमने इन्हें लेने से इनकार
कर दिया है।"
"मेरे पास तो ऐसी जबान ही नहीं है तेज, कि जिससे मैं इनकार कर
सकूं।"
"तुमने तो स्वयं इनकार किया है नीना···तुम्हारा एक शब्द इस होनी
को बदल सकता था।"
"काश, मैं वह शब्द कह सकती···"
"तुम अब भी कहकर देख लो नीना···होनी बदल जाएगी।"
"लेकिन तेज···"
"कहो नीना।"
"वह शब्द मुझे नहीं कहना चाहिए।"
"क्यों?"
"जिससे प्यार किया जाता है उसके लिए बुरा नहीं सोचना चाहिए।
"मैं समझा नहीं, नीना।"
"मेरा तेज बहुत बड़ा डाक्टर बनेगा···सारे हस्पताल का मालिक

सारी दौलत का वारिस···और···"

"नीना !"

"हां तेज।"

"तुम यह क्या कह रही हो नीना ?"

"मेरे तेज का भाग्य सूरज की तरह चमकेगा। मैं सूरज के चेहरे पर बादल नहीं बन सकती तेज।"

"नीना, तुम यह क्या कह रही हो ?"

"मैं ठीक कह रही हूं तेज···जब तुम वीणा से ब्याह करोगे तेज···"

"नीना···तुम मुझे इतना हल्का समझती हो ? क्या मैं केवल नाम और दौलत के लिए ऐसा करूंगा ? नीना, तुमने मुझे गलत समझा है· मैं तो आयु-भर उस घर के उपकारों का बदला नहीं चुका सकता···राजवंती मेरी मां है···नीना, क्या हुआ जो उसने मुझे अपनी कोख से जन्म नहीं दिया··· लेकिन मेरे लहू की आखिरी बूंद में भी उसके लिए वही आदर होगा जो किसी सगे बेटे का अपनी मां के लिए हो सकता है···।"

"मैं भी तो यही कहती हूं तेज।"

"नहीं, तुम यह नहीं कह रहीं नीना···तुम सोचती हो कि मैं उनकी दौलत का मालिक बनना चाहता हूं···तुम यह नहीं जानतीं नीना, कि जिस मां के चरणों पर मेरा माथा झुका हुआ है, उसकी बेटी की ओर मेरी निगाह नहीं उठ सकती।"

"तेज, वीणा तुमसे प्रेम करती है।"

"नीना !"

"मैं ठीक कह रही हूं तेज, वह तुमसे प्रेम करती है।"

"नीना, तुमने उसे गलत समझा है।"

"नहीं तेज !"

"नहीं नीना, वह मुझसे प्रेम नहीं करती, मुझ पर दया करती है। वीणा कोई साधारण लड़की नहीं है, उसने राजवंती जैसी मां की कोख से जन्म लिया है, उसका दिल भी अपनी मां जैसा बड़ा दिल है। आज जब देखा है कि रमेश ने घर में फिसाद खड़ा कर दिया है और जिस घर में मैं बेटों की तरह रहा हूं उस घर में मेरे लिए कोई स्थान नहीं रहा तो उसने एक बलिदान करना चाहा है।"

"नहीं तेज, तुमने उसे गलत समझा है।"

"नहीं नीना ! तुम गलती पर हो। वह जानती है कि चाहे मैं अनाथ हूं, बेसहारा हूं, निर्धन हूं लेकिन मेरे दिल में वही अमीरी है···"

"और वह तुम्हारी इस अमीरी से प्यार करती है तेज।"

"वह प्यार नहीं करती नीना। वह आदर करती है और इस आदर के सदके वह मुझपर दया करती है। मैं निर्धन हो सकता हूं नीना, लेकिन भिखारी नहीं हो सकता।"

"तेज!"

"तुम्हारी इस गलतफहमी ने मुझे कहीं का न छोड़ा नीना।"

"गलतफहमी मुझे नहीं तुम्हें है तेज। तुमने अभी तक उसके प्यार को प्यार नहीं समझा। तुम उसके लगाव को दया समझते रहे हो···उसने तुम्हें कभी दान नहीं दिया तेज, वह तुम्हें तुम्हारे अधिकार देती रही है···वह तुम्हारे आत्मसम्मान को भी ठोकर नहीं लगा सकती।"

"लेकिन तुम मेरे प्यार को ठोकर लगा रही हो नीना। मुझे उसके दिल की बात का कुछ ज्ञान नहीं है, मैंने अभी तक उसकी ओर नजरें उठाकर भी नहीं देखा; लेकिन मैं तुम्हें जानता हूं नीना, और आज तुम···।"

"मैं तुम्हारे प्यार को नहीं, अपने जीवन को ठोकर लगा रही हूं··· तुम्हारा प्यार तो एक जलती हुई ज्योति है जो मुझे जीवन का मार्ग दिखाएगी।"

"और उसने तुम्हें यही मार्ग दिखाया है नीना?"

"हां तेज, उसने मुझे विरह का मार्ग दिखाया है। आज जब मैंने संसार के सब सहारे छोड़ दिए हैं, तुम्हारा सहारा भी छोड़ दिया है, तो मेरे पास केवल यही तो रह गया है जो मेरे जीवन का सहारा बनेगा।"

"नीना, तुमने यह क्या किया है?"

"तुम जानते ही हो तेज! मैं शुरू से ही कमजोर रही हूं। जब मैं छोटी थी वीणा मेरे खिलौने मुझसे छीन लेती थी और मैं रो-धोकर चुप हो जाया करती थी···अब भी उसने मुझसे मेरी मंजिल छीन ली है और मैं रो-धोकर चुप हो गई हूं···"

"लेकिन यह खिलौना तो तुम्हारे लिए बना है नीना। तुम अपना हाथ तो बढ़ाओ···।"

"नहीं, नहीं तेज। वह मेरी बड़ी बहन है, मैंने कभी उसका कहा नहीं टाला···आज मैं उसका आखिरी कहा भी मानूंगी तेज। फिर भला वह मुझे कब-कब कहेगी···"

"नीना!"

"मैंने सदा उस घर में से लिया ही लिया है···तेज। आज मुझ कुछ देकर भी देय लेने दो।"

"नीना, इस देन से मैं कंगाल हो जाऊंगा।"

"ऐसा न कहो, वीणा तुमसे अत्यन्त प्रेम करती है···तुम्हें तो मेरा साहस बढ़ाना चाहिए कि मैंने जो मार्ग चुना है, उस मार्ग पर मेरे पैर न डोलें।"

"नीना, तुम यह मार्ग मत चुनो···अब भी तुम भी इस मार्ग के उस मोड़ पर खड़ी हो जहां से तुम्हारे पैरों के लिए दूसरा मार्ग बदल सकता है।"

"नहीं, तेज मैं समय को अपनी कहानी नहीं दोहराने दूंगी।"

"यह क्या कहा है तुमने ?"

"तेज···आज जैसी ही कोई रात थी, मेरी मां के ब्याह के लिए शहनाइयां बजी थीं और उस रात मेरी मां अपने माता-पिता के घर से भाग गई थी।"

"फिर ?"

"फिर कहानी दूसरे ढंग से चलती है, उससे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है।"

"किस ढंग से···?"

"मेरी मां का चुनाव गलत था, उसके प्रेमी ने उसे ब्याह का सारा गहना ले आने को कहा, लेकिन उसने अपने माता-पिता के यहां से एक सुई तक भी न उठाई। उसके प्रेमी ने कुछ दिनों के बाद ही उसका साथ छोड़ दिया लेकिन उसके लिए समाज के सब दरवाज़े बन्द हो चुके थे और मैं उसके शरीर में पल रही थी···"

"फिर ?"

"उसने मुझे इस हस्पताल में जन्म दिया था और शायद और ठोकरें खाने की उसमें ताव नहीं थी, उसने मौत की शरण ले ली।"

"यह सब तुम्हें किसने बताया है ?"

"अन्तिम समय उसने मेरे नाम एक पत्र लिखा था और डाक्टर पिता जी के पास बतौर अमानत रख दिया था। पिताजी यह सोचते रहे कि जब मैं उस पत्र को समझने योग्य हो जाऊंगी, तभी वह तुझे पढ़ने को देंगे। अब अपनी मृत्यु के समय उन्होंने वह पत्र मेरे माता-पिता को दे दिया था···"

"लेकिन नीना···"

"मैं जानती हूं तेज, कि तुम क्या कहना चाहते हो···भगवान ने तुम जैसे भले लोग ज्यादा नहीं बनाए···मेरी मां से प्यार करने वाला झूठा था, लेकिन मुझसे प्यार करने वाला सच्चे से सच्चा है···सुच्चे से सुच्चा है···

तेज, तुम्हें एक और बात भी बताऊं···।"

"क्या ?"

"क्या तुम्हें मालूम हैं कि मेरी मां का क्या नाम था ?"

"क्या ?"

"नीना।"

'नीना ?"

"हां, उसका नाम नीना था और मरते समय उसने डाक्टर साहब से कहा था कि वे मेरा भी नाम नीना ही रखें।"

"उफ···नीना।"

"और आज समय उस कहानी को दोहराना चाहता है तेज। मैं हमेशा तुमसे अपना प्यार छुपाती रही हूं और आज मैंने उस रात सब कुछ तुम्हारे सामने रख दिया है जिस रात मेरे दरवाजे के सामने मेरे ब्याह की शहनाई बज रही है।"

"नीना !"

"लेकिन मैं अपने ब्याह की रात को घर से नहीं भागूंगी तेज। मेरी मां ने शायद इसीलिए मेरा नाम नीना रखा था, वह सोचती थी कि अपनी बेटी के शरीर में वह एक बार फिर नीना के रूप में जन्म लेगी और अपने दूसरे जन्म में वह भूल नहीं करेगी जो अपने जन्म में उसने की थी।"

"नीना !"

"तेज !"

"ब्याह की इस रात को वह अपने प्रेमी के साथ जाकर पछताई थी लेकिन नीना···ब्याह की इस रात को शायद तुम अपने प्रेमी को छोड़कर पछताओगी···"

"तेज !" और नीना के आंसुओं ने तेज के हाथ धो डाले।

वियोग

जीवन बाबा अपनी छोटी-सी मेज पर कुछ लिखने में व्यस्त थे जब तेज डगमगाते हुए कदमों से उनके कमरे में दाखिल हुआ और बाबा से कुछ कहे बिना उनकी चारपाई पर लेट गया।

"तेज,···" जीवन बाबा घबराकर उठे, "क्या हुआ है बेटा ?" और वे उठकर तेज के पांयते आ बैठे।

तेज ने तकिये को जोर से मुट्ठी में लेकर अपनी मनःस्थिति को संभलाने

का प्रयत्न किया लेकिन वह अपने-आप पर काबू न पा सका।

"तेज···," जीवन बाबा ने तेज के दोनों पैरों को अपने घुटनों पर रख लिया और अपने दोनों हाथों से पैरों की उंगलियों से खेलने लगे।

बाबा के हाथों से एक गर्मी-सी निकलकर तेज के ठंडे पैरों में पहुंचती रही और आखिर उसके भीतर कोई चीज़ पिघल-पिघलकर उसके होंठों तक आ गई, "बाबा···आज सब खेल समाप्त हो गए हैं···।"

जीवन बाबा ने कोई उत्तर नहीं दिया। तेज ने फिर कहा, "आप सुन रहे हैं ना बाबा···आज नीना का ब्याह हो गया है···" और फिर तेज ने उठकर बाबा के कंधे पर अपना सिर रखकर कहा, "बाबा, आज नीना ससुराल चली गई है···।"

जीवन बाबा फिर कोई उत्तर न दे सके, उसके हाथ को अपने हाथों में लेकर थपथपाते रहे।

"बहुत दिन हुए···मैंने एक नाटक लिखा था···'जिए मेरा देश···' उसमें नीना ने मेरे साथ काम किया था···न जाने मैंने क्यों लिखा था कि एक सभा के दो सदस्य थे—एक सतीश और एक शीला। दोनों ने सभा के लिए अपना तन-मन अर्पण कर रखा था। सतीश कैद हो गया और जब वह जेल से छूटकर आया तो उसने देखा कि सोने-चांदी के हाथों ने उससे उसकी शीला को छीन लिया था···शीला ने उसका इन्तज़ार किए बिना ही ब्याह करवा लिया था···।"

"तेज···!" जीवन बाबा ने अपने कुर्त्ते से अपनी आंखें पोंछ लीं।

"बाबा···वह नाटक मैंने इसलिए नहीं लिखा था कि आज वह सब कुछ सच हो जाए···।"

"बेटा···" जीवन बाबा का स्वर उनके कण्ठ ही में रुक गया।

"और आज वह नाटक सचमुच खेला गया है···लेकिन बाबा, सतीश तो उस वक्त कैद था, मैं तो कैद नहीं था···"

"तेज !"

"और बाबा, शीला को किसी की दौलत ने खरीद लिया था, लेकिन मेरी नीना को किसी की दौलत नहीं खरीद सकी···नीना खरीदी जाने वाली चीज़ नहीं है बाबा···"

"तेज···मेरे बेटे···"

"लेकिन फिर भी बाबा···आज वह नाटक सच्चा हो गया है···नीना को उसकी गलतफहमियों ने कहीं का नहीं रखा।"

"गलतफहमियां ?"

तेज, तुम्हें एक और बात भी बताऊं···।"

"क्या ?"

"क्या तुम्हें मालूम है कि मेरी मां का क्या नाम था ?"

"क्या ?"

"नीना।"

'नीना ?"

"हां, उसका नाम नीना था और मरते समय उसने डाक्टर साहब से कहा था कि वे मेरा भी नाम नीना ही रखें।"

"उफ···नीना।"

"और आज समय उस कहानी को दोहराना चाहता है तेज। मैं हमेशा तुमसे अपना प्यार छुपाती रही हूं और आज मैंने उस रात सब कुछ तुम्हारे सामने रख दिया है जिस रात मेरे दरवाजे के सामने मेरे ब्याह की शहनाई बज रही है।"

"नीना !"

"लेकिन मैं अपने ब्याह की रात को घर से नहीं भागूंगी तेज। मेरी मां ने शायद इसीलिए मेरा नाम नीना रखा था, वह सोचती थी कि अपनी बेटी के शरीर में वह एक बार फिर नीना के रूप में जन्म लेगी और अपने दूसरे जन्म में वह भूल नहीं करेगी जो अपने जन्म में उसने की थी।"

"नीना !"

"तेज !"

"ब्याह की इस रात को वह अपने प्रेमी के साथ जाकर पछताई थी लेकिन नीना···ब्याह की इस रात को शायद तुम अपने प्रेमी को छोड़कर पछताओगी···"

"तेज !" और नीना के आंसुओं ने तेज के हाथ धो डाले।

वियोग

जीवन बाबा अपनी छोटी-सी मेज पर कुछ लिखने में व्यस्त थे जब तेज डगमगाते हुए कदमों से उनके कमरे में दाखिल हुआ और बाबा से कुछ कहे बिना उनकी चारपाई पर लेट गया।

"तेज,···" जीवन बाबा घबराकर उठे, "क्या हुआ है बेटा ?" और वे उठकर तेज के पांयते आ बैठे।

तेज ने तकिये को जोर से मुट्ठी में लेकर अपनी मनःस्थिति को संभलाने

का प्रयत्न किया लेकिन वह अपने-आप पर काबू न पा सका।

"तेज···," जीवन बाबा ने तेज के दोनों पैरों को अपने घुटनों पर रख लिया और अपने दोनों हाथों से पैरों की उंगलियों से खेलने लगे।

बाबा के हाथों से एक गर्मी-सी निकलकर तेज के ठंडे पैरों में पहुंचती रही और आखिर उसके भीतर कोई चीज़ पिघल-पिघलकर उसके होंठों तक आ गई, "बाबा···आज सब खेल समाप्त हो गए हैं···।"

जीवन बाबा ने कोई उत्तर नहीं दिया। तेज ने फिर कहा, "आप सुन रहे हैं ना बाबा···आज नीना का ब्याह हो गया है···" और फिर तेज ने उठकर बाबा के कंधे पर अपना सिर रखकर कहा, "बाबा, आज नीना ससुराल चली गई है···।"

जीवन बाबा फिर कोई उत्तर न दे सके, उसके हाथ को अपने हाथों में लेकर थपथपाते रहे।

"बहुत दिन हुए···मैंने एक नाटक लिखा था···'जिए मेरा देश···' उसमें नीना ने मेरे साथ काम किया था···न जाने मैंने क्यों लिखा था कि एक सभा के दो सदस्य थे—एक सतीश और एक शीला। दोनों ने सभा के लिए अपना तन-मन अर्पण कर रखा था। सतीश कैद हो गया और जब वह जेल से छूटकर आया तो उसने देखा कि सोने-चांदी के हाथों ने उससे उसकी शीला को छीन लिया था···शीला ने उसका इन्तज़ार किए बिना ही ब्याह करवा लिया था···।"

"तेज···!" जीवन बाबा ने अपने कुर्त्ते से अपनी आंखें पोंछ लीं।

"बाबा···वह नाटक मैंने इसलिए नहीं लिखा था कि आज वह सब कुछ सच हो जाए···।"

"बेटा···" जीवन बाबा का स्वर उनके कण्ठ ही में रुक गया।

"और आज वह नाटक सचमुच खेला गया है···लेकिन बाबा, सतीश तो उस वक्त कैद था, मैं तो कैद नहीं था···"

"तेज !"

"और बाबा, शीला को किसी की दौलत ने खरीद लिया था, लेकिन मेरी नीना को किसी की दौलत नहीं खरीद सकी···नीना खरीदी जाने वाली चीज़ नहीं है बाबा···"

"तेज···मेरे बेटे···"

"लेकिन फिर भी बाबा···आज वह नाटक सच्चा हो गया है···नीना को उसकी गलतफहमियों ने कहीं का नहीं रखा।"

"गलतफहमियां ?"

"हां बाबा···वह सोचती है कि मैं वीणा से व्याह करूंगा, मैं उसके हस्पताल का मालिक बनूंगा, मैं इस शहर का बहुत बड़ा डाक्टर कहलाऊंगा···"

"बस इतनी-सी बात···लेकिन उसे तुम्हारे आत्मसम्मान का पूरा-पूरा ज्ञान होगा तेज···उसने यह कैसे सोच लिया···?"

"गलतफहमी···गलतफहमी, और कुछ नहीं बाबा।"

"तेज !"

"वीणा की कृपाओं को वह भूल से प्यार समझ बैठी है बाबा। वीणा भी मेरा भविष्य बनाने के लिए यही कुछ कहती है और नीना ने उसे गलत समझा है···।"

"तेज···तुम इसे नीना की गलतफहमी कह रहे हो···मैं इसे नीना का बलिदान कहूंगा···।"

"बलिदान तो हुआ बाबा, लेकिन मैं इस बलिदान के बदले में हस्पताल खरीदकर क्या करूंगा···और बाबा, डाक्टर पिताजी ने जाते समय उस घर की सारी जिम्मेदारी मेरे कंधों पर डाली थी। क्या मैं अपने कर्तव्य का बोझ उठाने के बजाय अब भी अपना ही बोझ उस घर पर डाले रहूं ? और क्या उस घर की दौलत को उनके मालिकों के हवाले करने के बजाय आप उसका मालिक बन बैठूं ?···नीना के पागलपन ने मुझे तबाह कर दिया है बाबा···।"

"पागलपन नहीं बेटे···"

"नहीं तो और क्या बाबा···मेरी खुशियों को खरीदने के लिए उसने मेरी खुशियों को बेच दिया···"

"केवल तुम्हारी खुशियों को खरीदने के लिए नहीं तेज···।"

"बाबा !"

"वीणा की खुशी खरीदने के लिए भी···"

"बाबा !"

"वीणा मेहरबान है बेटा, लेकिन वह तुमसे प्रेम भी करती है।"

"बाबा, जो गलतफहमी नीना को हुई है वही आपको भी···।"

"नीना को गलतफहमी नहीं हो सकती बेटा ! जिस किसी ने सच्चा प्रेम करके देखा हो उसे कभी गलतफहमी नहीं हो सकती बेटा···।"

"लेकिन आपने न तो कभी नीना को देखा है और न कभी वीणा को···आप यह कैसे कह रहे हैं···आप सबको क्या हो गया है ? नीना को भ्रम हो गया है बाबा ! नीना तो पागल हो गई है।"

"मैंने उन्हें तो नहीं देखा तेज, लेकिन मैंने तुम्हें देखा है और मैं नीना की बहादुरी को देख रहा हूं। वह अपने एक शब्द से अपनी खुशियों को खरीद सकती थी लेकिन उसने किसी की खुशी के लिए अपनी दौलत कुर्बान कर दी···और इतनी बड़ी दौलत को कुर्बान कर डालने वाले पागल नहीं होते तेज···।" जीवन बाबा की आंखें फिर भर आईं।

"बाबा···क्या आपने किसी से प्रेम किया है?" सहसा तेज ने पूछा।

"मैंने···मैंने शायद एक प्रेम करने के सिवा और कुछ किया ही नहीं है···" जीवन बाबा का सिर झुक गया।

"और बाबा···"

"मुझसे और कुछ न पूछो बेटा···मेरा मिलन ही मेरा वियोग बन गया···"

"बाबा!"

"हां बेटा, घड़ी-भर के मिलन ने मुझे आयु-भर का वियोग दे दिया ···लेकिन···लेकिन बेटा, कई बार जीवन बिछुड़कर भी मिला रहता है···। और कई बार मनुष्य मिलकर भी बिछुड़ा रहता है।"

"बाबा, आपका दिल बहुत बड़ा है; मैं आपका मुकाबला नहीं कर सकता। मैं तो भाग्य की हवा से उखड़ा हुआ एक तिनका हूं, मेरे पास आपका जैसा ज्ञान नहीं है, मुझे तो वियोग वियोग ही नज़र आता है···" और तेज ने एक दीर्घ श्वास लेकर अपने-आप को संभाला।

"ओह···मेरे बेटे···" जीवन बाबा केवल इतना ही कह सके।

आंसू

डूबते सूरज की लालिमा सन्ध्या के अंधेरे में घुल रही थी, जब किसी ने तेज के दरवाज़े पर दस्तक दी।

"कौन?" तेज ने उठकर दरवाज़ा खोलते हुए कहा, "कौन वीणा?" उसने फिर कहा, "इस वक्त अकेले?"

वीणा कुछ उत्तर दिए बिना धीरे से मुस्कराकर कमरे में आ गई।

"अगर कोई काम था तो मुझे बुला भेजतीं!" तेज ने कहा।

"क्या कभी कोई खाली झोली भीख डालने वाले हाथों को बुला भेजती है।" वीणा ने धीरे से कहा। उसका चेहरा बहुत गम्भीर था लेकिन होंठों पर एक बड़ा ठहराव और मुस्कराहट थी।

"वीणा!"

"जी !"

"जी क्यों ? मैं तो वही तेज हूं।"

"लेकिन वीणा आपसे चार साल छोटी है और हमेशा चार साल छोटी रहेगी।"

"लेकिन जब वह मुझे तेज कहकर पुकारती थी उस वक्त भी तो वह चार साल छोटी थी।"

"जब बचपन समाप्त हो जाता है, तब किसी का चार साल छोटा होना उसे बहुत छोटा बना देता है।"

"और फिर 'जी' कहने की जरूरत पड़ जाती है।" तेज हंस पड़ा।

"हां" वीणा भी हंस पड़ी।

"ओह ! वीणा !! तुम बैठतीं क्यों नहीं ?"

"आपने मुझे बैठने को कहा कब है···आपका घर है और मैं आपकी मेहमान हूं।"

"मेरा···एक तरह से यह सब कुछ तुम्हारा ही है वीणा ! ये सब चीजें मुझे माता जी ने लेकर दी हैं···यह घर, यह सामान, मेरे तन के कपड़े और मेरे माथे पर लगी हुई डाक्टरी की डिगरी तक।"

ओहो···माताजी ने आपको ये सब चीजें ले दी हैं लेकिन मैंने माताजी से एक ही चीज मांगी थी और उन्होंने वह भी लाकर नहीं दी···आप ला दीजिए···" वीणा हंस दी और एकटक तेज के चेहरे की ओर देखने लगी।

"मैं ··? मेरे पास तो कुछ भी नहीं है वीणा ! जो कुछ है माता जी का दिया हुआ है।" तेज ने नजरें झुका लीं।

"जहां आपने माता जी से इतनी चीजें ली हैं वहां एक और चीज भी ले लीजिए !" वीणा के होंठों पर मुस्कराहट तो रही लेकिन उसमें और भी ठहराव सा गया।

"अगर देने वाले का दिल और भी बड़ा हो जाए तो क्या लेने वाले की झोली भी और बड़ी हो जानी चाहिए ? मैं कब तक लेता रहूंगा वीणा ? क्या तुम्हारा जी नहीं चाहता कि मैं अपने पैरों पर खड़ा होऊं ?"

"तेज !"

"बैठ जाओ, मेरी मेहमान।"

वीणा तेज के कमरे में पड़े हुए एक छोटे-से सोफे पर बैठ गई।

"वीणा, तुम अकेले कैसे आई हो, क्या नीचे गाड़ी खड़ी है ?"

"नहीं, पैदल आई हूं।"

"यह मकान कैसे मिला ?"

"गली में से पूछ लिया था।"

बहुत साधारण-सी बातें थीं, समाप्त हो गईं। अब तेज को कोई बात नहीं सूझ रही थी। दोनों के बीच में केवल सोफे की एक बांही जितना फासला था लेकिन दोनों को ऐसा लग रहा था कि उनके बीच उनकी चुप्पी कुहरे की तरह जमती जा रही है और उसमें से एक शीत-सी निकल-निकलकर उनका अंग-अंग शिथिल कर रही है।

इतने में किसी के सीढ़ियों पर चलने की आवाज़ आई। तेज ने अपने जीवन बाबा के पैरों को पहचान लिया।

"आ जाओ बाबा," तेज ने कहा और जीवन बाबा कमरे में आ गए।

"यह वीणा है!" तेज ने परिचय कराया और साथ की कुर्सी पर बैठने का संकेत किया। बैठते हुए जीवन बाबा ने बड़े स्नेह से वीणा को नमस्कार किया।

"आप जीवन बाबा हैं ना?" बड़े अपनेपन के साथ वीणा ने जीवन बाबा से कहा।

"मालूम होता है, तेज ने मेरे आने से पहले ही मेरा परिचय करा दिया है। इसे मालूम था कि मैं अभी पहुंच जाऊंगा।" जीवन बाबा हंस पड़े।

"ये तो रोज़ आप ही की बातें करते रहते हैं।" वीणा भी हंस पड़ी।

"मेरी बातें?..."

"हां, जब किसी के पास अपनी बातें करने को बाकी न रहें उस समय वह दूसरों की बातें करने लगता है।" वीणा की हंसी गम्भीर हो गई।

"क्या मतलब?" तेज ने वीणा की ओर देखते हुए कहा।

"मैं आपके लिए चाय बना लाऊं..." जीवन बाबा ने कुर्सी पर से उठते हुए कहा।

"बाबा! आप इन्हें 'तुम, तुम' कहते हैं और मुझे 'जी' कह रहे हैं, ऐसा क्यों?" वीणा ने धीरे से जीवन बाबा की बांह थामते हुए कहा।

"आपको? आपको..." जीवन बाबा इससे आगे कुछ न कह सके।

"फिर 'आपको'...मैं तो इनसे भी छोटी हूं।" वीणा हंस पड़ी।

"अच्छा, अब मैं वीणा बेटी कहूंगा।" जीवन बाबा ने वीणा की पीठ पर अपना दाहिना हाथ थपथपाया।

"बेटी आराम से बैठी रहे और उसका बाबा चाय बनाकर लाए, यह कैसे हो सकता है...आप यहां बैठिए...मैं चाय बनाती हूं..." वीणा सोफे पर से उठ खड़ी हुई।

...! अभी तो मैं र कहे बिना कुर्सी पर भी नहीं बैठूंगी।
...य बनाकर लाऊंगी···क्या कभी मेहमान काम किया
...मुस्कराते हुए कहा।
...मेहमान हूं लेकिन जीवन बाबा की बेटी हूं।" वीणा ने भी
...ा।
...··हमारे सारी उम्र के साथ से भी मेहमानी खत्म नहीं हुई और
...पहली मुलाकात में ही रिश्ते भी बन गए···" तेज हंसते-हंसते
...उठ खड़ा हुआ।
...न बाबा ने अपनी सजल आंखों को अपने कुर्ते के दामन से पोंछ

...क्यों बाबा···?" वीणा ने स्नेहपूर्वक बाबा की छाती के निकट होकर
...।

"इन्हें तुमसे प्रेम हो गया है वीणा!" तेज हंस पड़ा।

"सच बाबा!" वीणा ने धीमे से कहा।

"इन्हें जब मुझसे प्रेम हुआ था, उस वक्त भी ये इसी तरह रोए थे।" तेज ने फिर कहा।

जीवन बाबा की आंखें फिर सजल हो उठीं और अपने आंसुओं को छुपाने के लिए वे रसोईघर में खुलने वाला दरवाजा खोलकर कमरे से बाहर चले गए।

तेज ने अभी तक कमरे की बिजली नहीं जलाई थी। अंधकार और भी गहरा हो चुका था लेकिन तेज को इस पर भी नजर आ गया कि वीणा किसी सोच में पड़ गई थी।

"वीणा!"

"जी!"

"क्या सोच रही हो?"

"सोच रही हूं, जब भी किसी को प्रेम हो जाता है, उसे रोना पड़ता है।" और उसकी आंखें भी सजल हो उठीं।

जीवन बाबा इतने बड़े हैं फिर भी आंसुओं ने उनका लिहाज नहीं किया। मैं तो अभी अनजान ही हूं।" और यह कहकर वह मुस्करा दी।

"वीणा···!"

"जीवन बाबा अकेले चाय बना रहे होंगे···मैं उनके पास जाती हूं···"

और वीणा हंसते-हंसते रसोईघर में चली गई।

तेज ने कमरे की बिजली जलाई, पहले उसे वीणा के आंसुओं की

आई और फिर उसकी हंसी। वह रसोईघर के दरवाज़े में जा खड़ा हुआ।

"असली मेहमान तो मैं हूं।" हंसते-हंसते तेज ने कहा। वीणा भी हं पड़ी और फिर जीवन बावा भी हंस पड़े। बिजली के स्टोव पर चाय क पानी रखा था। जीवन बावा चायदानी में चाय की पत्तियां डाल रहे थे और वीणा प्यालियों को पोंछ-पोंछकर एक ट्रे में रख रही थी।

"फिर न जाने कभी इस तरह की मेहमाननवाज़ी नसीब हो, न हो ...आज मैं चाय के छ: प्याले पी जाऊं।" तेज ने फिर हंसकर कहा।

"बावा, अगर किसी के घर रोज़ चाय के छ: प्याले पीने वाल मेहमान आ जाए तो यह चाय का डिब्बा आठ दिन भी नहीं चल सकता।" वीणा ने भी हंसते हुए कहा।

"फिर ऐसे मेहमान की खातिर हम चाय की एक बगीची लगवा लेंगे बेटी!" जीवन बावा भी हंस पड़े। लेकिन वीणा के चेहरे का रंग कुछ ऐसा हो गया जैसे उबलते पानी में चाय की पत्तियां पड़ जाएं। और वह जीवन बावा के कहने पर जालीदार बक्स में से डबल रोटी और मक्खन निकालने लगी।

तेज ने वीणा के चेहरे का वह रंग देखा और उसकी झिझक दूर करने के लिए हंसकर बोला, "फिर ऐसे मेहमान के लिए डबल रोटियों की एक बेकरी खोलनी पड़ेगी। मक्खन की एक डेरी बनवानी पड़ेगी और बावा!...इस तरह मेहमाननवाज़ी आप अधिक दिनों तक न कर पाएंगे।"

वीणा ने आंखों में एक उलाहना-सा भरकर तेज की ओर देखा जैसे कह रही हो, जीवन के दिन अधिक तो नहीं होते तेज...।

जीवन बावा ने चाय की भरी हुई केतली को ट्रे में रख दिया और वीणा ने सब चीज़ों को संभालकर कमरे की मेज पर जा रखा।

"आप बैठिए बावा, मैं चाय बना देती हूं।" और वीणा चाय बनाने लगी।

"वीणा बेटी, आप मेरा प्याला न बनाइए, मैं अभी आता हूं।" और यह कहते-हुए जीवन बावा सीढ़ियां उतर गए।

"आपके जीवन बावा बहुत अच्छे हैं।" डबल रोटी पर मक्खन लगाते हुए वीणा ने कहा।

"आज तो मुझसे अधिक तुम्हारे जीवन बावा बन गए हैं।" तेज हंस पड़ा।

"शुक्र है, कोई तो हमारा बना।" वीणा ने मक्खन वाली छुरी से फिर

ड़ा-सा मक्खन उठाया।

"सारी दुनिया में से मैंने एक मां ढूंढ़ी थी, जिसे तुमने चार साल बाद आकर मुझसे छीन लिया···फिर मैंने एक जीवन बाबा ढूंढ़ा और तुमने उसे भी मिनटों में मुझसे छीन लिया···और एक मैं···हूं···" तेज कहते-कहते रुक गया।

"कह डालिए···जो आप कहने जा रहे थे···!"

"कुछ नहीं।" तेज की हंसी एकदम उड़ गई।

"कुछ तो कहने जा रहे थे।"

"फिर कभी सही···।" तेज ने कहा और वीणा ने देखा कि न जाने क्यों तेज घबरा गया था।

"तेज !"

"हां वीणा !"

"आपने मुझसे कुछ छुपाया है !"

"मैं कुछ नहीं छुपाऊंगा, वीणा।" तेज ने कहा और अपनी घबराहट दूर करने के विचार से वह कुर्सी पर से उठकर कमरे की खिड़की में जा खड़ा हुआ।

जीवन बाबा के सीढ़ियां चढ़ने की आवाज आई। वीणा ने देखा, जीवन बाबा के हाथों में एक टोकरी थी, जिसमें तरह-तरह की मिठाइयां भरी थीं।

"बाबा ! आप यह सब क्यों लेने गए थे ?" वीणा ने बाबा के हाथ से टोकरी लेते हुए कहा।

"आज पहली बार मेरी बेटी घर आई है।" जीवन बाबा ने हंसते हुए कहा।

"मुझे तो पहले ही उलाहना मिल रहा है, बाबा, कि मैंने इनके जी बाबा को छीन लिया है···" वीणा ने उन्मत्त-सी होकर जीवन बाबा से कहा।

"कौन किसीसे कुछ छीन सकता है बेटी ! सबको अपना-अपना प्यार मिल जाता है।"

"देखो बाबा, ये चार साल के थे जब मैंने माताजी के घर लिया था और ये मुझसे कह रहे हैं कि मैंने इनकी मां को भी इनसे लिया है, क्या अब माताजी इनसे प्यार नहीं करती ?···या अ करते ?···और, और भी न जाने क्या कहने जा रहे थे जो कहा न वीणा ने मुस्कराकर कहा।

"यह पगला है बेटी ··जैसे इसने कभी किसी से कुछ छीना ही नहीं···" जीवन बाबा हंस पड़े। तेज ने अपनी सब उदासियों को संभाला और चाय की मेज़ पर आ बैठा।

"अच्छा जी, मुझ पर क्या-क्या दोष लग रहे हैं?" तेज ने हंसकर कहा।

"यही कि जैसे तुमने कभी किसीका कुछ छीना ही नहीं।" चाय का घूंट लेते हुए जीवन बाबा ने कहा।

"अच्छा, कुछ मालूम तो हो कि मैंने किसीसे क्या छीना है?" तेज भी चाय पीने लगा।

मिठाई की तश्तरी को तेज की ओर बढ़ाते हुए वीणा ने कुछ ऐसी नज़रों से तेज को देखा कि तेज ने अपने प्रश्न को वहीं का वहीं रोक दिया।

"अब तो मेरे साथ-साथ तुम भी मेहमान बन गई हो वीणा! यह चाय, यह डबल रोटी और मक्खन तो मेरे लिए बनाए गए हैं लेकिन यह मिठाई तुम्हारी मेहमाननवाज़ी के लिए आई है···" तेज हंस पड़ा।

"बाबा, अगर आप रोज़ इसी तरह मेरी खातिर करेंगे तो मैं रोज़ आकर आपकी मेहमान बन जाया करूंगी।" वीणा भी हंस पड़ी।

जीवन बाबा की मुख मुद्रा गंभीर हो गई और एक बार फिर उनकी आंखें सजल हो उठीं।

"लीजिए, जीवन बाबा को फिर प्यार आ गया···" वीणा ने कहा और हंस पड़ी।

चाय समाप्त हो गई। रात गहरी हो गई।

"चलो वीणा, मैं तुम्हें घर पहुंचा आऊं।" तेज ने कहा।

"चलिए!" वीणा उठ खड़ी हुई।

"फिर कब आओगी बेटी?" जीवन बाबा ने वीणा के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा।

"आज तो मैं बिन बुलाए आई हूं···अब जब आप बुलाएंगे तब आऊंगी···" वीणा ने दोनों हाथ जोड़कर बाबा को नमस्कार किया।

"सच बेटी, तुम मेरे बुलाने पर आ जाओगी?" बड़े हर्ष के साथ जीवन बाबा ने कहा।

"हां बाबा···बुलाकर देख लीजिएगा।" और हंसते-हंसते वीणा ने एक बार फिर हाथ जोड़कर बाबा को नमस्कार किया और तेज के साथ सीढ़ियां उतरने लगी।

ा मक्खन उठाया।
सारी दुनिया में से मैंने एक मां ढूंढ़ी थी, जिसे तुम्हें चार साल बाद
मुझसे छीन लिया···फिर मैंने एक जीवन बाबा ढूंढ़ा और तुमने
ी मिनटों में मुझसे छीन लिया···और एक मैं···हूं···" तेज कहते-
रुक गया।
"कह डालिए···जो आप कहने जा रहे थे···!"
"कुछ नहीं।" तेज की हंसी एकदम उड़ गई।
"कुछ तो कहने जा रहे थे।"
"फिर कभी सही···।" तेज ने कहा और वीणा ने देखा कि न जाने
यों तेज घबरा गया था।
"तेज!"
"हां वीणा!"
"आपने मुझसे कुछ छुपाया है!"
"मैं कुछ नहीं छुपाऊंगा, वीणा।" तेज ने कहा और अपनी घबराहट
दूर करने के विचार से वह कुर्सी पर से उठकर कमरे की खिड़की में जा
खड़ा हुआ।
जीवन बाबा के सीढ़ियां चढ़ने की आवाज आई। वीणा ने देखा,
जीवन बाबा के हाथों में एक टोकरी थी, जिसमें तरह-तरह की मिठाइयां
भरी थीं।
"बाबा! आप यह सब क्यों लेने गए थे?" वीणा ने बाबा के हाथों
से टोकरी लेते हुए कहा।
"आज पहली बार मेरी बेटी घर आई है।" जीवन बाबा ने हंसते
हुए कहा।
"मुझे तो पहले ही उलाहना मिल रहा है, बाबा, कि मैंने इनके जीवन
बाबा को छीन लिया है···" नीना ने उन्मत्त-सी होकर जीवन बाबा से
कहा।
"कौन किसीसे कुछ छीन सकता है बेटी! सबको अपना-अपना अधि
कार मिल जाता है।"
"देखो बाबा, ये चार साल के थे जब मैंने माताजी के घर ज
लिया था और ये मुझसे कह रहे हैं कि मैंने इनकी मां को भी इनसे छी
लिया है, क्या अब माताजी इनसे प्यार नहीं करतीं?···या आप
करते?···और, और भी न जाने क्या कहने जा रहे थे···जो कहा नहीं
वीणा ने मुस्कराकर कहा।

"यह पगला है बेटी ··जैसे इसने कभी किसी से कुछ छीना ही नहीं···" जीवन बाबा हंस पड़े। तेज ने अपनी सब उदासियों को संभाला और चाय की मेज़ पर आ बैठा।

"अच्छा जी, मुझ पर क्या-क्या दोष लग रहे हैं?" तेज ने हंसकर कहा।

"यही कि जैसे तुमने कभी किसीका कुछ छीना ही नहीं।" चाय का घूंट लेते हुए जीवन बाबा ने कहा।

"अच्छा, कुछ मालूम तो हो कि मैंने किसीसे क्या छीना है?" तेज भी चाय पीने लगा।

मिठाई की तश्तरी को तेज की ओर बढ़ाते हुए वीणा ने कुछ ऐसी नज़रों से तेज को देखा कि तेज ने अपने प्रश्न को वहीं का वहीं रोक दिया।

"अब तो मेरे साथ-साथ तुम भी मेहमान बन गई हो वीणा! यह चाय, यह डबल रोटी और मक्खन तो मेरे लिए बनाए गए हैं लेकिन यह मिठाई तुम्हारी मेहमाननवाज़ी के लिए आई है···" तेज हंस पड़ा।

"बाबा, अगर आप रोज़ इसी तरह मेरी खातिर करेंगे तो मैं रोज़ आकर आपकी मेहमान बन जाया करूंगी।" वीणा भी हंस पड़ी।

जीवन बाबा की मुख मुद्रा गंभीर हो गई और एक बार फिर उनकी आंखें सजल हो उठीं।

"लीजिए, जीवन बाबा को फिर प्यार आ गया···" वीणा ने कहा और हंस पड़ी।

चाय समाप्त हो गई। रात गहरी हो गई।

"चलो वीणा, मैं तुम्हें घर पहुंचा आऊं।" तेज ने कहा।

"चलिए!" वीणा उठ खड़ी हुई।

"फिर कब आओगी बेटी?" जीवन बाबा ने वीणा के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा।

"आज तो मैं बिन बुलाए आई हूं···अब जब आप बुलाएंगे तब आऊंगी···" वीणा ने दोनों हाथ जोड़कर बाबा को नमस्कार किया।

"सच बेटी, तुम मेरे बुलाने पर आ जाओगी?" बड़े हर्ष के साथ जीवन बाबा ने कहा।

"हां बाबा···बुलाकर देख लीजिएगा।" और हंसते-हंसते वीणा ने एक बार फिर हाथ जोड़कर बाबा को नमस्कार किया और तेज के साथ सीढ़ियां उतरने लगी।

भर तेज और वीणा चुपचाप चलते रहे। जब वीणा का बंगला
र आने लगा तो तेज ने धीमे से कहा, "बहुत देर हो चुकी
। क्या कहेंगी ?"
माताजी से कह आई थी, वे शायद सो भी चुकी होंगी।" वीणा
दिया।
ो अब मैं जाऊं ?"
क्यों ?"
अब तो बंगले का फाटक भी आ गया है।"
"और बंगले के फाटक तक पहुंचाकर आपकी सब जिम्मेदारियां
त हो जाती हैं ?" वीणा फाटक में से गुज रकर कोठी की खट्टों की
के पास खड़ी हो गई।
"वीणा···!"
"कहिए···"
"वीणा, मैं अपनी जिम्मेदारी को पूरा करना चाहता हूं। लेकिन
मुझे पता नहीं चलता कि मेरी जिम्मेदारी क्या है ?"
"और आप कब तक अपनी जिम्मेदारी को नहीं पहचानेंगे ?" वीणा
के होंठ हिले।
ग्राउंड में बड़ा अंधकार था, बाड़ दोनों के सिरों से ऊंची थी। तेज
और वीणा एक-दूसरे के इतने निकट खड़े थे कि दोनों के श्वास एक-दूसरे
से टकरा रहे थे।
"जहां तक जिम्मेदारी का सवाल है, मैं अपने लहू की अन्तिम बूंद भी
तुम्हारे लिए बहा दूंगा वीणा···लेकिन···"
"लेकिन क्या ?"
"लेकिन मुझे तुम्हारी दौलत का लालच नहीं है वीणा !"
"यह तो मैं जानती हूं।"
"फिर ?"
"तुम मेरा जीवन बनाने के लिए इतना बलिदान क्यों दे रही हो
वीणा ?"
"बलिदान ?"
"तुम्हारे लिए बड़े से बड़ा खानदान मिल सकता है वीणा।"
"आप चाहते हैं कि मैं किसी बड़े खानदान के पल्लू से बंधकर आपु
भर अपने आंसू पोंछती रहूं ?"
"वीणा···"

"आप ऐसा क्यों सोचते हैं कि मैं आपका जीवन बनाने के लिए यह कर रही हूं। आप तो हर प्रकार के लालच से ऊंचे हैं···लेकिन मुझे अपने जीवन का लोभ है।"

"वीणा!"

"तेज!"

"मैं तुम्हारे योग्य नहीं हूं वीणा।"

"अपनी कीमत मेरे दिल से पूछो तेज।"

"नहीं वीणा, तुम नहीं जानतीं···

"मैं नहीं जानती? जिसने जब से होश संभाला है, आपके सिवा कुछ नहीं देखा?"

"इसीलिए तो मैं कहता हूं वीणा, तुम्हारा दिल बड़ा कीमती है···"

"लेकिन आपने तो कभी नज़रें उठाकर भी मेरी ओर नहीं देखा।"

"मेरी नज़रों ने हमेशा तुम्हारे पैरों की ओर देखा है, वीणा···मेरा कोई दोष नहीं है, अगर मैं तुम्हारे पैरों से ऊपर नहीं देख सका···"

"और जो कुछ मेरी आंखों में है, आप उसे आयु-भर नहीं देखेंगे?"

"वीणा, मैं सचमुच वह कुछ देखने योग्य नहीं हूं···"

"फिर वही बात···मुझे सच-सच बताइए, आपके दिल में क्या बात है।"

"मेरे दिल में?"

"मुझे एक बार बता दीजिए कि आपके दिल में क्या है···"

"मैं कोशिश करूंगा वीणा कि मेरे दिल से वह सब कुछ निकल जाए···"

"आप मुझे कुछ भी बताना नहीं चाहते?"

"मैं तुमसे कुछ भी नहीं छुपाऊंगा वीणा···लेकिन कोशिश करूंगा कि वह सब कुछ···"

"वह इतनी अच्छी कौन-सी बात है जिसे आप दिल से निकालना चाहते हैं लेकिन निकाल नहीं पाते···"

"सचमुच नहीं निकाल पाता वीणा···और इसीलिए मैं कहता हूं कि तुम्हारी नज़रों में मेरी कोई कीमत नहीं होनी चाहिए···"

"मुझे आपका सब कुछ अच्छा लगता है···आप मुझे वह सब कुछ दिखा दीजिए जो अब तक नहीं दिखाया···"

"लेकिन वह तुम्हें अच्छा नहीं लगेगा।"

"जो चीज़ आपको इतनी अच्छी लगती है वह मुझे भी अच्छी

..."

"वीणा, फिर कभी पूछ लेना, इस समय नहीं..."

"आप डरते क्यों हैं...वीणा के साहस को आजमाकर देख

जाए..."

"वहां तो मेरा भी साहस टूट गया है वीणा..."

"फिर मेरे साहस को साथ मिला लीजिए..."

"तुम नहीं समझतीं वीणा..."

"आपको किसीसे प्रेम है क्या ?" वीणा ने बड़े धीमे स्वर में पूछा।

"हां।" तेज के श्वासों में से एक मध्यम-सा स्वर उत्पन्न होकर वीणा के श्वासों में जा मिला।

"उसका नाम क्या है ?" वीणा ने फिर पूछा।

"नी..." तेज के होंठ इतना-भर कहकर ही बन्द हो गए।

"नीना ?" वीणा ने पूछा।

तेज ने अपने शरीर को खट्टों की उस बाड़ का सहारा दिया, अपनी भीगी हुई पलकें उठाकर वीणा के चेहरे की ओर देखा। वीणा का चेहरा मुर्झा-सा गया था।

"वीणा..."

"मैं उदास नहीं हुई तेज ! लेकिन मुझे एक बात याद आई है।"

"कौन-सी बात ?"

"मैंने आपको अपने दिल का जो भेद नहीं बताया था, वह एक दिन नीना से बता दिया था...और मैं सोचती हूं कि नीना अपने दिल में मुझे क्या कहती होगी...ओ...ह...नीना।" अपने दोनों हाथों से वीणा ने अपनी आंखें ढांप लीं।

"अब तो सब खेल समाप्त हो चुके हैं वीणा..." तेज ने एक ठंडा सांस भरकर कहा।

"मैं केवल अपनी पीड़ा को ही पहचानती रही...मैंने यह भी न देखा कि नीना की आंखों में क्या था...और उसने अपनी सब पीड़ाएं स्वयं पर लीं...उसने मुझसे एक बार भी नहीं कहा..." आंखों के पानी से वीणा की हथेलियां भीग गईं। तेज ने उसके भीगे हुए हाथों को उठाया, भीगे हुए चेहरे को उठाया और धीरे से कहा, "मेरा कोई दोष नहीं वीणा...मैंने कभी इन आंखों की ओर देखने की अशिष्टता नहीं की

पहला फेरा

नीना अपनी ससुराल में गई हुई थी। कृष्णादेवी ने घर की एक पुरानी और बूढ़ी नौकरानी को नीना को लिवा लाने के लिए भेजा। सिर के पुराने दर्द के कारण कृष्णादेवी स्वयं सफर न कर सकती थी। आज उसे यह ख्याल आ रहा था कि यदि उसका कोई बेटा होता तो वह जाकर अपनी बहन को ससुराल से लाता। उसका मां का हृदय इस बात को बिल्कुल भूल चुका था कि अगर सचमुच उसका कोई बेटा होता तो फिर नीना उसके यहां बेटी बनकर न आती।

नीना के पिताजी उसे लेने के लिए स्टेशन पर गए हुए थे। कोठी के बाहर जब कृष्णादेवी ने अपनी गाड़ी के रुकने की आवाज़ सुनी तो उसने उठकर अपनी बेटी का मुंह देखना चाहा।

"मां!"

"नीना!" और कृष्णादेवी ने नीना को इस प्रकार छाती से लगा लिया जैसे कोई अपनी टूटी हुई बांह को छाती से लगा लेता है।

"मां!"

"नीना क्या तुम अकेली आई हो?"

"अकेली ही तो इस घर से गई थी।" नीना रोते-रोते हंस पड़ी।

"अकेली क्यों···तुम्हें तो लगभग सौ आदमी लेने आए थे।"

"मां, हम तीन ही प्राणी थे घर में, एक तुम, एक पिताजी और एक मैं···अब फिर तीन हो गए हैं।" नीना ने हंसते हुए कहा। वह कृष्णादेवी को हमेशा माताजी कहकर पुकारा करती थी लेकिन जब कभी बड़े लाड़ में आ जाती थी तो मां कहा करती थी।

"पगली कहीं की···मेरा मतलब है कि जगन नहीं आया?"

"मैंने बाबूजी से बहुत कहा···बाबूजी आवत ही न···!" नीना को लिवा लाने के लिए गई हुई बूढ़ी नौकरानी ने कहा।

नीना की ससुराल से भी एक बूढ़ी नायन आई थी, जिसने कृष्णादेवी को नमस्कार करके कहा कि बहू केवल एक रात के लिए आई है, कल वह बहू को वापस ले जाएगी क्योंकि परसों उनके किसी सम्बन्धी के यहां ब्याह है।

"इतनी जल्दी···" कृष्णादेवी कुछ उदास हो गईं।

"मां···तुमने मुझे भेजा ही क्यों था?" नीना अभी तक मां की छाती

हुई थी।
आखिर नीना अपने कमरे में गई। मां ने पास बैठकर उसे खिलाया-
ा। शीतकाल की सन्ध्या का अंधेरा धीरे-धीरे रात में तबदील होता
हा था।
"बस यही रात? और रात सिर पर आ गई है और कल तुम चली
ोगी!" कृष्णादेवी ने पलंग पर बैठकर नीना का सिर अपनी गोद में
लिया।
"इसीलिए तो मैं तुमसे पूछती हूं मां, कि तुमने मुझे भेजा ही क्यों
ा?"
"मैं तुम्हें किस तरह रख लेती बेटी?"
"मां, तुम्हारे पास इतना बड़ा घर था, क्या इसमें मेरे लिए जगह
नहीं थी?"
"बेटियों के लिए किसी के पास जगह नहीं होती नीना!"
"सचमुच मुझे आज पता चला है कि बेटों और बेटियों में क्या फर्क
होता है···अगर मैं आपका बेटा होती तो कितना अच्छा होता मां···"
और नीना के आंसू निकल आए।
"नीना!"
"जी!"
"तुम्हारा चेहरा इतना उतरा हुआ क्यों है?"
"जिस बेटी की मां बेटी को अपने से अलग कर दे उसका चेहरा तो
उतरेगा ही।"
"पगली!"
"मां!"
"सच बताओ, क्या गांव में तुम्हारा जी नहीं लगा?"
"गांव तो बल्कि मुझे अच्छे लगते हैं मां!"
"तुम शहर में रहने की आदी हो···लेकिन यह कुछ ही दिनों
बात है, तुम्हारे पिताजी जगन की नौकरी का प्रबन्ध शहर ही में
देंगे।"
"मुझे तो बस अपनी मां चाहिए, चाहे गांव हो चाहे शहर।"
"पगली बेटी, मां कब तक तुम्हारे पास रहेगी? अब तो मेरे सि
न जाने क्या हो गया है, डाक्टर कहते हैं कि इस तरह किसी क
अचानक सिर की नाड़ी फट सकती है···"
"मां, आप लेट जाइए, मैं धीरे-धीरे आपका सिर दबाऊंगी।"

"अब तुम मेरी गोद में हो तो मेरी छाती में ठंडक है और मेरा सिर भी भला-चंगा है।"

"मां!"

"कहो।"

"मैं सोचती हूं कि पहले बेटियां अपने माता-पिता के पास रहती हैं और फिर ससुराल जाती हैं।"

"हां।"

"लेकिन मैं तो बारह साल तक आपसे बिछड़ी रही हूं···मुझे तो ऐसा लगता है कि मैं पहले बारह साल अपने ससुराल में रही हूं और अब मुझे मायके के घर में रहना चाहिए···" हंसते हुए नीना ने कहा और कृष्णादेवी की आंखों से आंसू बहने लगे।

"मेरे भाग्य में तो दुहरे बिछोड़े लिखे हुए हैं।" नीना ने फिर कहा।

"नीना, कुछ देर के लिए सो जाओ, थक गई होगी।"

"मां, सोने से तो झट से रात गुजर जाएगी।"

"नीना!"

"और फिर कल रात मुझे मां की गोद कहां से मिलेगी।" नीना ने कुछ इस प्रकार कहा कि कृष्णादेवी और भी व्याकुल हो उठी। वह सोचने लगी, बेटियां अपनी ससुराल जाती हैं, मांओं से बिछुड़कर रोती भी हैं लेकिन यह नीना कैसी बातें कर रही है।

"उसे सोने भी दोगी या नहीं, गाड़ी में बैठे-बैठे थक गई होगी।" देवराज ने आकर कहा।

"आपको कुछ ईर्ष्या हो रही है तो आप भी आकर बैठ जाइए, क्या हम मां-बेटी बातें न करें!" कृष्णादेवी ने उत्तर दिया।

"आज तो तुम्हारा सिरदर्द भी ठीक हो गया है।···देखो नीना, जब से तुम गई थीं तुम्हारी मां ने माथे से पट्टी नहीं उतारी थी। मैं ज़रा-सी कोई बात करता था तो कहती थी, बुलाइए नहीं, मेरा सिर चकरा जाता है।" देवराज ने पलंग पर बैठते हुए कहा।

"और आपने कौन-सा इसके पीछे मेरा सिर दबाया है···नीना से पूछिए, रोज मेरे सिर में दवाई डालकर सोती थी···इसके जाने के बाद आपने मुझे एक बार भी नहीं पूछा।"

"मुझे क्या मालूम···तुम स्वयं ही दवा डाल लेतीं।" देवराज हंसता रहा, नीना हंसती रही, उसकी मां हंसती रही।

"माताजी, आप मुझे सिर को दवा लगाने के लिए ही अपने यहां रख

ए," नीना ने हंसकर कहा। लेकिन उसकी मां की मुद्रा गम्भीर हो
नीना मां की गोद में से निकल उठकर बैठ गई। चुपचाप दवा की
ो ले आई और मां को पलंग पर लिटाकर उसके माथे पर दाहिने हाथ
पोरों से दवा मलने लगी।
"उसे भी जरा आराम करने दो।" कहकर देवराज अपने कमरे में
ला गया।
"बेटियां कितनी अच्छी होती हैं, सुख देती हैं..." कुछ देर बाद
कृष्णादेवी ने कहा।
"कोई मांओं जितना सुख भी दे सकता है?" नीना बोली।
"अच्छा, अगले जन्म में मैं तुम्हारी बेटी बनूंगी और तुम मेरी मां
बनना।" मां ने बड़े प्यार-भरे स्वर में कहा।
"नहीं मां, तुम हर जन्म में मेरी मां बनना और मैं हर जन्म में
तुम्हारी बेटी बनूंगी...अभी मुझे सुख लेने का लालच है।" और नीना की
आंखों से आंसू निकलकर मां के माथे पर गिरने लगे।
"नीना, मेरा पलंग तुम यहीं बिछवा दो। मैं तुम्हारे कमरे में
सोऊंगी।"
"मां, आज हम साथ-साथ सोएंगी।" नीना ने धीमे से कहा।
जब सुबह हुई, मां ने बड़े चाव से नीना के लिए चाय बनाई। उसे
अपने पास बिठाया और खिलाने-पिलाने लगी।
"नीना, ये गुलाबजामुन मैंने कल शाम को तुम्हारे लिए मंगवाकर
रखे थे। तुम्हें इनकी केवड़े की खुशबू अच्छी लगती है ना!"
"हां मां!"
"और ये टोस्ट भी जरूर खाने हैं, मैं स्वयं सेंककर लाई हूं, नौकर तो
बस जलाकर रख देता है।"
"और तुम मक्खन भी स्वयं बिलोकर लाई होगी, नौकर अपने मैं
हाथ लगा देता होगा।" नीना हंस दी।
"तुम्हारी ससुराल में तो बहुत मक्खन होगा...भैंस के दूध का खानि
मक्खन...।"
"लेकिन मां के हाथ तो शहर में हैं।"
"तुम्हें यह दलिया भी जरूर खाना है।"
"मां, आज तो तुम्हारा जो चाहे लिखा दो, आज मेरी भूख
मिटेगी।" नीना की आंखें फिर सजल हो उठीं और मां उसके चे
ओर देखने लगी। नीना जैसे-जैसे प्यार की बातें कर रही थी, मां व

बैठा जाता था। वह सोच रही थी, नीना ज़रूरत से ज्यादा उदास है।

दोपहर के खाने का समय हो गया। नीना उसी प्रकार छोटी-छोटी बातें करती रही।

"तेज को बुला भेजूं ?" मां ने स्वयं ही पूछा।

"अब तो जाने का समय हो गया है।"

"कल सुबह चली जाना।"

"नहीं मां, देर हो जाएगी।"

"तो फिर आज शाम की गाड़ी से चली जाना।"

"नहीं मां, अंधेरा हो जाएगा।"

कृष्णादेवी चुप हो गई, फिर खाने से निबटकर उसने नीना के गहनों का एक नया सेट निकाला।

"तुम्हें यह नमूना भी पसंद था न। कुछ दिन पहले जाकर मैं इसे खरीद लाई थी। सोचा, तुम पहली बार ससुराल से आओगी, तब तुम्हें यही दूंगी।"

"मां !" और नीना की आंखें फिर ढलक उठीं।

"तुम्हें पसन्द है ना ?"

"बहुत !"

"अपने सूटकेस में रख लो।"

"नहीं मां।"

"क्यों ?"

"आप इसे मेरे लिए संभाल रखें।"

"संभालकर रखने के लिए तो नहीं लिया नीना, तुम्हारे पहनने के लिए लिया है।"

"मैं जब यहां आकर रहूंगी, तब पहनूंगी।"

"पगली ! फिर जब आओगी, अपने साथ लेती आना। यहां भी तुम्हें ही पहनना है और वहां भी तुम्हीं पहनोगी।"

"नहीं मां।"

"वहां ले जाओगी तो सास-ससुर देखकर खुश होंगे।" कृष्णादेवी ने कहा और स्वयं उठकर नीना का सूटकेस खोला और वह सेट उसमें रख दिया।

गाड़ी का समय हो गया था। नीना के साथ आई हुई नायन तैयार बैठी थी और बाहर उनकी मोटर खड़ी इन्तज़ार कर रही थी।

"तुम तेज से नहीं मिलीं, वह मुझसे नाराज़ होगा।" मां ने कहा।

न नीना ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसके पिताजी उसे स्टेशन तक
ने के लिए दफ्तर से उठ आए थे।
"न आने का कुछ पता और न जाने का।" मां ने कहा।
"मैं तो कहता हूं, इतनी जल्दी भेजने की कोई जरूरत नहीं है।"
खराज ने जोर देकर कहा।
"यों ही जरा गुस्सा न करें, बिरादरी की शादी है..."
"हूं... बिरादरी बिरादरी..."
"फिर उल्टी बुला भेजूंगी..." मां ने कहा और नीना को बाहर मोटर
में बिठा आई।
नीना चली गई। मां के दिल में एक दर्द-सा उठने लगा, "नीना
इतनी उदास क्यों थी... उसका चेहरा उतरा हुआ था... उसके चेहरे पर
ब्याह का कोई चाव नहीं था... वह हर बहाने रोती रही है... वह मुझसे
कैसी-कैसी बातें करती रही है"... और यह सोच-सोचकर कृष्णादेवी का
दिल घबरा उठा।
कृष्णादेवी के सिर को कभी-कभी दर्द का ऐसा दौरा पड़ता था कि
वह दो-दो तीन-तीन, दिन तक चारपाई पर पड़ी रहती थी। उसे खाया-
पिया तक नहीं पचता था। अब भी उसे ऐसा लगा कि उसके सिर को उसी
तरह कुछ होने लगा था।
उसने नौकर को तेज के यहां भेजा कि उसे बुला लाए लेकिन उसे
छोटी बीवी के आने के सम्बन्ध में कुछ न बताए।
आधा घंटा भी नहीं गुजरा था जब तेज आकर कृष्णादेवी के पास बैठ
गया।
"आज आपके सिर को ज्यादा तकलीफ मालूम होती है।" तेज
पूछा।
"हां तेज!"
"आप बहुत उदास हैं, क्या बात है?" तेज ने फिर पूछा।
"नीना आई थी।" कृष्णादेवी ने श्वास का एक घूंट-सा भर
कहा।
"नीना आई थी?"
"हां।"
"कब?"
"कल शामको।"
"फिर?"

"अभी दोपहर की गाड़ी से चली गई।"

"क्यों?"

"उन लोगों ने कहा था कि वहां एक रात ही रहना।"

"अकेली आई थी?"

"उनके घर की नायन साथ थी। फिर मैंने यहां से अपनी नौकरानी भी भेजी थी।" कृष्णादेवी ने उत्तर दिया।

तेज क्या कहे, उसे कुछ भी तो नहीं सूझा।

"तेज, मेरा दिल घबरा रहा है...मेरा दिल कह रहा है कि वह खुश नहीं है।" कृष्णा देवी अपने सिर को दोनों हाथों से [illegible] बैठ गई।

"आप लेटी रहिए, मैं आपका सिर दबाता हूं।" [illegible] कृष्णादेवी को फिर लिटा दिया।

"नीना, शायद रात-भर मेरा सिर दबाती रही है।"

"उसने और क्या कुछ कहा था?"

"वहां की तो कोई बात नहीं की...[illegible] ही करती रही..."

"तेज का जी चाहा कि पूछे, क्या [illegible] की थी?" लेकिन उसने पूछा नहीं।

"[illegible]

तुम्हारा जो जी चाहे मुझे खिला दो, मेरी भूख नहीं मिटेगी···' तेज !
ऐसा क्यों कहा था ?" कृष्णादेवी रो उठी।
"तेज तुम, बोलते क्यों नहीं ?" तेज को चुप देखकर कृष्णादेवी ने फिर
।
"आपने मुझे सुबह क्यों नहीं बुलाया ?" आखिर तेज ने पूछ ही
या।
"मैंने तो कहा था, लेकिन नीना कहने लगीं, समय नहीं रहा···"
"मां !" तेज एकदम अवाक्-सा हो गया।
"मेरा दिल कहता है तेज, कि नीना सुखी नहीं है···तुम जाओ, उसे
स्टेशन से वापस ले आओ···मैंने योंही उसे भेज दिया···मेरा सिर फट
जाएगा तेज !"
"गाड़ी कै बजे छूटती है ?"
"ढाई बजे !"
"अब तो तीन बज चुके हैं।"
"जाओ मेरी नीना को वापस ले आओ···उसे उसके गांव से वापस
ले आओ। वह मुझसे कहती थी, आप मुझे सिर में दवा लगाने के लिए
ही रख लीजिए···वह ऐसा क्यों कहती थी तेज ?" और कृष्णादेवी
बेतरह व्याकुल हो उठी।

खून के छींटे

सावन के बादलों में से अभी एक फुहार पड़कर हटी थी। तेज को
ताल जाना था, लेकिन उसने अपना पूरा ट्रंक छान डाला, उसे एक भी
कमीज न मिली जिस पर पूरे बटन मौजूद हों। थककर उसने सुई-
गा निकाला और जिस कमीज़ पर केवल एक बटन की कमी थी, उस
बटन लगाने लगा।
उसने केवल दो-एक बार ही बटन में से सुई गुज़ारी होगी कि उसकी
ोर में से लहू रिसकर उसकी सफ़ेद कमीज पर एक धब्बा बना गया औ
वह बटन को वहीं छोड़ तौलिए के एक कोने को भिगोकर और साफ़
लगाकर लहू के उस धब्बे को छुटाने लगा।
"देखो जीवन बाबा···" सीढ़ियां चढ़ते हुए कदमों की आवाज़ सुन
तेज ने कहा।
जीवन बाबा आकर हंस पड़े। उन्होंने तेज के हाथों से कमीज ले

और उसे पलंग पर रखकर ट्रंक मे स दूसरा कमाज निकाला आर उसम बटन टांक दिए।

तेज कपड़े पहंपकर हस्पताल चला। जीवन बाबा ने ट्रंक में से सब कमीजें-पतलूनें निकालकर पलंग की चादर पर फैला दीं और बटनों का पत्ता, धागे की गोली और सुई लेकर बटन आदि लगाने लगे।

सावन के बादलों में फिर एक गहरा रंग आ रहा था, जब वीण आकर अपने काम में व्यस्त जीवन बाबा के सामने खड़ी हो गई।

"वीणा बेटी !" जीवन बाबा एकदम हैरान होकर बोले।

"हां बाबा !" हंसते हुए वीणा वहीं पलंग की बांही पर बैठ गई औ उसने जीवन बाबा के हाथों से कमीज और सुई ले ली।

"तेज तो घर में नहीं है।" जीवन बाबा ने कहा।

"मुझे मालूम है" वीणा ने मुस्कराकर कहा और कमीजों में बट टांकने लगी।

"वह हस्पताल गया हुआ है।" जीवन बाबा ने पुनः कहा।

"मैंने जाते हुए देखा था।" वीणा बोली, "मैं तो आपके पास आ हूं जीवन बाबा। क्या मैं आपके पास नहीं आ सकती ?"

"क्यों नहीं आ सकतीं बेटी···क्या मैं तुम्हारे लिए चाय बनाऊं ? मैंने तो बस इसलिए कहा था कि तेज शायद देर से आएगा···वह अभी अभी गया है···"

"मुझे मालूम है, वे देर से आएंगे···अच्छा बाबा ! आप दिन-भर क्य लिखते रहते हैं ?"

"मैं ?"

"तेज ने एक दिन मुझे बताया था कि आप बहुत बड़े लेखक हैं।"

"मैं अपने-आप को लेखक तो नहीं कहता बेटी, हां, जब मेरे मन में बहु कुछ इकट्ठा हो जाता है···मैं सोचता हूं, मैं किससे बातें करूं···और लिख-लिखकर अपने मन का बोझ हल्का कर लेता हूं···"

"लेकिन अखबार वाले तो आपके पीछे लगे रहते हैं···वे आपको बड़ लेखक मानते हैं···"

"बस इतनी-सी बात है बेटी, कि जो कुछ मैं कहता हूं, वह केवल मेरे ही मन में नहीं होता, वे बातें बहुत-सों के मन में होती हैं···मैं ज कभी समाज के उन कांटों का वर्णन करता हूं जिन्होंने राह चलते मे दामन को पकड़कर तार-तार कर दिया है तो मेरी कहानी सुनकर, जि किसी को वे कांटे चुभे हैं, उसे अपनी कहानी याद आ जाती है और व

वता है कि वह उसके अपने ही दु:ख का वर्णन है…"

"जीवन बावा ! यह सब लिखने वाले को ही तो कलाकार कहा
ाता है।"

"मुझे कला के बारे में कुछ ज्ञान नहीं है वीणा वेटी, लेकिन मुझे
इतना मालूम है कि हमारे संसार में बहुत कुछ गलत हो रहा है। मनुष्य
न तो स्वयं जीता है और न दूसरे को जीने देता है।"

"वह कैसे वावा ?"

"वीणा बेटी, जैसे-जैसे तुम जीवन को देखोगी तुम्हें मालूम होगा कि
मनुष्य के संस्कारों ने, मनुष्य के धर्म ने और मनुष्य की राजनीति ने मनुष्य
के मार्ग में कितने बड़े-बड़े पत्थर डाल रखे हैं, कैसे-कैसे कांटे वो रखे
और खाहम्खाह मार्ग को कठिन वना रखा है…"

"क्या मनुष्य के धर्म ने भी, वावा…?"

"मनुष्य धर्म का अर्थ ही नहीं समझा वीणा बेटी। मनुष्य ने तो धर्मों
को लोहे के हथियार बना डाला है, जो आपस में भिड़ जाते हैं और फिर
मनुष्य ही को लहूलुहान कर डालते हैं…मैं कैसी बातें ले बैठा हूं वीणा
वेटी। क्या तुम्हारे लिए चाय वनाऊं ?"

"नहीं बाबा, मेरा जी चाय पीने को नहीं चाहता…मुझे आपकी बातें
अच्छी लगती हैं। लेकिन मुझे यह वताइए कि मनुष्य प्राकृतिक जीवन
क्यों नहीं व्यतीत करता ?"

"क्योंकि वह हर चीज़ को व्यक्तिगत दृष्टिकोण से देखने लगा है।
मनुष्य ने सब मनुष्यों के लिए कभी कुछ नहीं सोचा। एक धनी व्यक्ति
जब अपने बंगले की नींव रखता है, वह कभी नहीं सोचता कि उसके पड़ो
में खड़ी तिनकों की झोंपड़ी उसे क्या कहेगी…लेकिन धन-दौलत और सु
वैभव सदा स्थापित नहीं रहते वेटी। कभी वह दिन भी आता है जब
झोंपड़ियों में से ऐसे सेलाव उठते हैं जो महलों के ऊंचे कंगूरों तक को
देते हैं…।"

"मुझे पूरी तरह समझ नहीं आई बावा, लेकिन आपकी बातें
अच्छी लगती हैं…आप चुप क्यों हो गए हैं?"

"मैं यही सोचता हूं वेटी…जब मनुष्य को प्राकृतिक जीवन
करना आ जाएगा…जब धरती की दौलत बांटने के लिए मनुष
नीच को बीच में नहीं लाएगा…जब वह मेहनत का मूल्य समझे
और अपना अधिकार लेते हुए वह दूसरे के अधिकारों को साम
उस समय…उस समय…"

"उस समय जीवन बाबा सब मनुष्य कितने अच्छे हो जाएंगे···" और वीणा ने हंसते हुए कहा, "बाबा, सब कमीज़ों में बटन लग गए हैं और सब पतलूनें ठीक हो गई हैं···इन्हें कहां रख दूं ?"

"इस ट्रंक में···आज तेज खुश हो जाएगा वीणा बेटी, जब वह अपना ट्रंक देखेगा···।"

"हां सच···बाबा ! आप बैठे यह काम कर रहे थे, मैंने आकर आपका कुछ हाथ बंटा दिया···मैंने आप ही का काम किया हैं न ?"

"हां बेटी, मेरा काम किया है।"

"इसीलिए उन्हें इस काम के बारे में कुछ न बताइएगा।"

"मैं समझा नहीं बेटी।"

मैंने उनका काम थोड़े ही किया है जो आप उन्हें बताएंगे। मैंने तो आपके लिए थोड़ा-सा काम किया है, इसलिए आपको बताने की ज़रूरत नहीं।"

"वीणा बेटी !"

"मैं तो बस आपसे बातें करने के लिए आई थी···क्यों बाबा, अगर किसी से अनजाने में पाप हो जाए तो वह कितना बड़ा पापी होता है ?"

"संसार में न कुछ बुरा है न अच्छा बेटी। हमारी नीयत ही उसे अच्छा या बुरा बनाती है।"

"लेकिन बाबा, अगर किसी के हाथों से कोई खून हो जाए···तो चाहे हाथों से अनजाने में खून हुआ हो···हाथों को खून तो लग ही जाएगा···" कहते-कहते वीणा की आंखें सजल हो उठीं, "देखो बाबा, मेरे हाथों पर खून के छींटे पड़े हुए हैं···देखो···" और अपनी छलकती आंखों के साथ वीणा ने अपनी दोनों हथेलियां जीवन बाबा ने सामने फैला दीं।

'बेटी, आज तुम्हारा मन ठीक नहीं है···मैं तेज को बुलाए लाता हूं···" जीवन बाबा ने घबराकर कहा।

"नहीं, बाबा, अगर उन्हें बुलाना होता तो मैं हस्पताल ही से बुला लेती। मैंने उन्हें हस्पताल जाते हुए देखा था···मैं तो आपके पास आई हूं जीवन बाबा···और बाबा, अगर मैं कभी-कभी आ जाया करूं तो कोई बुराई तो नहीं···?"

"बेटी, यह तुम्हारा अपना घर है, जब जी चाहे आओ।" जीवन बाबा ने कहा और क्षण-भर के बाद हंस दिए, "जब तुम पिछली बार आई थीं वीणा बेटी, तो तुमने कहा था कि अब जब मैं बुलाने आऊंगा, तभी

आओगी।"

"हां बाबा, लेकिन अब मुझे मालूम हो गया है कि आप कभी मुझे
ाने नहीं आएंगे।" वीणा ने सिर झुका लिया।

"यह भला कैसे हो सकता है वीणा बेटी? मैं तो मन ही मन में तुम्हें
ई बार बुला चुका हूं।"

"और हमेशा मन ही मन में बुलाते रहेंगे बाबा! कभी बुलाने नहीं
आएंगे।"

"वीणा बेटी!"

"इस बात को जाने दीजिए बाबा! मैं स्वयं ही आ जाया करूंगी··
लेकिन एक शर्त पर।"

"किस शर्त पर बेटी?"

"यही कि बाप-बेटी की इस मुलाकात को और कोई न जानने
पाए।" और वीणा के होंठों पर एक दर्द-भरी मुस्कराहट उभर आई।

"तेज भी नहीं?"

"नहीं वे भी नहीं···"

"तुम्हारा मंतलब क्या है वीणा देटी···"

"मुझे मालूम है कि आप बेटी का कहा नहीं टालेंगे···अब मैं जाती हूं
बाबा!" और वीणा ने उठकर, एक डिब्बे में जो कुछ वह अपने साथ लाई
थी, जीवन बाबा के आगे रख दिया।

"यह क्या?"

"आज मेरा जी चाहा था और मैंने अपने हाथ से ये पूड़े तले थे, इन्हें
आप आज शाम की चाय पर उन्हें दे दीजिएगा!" वीणा ने कहा लेकिन
कहते-कहते शर्मा गई।

"और मैं न खाऊं?" जीवन बाबा हंस पड़े।

"आप दोनों एक साथ ही खाएंगे।" वीणा मुस्करा पड़ी, फिर बोल
"लेकिन याद रखिए, बाप-बेटी की इस मुलाकात को कोई और न ज
पाए।"

"और मैं क्या कहूंगा वीणा बेटी, कि आज सावन के बादलों
पूरे गिरे हैं?" जीवन बाबा हंसे, वीणा भी हंस दी।

"चाहे बेटी के हाथों ने बनाए हों चाहे बाप के हाथों ने, किस
इस बात से क्या सरोकार?"

"और फिर किसी दिन तेज ने मुझसे कहा कि बाबा, आ
उसी तरह के पूड़े बना दो, तो फिर मैं क्या करूंगा?" जीवन बाब

खिलाकर हंस पड़े।

"आप किसी तरह कहीं से मुझे टेलीफोन कर दीजिएगा।" और वीणा हंसते-हंसते जीवन बाबा को नमस्कार करके चली गई।

वीणा चली गई, लेकिन जीवन बाबा उदास हो गए। वह सोचने लगे कि नीना अपना सब कुछ खो बैठी, तेज का जीवन भी खाली हो गया और वीणा की प्रसन्नताएं भी समाप्त होती जा रही हैं···यह सब क्या हो रहा है!

जीवन बाबा को बैठे-बैठे संध्या हो गई। उन्हें उस वक्त समय का ज्ञान हुआ, जब सीढ़ियों में तेज के कदमों की आवाज सुनाई दी। जीवन बाबा ने तुरन्त उठकर बिजली के स्टोव पर चाय का पानी रख दिया।

तेज के कपड़े अभी-अभी पड़ी हुई बूंदों से भीगे हुए थे। नई कमीज निकालने के लिए जब तेज ने अपना ट्रंक खोला तो उसकी सब कमीजों में बटन टंके हुए थे।

"मैं आपको बहुत कष्ट देता हूं बाबा।" तेज ने कहा।

"लेकिन मेरी उंगलियों से लहू नहीं बहता।" जीवन बाबा ने हंसकर कहा और मेज पर चाय की केतली के साथ-साथ पूड़ों की प्लेट भी रख दी।

प्याली में चाय उड़ेलकर पूड़ों का एक ग्रास लेते हुए तेज ने कहा, "बाबा, ये पूड़े किसने बनाए हैं?"

"सावन के महीने में पूड़े तो बनाने ही चाहिए," जीवन बाबा ने हंसकर बात का रुख बदल दिया।

"बाबा, क्या मेरे पीछे कोई आया था?" चाय पीते हुए तेज ने एक प्रश्न किया।

जीवन बाबा के लिए झूठ बोलना बहुत कठिन था लेकिन वे वीणा की बात भी नहीं टाल सकते थे।

"क्यों?" जीवन बाबा ने बस इतना ही कहा।

"कमरे में से खुशबू उठ रही है।" तेज हंस पड़ा।

"तुम्हारे अन्दर से उठ रही होगी बेटा।" जीवन बाबा मुस्करा दिए।

"शायद अब हस्पताल की दवाओं में गुलाब की खुशबू मिल गई होगी।" कहते-कहते तेज हंस दिया और जब पूड़ों का आखिरी ग्रास भी समाप्त हो गया तो तेज फिर हंसकर बोला, "बाबा, पूड़े तो बहुत ही स्वाद वाले हैं···और खाने को जी चाहता है···चलिए रात को खाना नहीं खाएंगे, कुछ पूड़े और बना लीजिए।"

जीवन बाबा एकदम घबरा उठे कि अब तेज को क्या उत्तर देंगे।
"उठिए बाबा, थोड़ा-सा आटा घोल लीजिए···चलिए मैं आपके
ास रसोईघर में बैठता हूं।" और तेज ने जीवन बाबा को उत्तर देने का
भी अवसर न दिया और उन्हें साथ ले जाकर सचमुच रसोईघर में जा
बैठा।
"यह लीजिए प्याला···यह लीजिए खांड···और सौंफ कहां है?" तेज
हंसे जा रहा था।
"सौंफ तो खत्म हो गई है बेटा! अब खा तो लिए हैं, फिर किसी
दिन बन जाएंगे।" आखिर जीवन बाबा ने कहा।
"बाबा···खाएंगे और आज ही खाएंगे···चलिए सौंफ के बिना
ही···"
"सौंफ के बिना ठीक नहीं बनेंगे बेटा···" जीवन बाबा कहते रहे
लेकिन तेज ने उनके हाथ में लिए हुए खांड वाले प्याले में पानी डाल दिया
और जीवन बाबा खांड और आटे को घोलने लगे।
तेज ने स्टोव पर तवा रख दिया और जब जीवन बाबा ने पूड़ा तलना
शुरू किया तो घुला हुआ आटा बुरी तरह तवे से चिपक गया।
"बाबा, क्या अब तलने वाली को भी बुलाऊं?" तेज खिल-खिलाकर
हंस पड़ा और जीवन बाबा की भी हंसी निकल गई।
"तुम कैसे जानते हो तेज?" हंसते-हंसते जीवन बाबा ने पूछा।
"मैं हस्पताल में काम कर रहा था जब माताजी ने मुझे बुला भेजा और
मुझे अपने पास बिठाकर पूड़े खिलाए। बिल्कुल ऐसे पूड़े थे। पूड़े खिलाते-
खिलाते माताजी ने यह भी बताया कि अभी वीणा ही ये पूड़े तल रही थी
और तलते-तलते न जाने कहां चली गई है।" और तेज ने हंसते-हंसते
बिजली का स्टोव बन्द कर दिया। अब तक तवे पर जलते हुए पूड़े की बू
ने लगी थी।
"सो पहले दिन ही हमारी चोरी पकड़ी गई है।" जीवन बाबा मुस्कर
ए।
"ताकि भविष्य में चोरी करने की हिम्मत न हो।" तेज हंस दि
किन जीवन बाबा गम्भीर हो गए।
"अगर अब तुमने जान ही लिया है तेज, तो मैं तुम्हारे साथ एक ब
बात भी करूंगा।" जीवन बाबा बोले।
"क्या?"
"यह कि वीणा के अन्दर बहुत गहरी उदासी है।"

"वह कैसे···उसने क्या कहा था ?"

"साफ-साफ तो कुछ नहीं कहा लेकिन मुझसे पूछती थी कि अगर किसी के हाथों से कोई खून हो जाए और चाहे अनजाने में हो, खून तो उसके हाथों पर लग ही जाएगा।"

"क्या वह ऐसा कहती थी ?" तेज की हंसी भी गम्भीरता में परिवर्तित हो गई।

"हां···और कहती थी, हमारी बाप-बेटी की इस मुलाकात का किसी को पता नहीं चलना चाहिए।"

"क्यों ?"

"न जाने क्यों···लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि उसका दिल बेहद दुःखी है और वह अपनी पीड़ा को तुमसे छुपाना चाहती है···"

"हूं···"

"तेज !"

"जी।"

"क्या मैं एक बात कहूं ?"

"कहिए।"

"मैं सोचता हूं, नीना अपना सब कुछ खो बैठी है और उसके बिना तुम्हारा जीवन भी खाली-खाली-सा हो गया है और वीणा की प्रसन्नताएं भी समाप्त होती जा रही हैं !···"

"बाबा, मैंने इससे पहले भी एक बार आपको बताया था कि मैं और नीना भाग्य की हवा में उड़ते हुए दो तिनके हैं···न जाने भाग्य हमारे साथ क्या-क्या खेल खेलेगा···लेकिन···वीणा···वीणा को तो खुश रहना चाहिए···"

"तेज, तुम उसे समझाते क्यों नहीं ? उसकी खुशी तुम्हारी खुशी से अलग नहीं है···"

"बाबा !"

"यह एक संयोग की बात है बेटा। अगर किसी तरह वीणा को नीना के दिल की बात पहले से मालूम हो जाती तो वह भी उतना ही बड़ा बलिदान कर सकती थी जितना कि आज नीना ने किया है···"

"बाबा !" तेज का स्वर कांप रहा था। इससे आगे वह कुछ न कह सका।

वापसी

नीना के पहले फेरे में ही न जाने क्या था कि सबके चेहरों पर किसी भय की गहरी परछाईं पड़ गई थी। कृष्णादेवी की आयु का बहुत बड़ा भाग उसके दिल में घाव डालता रहा था, पिछले कुछ वर्षों में नीना ने उसके जीवन में आकर जैसे सब घाव भर दिए थे लेकिन अब नीना के पहले फेरे ने जैसे एकदम सब घावों को छेड़ दिया था। हड्डियों में रची हुई पीड़ा का दौरा अब जैसे कृष्णादेवी के श्वास तक में रच-बस गया था।

"मुझे ऐसा लगता है कि अब मैं अधिक दिन ज़िन्दा नहीं रहूंगी। कुछ दिनों के लिए नीना को बुला भेजिए।" कृष्णादेवी बार-बार अपने पति से कहती।

देवराज को कुछ पता न चलता था कि नीना के ससुराल वालों को क्या हो गया था। वह ऊपर-तले तीन पत्र लिख चुका था लेकिन अभी तक न तो नीना आई थी और न ही पत्र का उत्तर मिला था।

भय की एक भयानक परछाईं तेज के भी पीछे पड़ी हुई थी। नीना की शादी के बाद अब तक उसने नीना को नहीं देखा था, लेकिन नीना की मां से उसने जो कुछ सुना था वह उसकी नींदों में साक्षात् रूप में आता रहता था। वह कुछ कह नहीं सकता था, कुछ कर नहीं सकता था लेकिन जब कभी वह कृष्णादेवी के पास बैठता, उसकी ज़बान एक मौन प्रार्थना बनकर कहती, "एक बार नीना को यहां बुलवा लीजिए, एक बार मैं देख लूं कि उसके साथ क्या बीत रही है···"

आखिर हारकर देवराज ने दो दिन की छुट्टी ली और नीना को लेने उसके ससुराल चला गया।

इन दोनों दिनों और दोनों रातों में जैसे कृष्णादेवी और तेज की आंखें कोठी के फाटक के सामने बिछी रहीं।

पिछले दिनों में अपनी बेटी का विवाह करते समय मां के दिल में जुदाई का एक दर्द ज़रूर था लेकिन साथ ही विवाह की प्रसन्नता भी थी। जीवन में पहली बार ऐसा अवसर आने का चाव था और था बेटी द्वारा अपनी आशाओं की पूर्ति का उल्लास। बड़े चाव के साथ उसने नीना का दहेज बनाया था। बड़े प्रयत्नों से उसने दूर-दूर से सोफे मंगवाए थे और एक-एक आवश्यकता को दो-दो बार पूरा किया था; लेकिन न जाने क्यों थोड़े-से दिनों में ही उसके सिर पर से खुशियों की धूप ढल गई थी और अब उसे केवल जुदाई की परछाइयां नज़र आ रही थीं···।

आखिर दूसरे दिन सन्ध्या समय कोठी के फाटक के सामने बिछी हुई आंखों ने नीना का मुंह देखा।

नीना का मुंह हंस रहा था, शायद नीना के कानों में क्षण-भर पहले के वे बोल गूंज रहे थे जो—उसके पिता ने कहा था—"तुम्हारी माता की हालत अच्छी नहीं है मेरी बेटी ! तुम अपने आंसू पोंछ डालो ताकि अन्तिम समय वह तुम्हारा दुःख न देखे।"

और नीना का मुंह हंस रहा था। जिस समय वह मां के गले से लगी, उसके भीतर से एक चीख-सी उभरी जिसे बड़े प्रयत्नों से उसने भीतर-ही-भीतर दबा लिया।

उसके बाद नीना तेज से मिली। तेज कब से उसकी प्रतीक्षा में था और आज वह इस प्रकार उससे मिली जैसे महीनों ही नहीं वर्षों के बाद मिल रही हो। उसके चेहरे पर से दिनों का जमा हुआ बेगानापन उतर गया और उसकी जगह एक ऐसे सम्बन्ध का प्रतिबिम्ब उभर आया जैसे वह वही नन्ही-सी नीना हो जो कभी तेज के साथ खेला करती थी।

तेज ने नीना को अपने गले से लगाया, अपनी पोरों से उसके आंसू पोंछे, हाथों के स्पर्श से उसके होंठों को हंसाया और अपनी कमीज़ के बाजू से बार-बार अपनी आंखें पोंछ लीं।

"अब भी नीना, क्या तुम एक ही रात के लिए आई हो?" मां ने अपनी प्रसन्नता से भयभीत होकर पूछा।

"नहीं मां, अब मैं तुम्हारे ही पास रहूंगी।" नीना मां से लिपट गई।

"जब तक तुम अच्छी नहीं हो जाओगी, मैं उनसे कह आया हूं कि नीना तुम्हारे पास रहेगी।" नीना के पिता ने कहा।

"तो फिर मैं कभी अच्छी नहीं हूंगी—नीना मेरे पास रहेगी।" मां ने पागलों की तरह कहा और सब हंस पड़े।

"आप जगन को भी यहीं बुला लीजिए, ताकि वे लोग नीना को जल्दी न बुला भेजें।" कृष्णादेवी ने फिर कहा।

"तुम चिन्ता न करो।" देवराज ने उत्तर दिया।

नीना को जो-जो चीजें भाती थीं, उन्हें इस बीमारी में भी मां नहीं भूली थी और उसने वे सब चीजें मंगवा रखी थीं।

नीना चाय बनाती रही। तेज कुर्सी पर बैठा रहा, कृष्णादेवी पलंग पर लेटी रही और देवराज पलंग की बांही पर बैठकर मेज़ की इस छोटी-सी रौनक को देखता रहा।

पहली रात···दूसरी रात···और अब सब रातें नीना की अपनी थीं।

नी मां के घर में···अपनी मां के आंगन में···अपनी मां की गोद में···।
जहां तक संभव होता नीना रात को जागती रहती। जब भी क्षण-भर
के लिए उसकी आंख लगती, उसे बड़े भयानक सपने नज़र आने लगते।
कभी-कभी उसके उन सपनों में विवाह की पहली रात भी होती :
"क्यों नीना! तेज की तस्वीर कहां है?" आश्चर्यचकित-सी नीना कहती।
"आप? आपको क्या हो गया है?" जगन की आवाज़ आती।
और फिर नीना के सपनों में अपने विवाह की पहली रात की वह
घटना आ जाती जब जगन ने अपने सूटकेस में से तेज की तस्वीर निकाल-
कर सामने की दीवार पर टांग दी थी और नीना एक घायल कबूतरी की
तरह ज़मीन पर तड़पने लगी थी और जगन ने उसे बाज के पंजों की तरह
अपनी बांहों में दबोच लिया था।
विवाह की दूसरी रात···तीसरी रात···और नीना के सपने और भी
भयानक होते चले गए। प्रतिक्षण जगन और से और होता चला गया।
प्रतिक्षण जैसे नीना के बदन पर घाव पड़ते गए।
और अब भी जब वह अपनी मां के कमरे में सो रही होती, नींद
उसका लहू निचोड़ती, बीते हुए दिन उसके कलेजे से टकराते, जगन का
चेहरा उसकी हड्डियों को कुरेदता लेकिन जब डरकर उसकी नींद उचट
जाती, पसीने से भीगे हुए माथे में उसे पिताजी के वे बोल स्मरण हो उठते
"तुम्हारी मां की हालत अच्छी नहीं है। तुम अपने आंसू पोंछ लो मे
बेटी! अन्तिम समय वह तुम्हारा दुःख न देखे।" और नीना अपने म
का पसीना पोंछ डालती और अपने होंठों पर हंसी ले आती।
कृष्णादेवी खुश थी, लेकिन उसकी हालत अच्छी नहीं थी। वह
तो बड़ी आशापूर्ण बातें करती थी लेकिन डाक्टरों को उसके स्वस्थ हो
अधिक भरोसा नहीं था। प्रतिदिन के टीकों से जैसे वह उसकी ज
घसीट-घसीटकर आगे बढ़ा रहे थे। लेकिन कृष्णादेवी हंसते-हंसते कह
"हूं! मुझे हुआ ही क्या है? जब तक नीना मेरे पास है, मैं न
सकती।"
और नीना मन ही मन में कहती, "मां, मैं तो तुम्हारे सा
अगले जन्म में भी जाने को तैयार हूं।"
इन दिनों नीना को खाया-पिया नहीं पचता था। मां ने
जान लिया कि नीना के शरीर में एक जीव उत्पन्न हो रहा
जीने की इच्छा और प्रबल हो उठी। उसने सोचा, वह अवश्य
वह जीवन की नई व्यस्तताएं देखेगी, वह अपनी गोद में नी

बच्चे को खिलाएगी और उसे अपनी पोरों में एक कोमल-से बालक का स्पर्श अनुभव होने लगता। डाक्टरों की आशा के विपरीत अब कृष्णादेवी पहले से तगड़ी हो रही थी।

"बच्चा···बच्चा···" बच्चे के सम्बन्ध में सोच-सोचकर नीना भय-भीत हो जाती, कांप उठती। उसे याद आया :

जब वह अपनी ससुराल में थी और एक रात उनके गांव की दाई आकर नीना को देख गई थी और जाते समय रुपया और गुड़ की भेली झोली में डलवाकर उसके ससुराल वालों को सात-सात बधाइयां दी थीं, उसी रात···हां, उसी रात···जगन एक भयानक हंसी हंसा था—"बस आज···आज मैंने बदला ले लिया है···अब से मेरा-तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं···लेकिन तुम आधु-भर मेरी कैद में रहोगी···अब चाहे तुम तेज के पैरों पर फूल चढ़ाओ, चाहे लेटो, कोई कष्ट न होगा···मैंने अपनी हार का बदला ले लिया है···" और जगन की हंसी भयानक से भयानकतर होती गई।

नीना के कान जैसे पागल हो गए, नीना की आंखें जैसे बेहोश हो गईं "क्या यह वही जगन है जो मुझे नहर से पार खेतों की सैर कराया करता था?" वह रह-रहकर सोचती—"मैंने तो विवाह से पहले इसे सब कुछ बता दिया था। इसे तो मालूम था कि मैं तेज से प्रेम करती हूं। मैंने तो इससे पहले ही कह दिया था कि वह मुझे कभी तेज का उलाहना नहीं देगा··· फिर इसने मुझसे विवाह क्यों किया···मैंने तो इसे एक पति के पूरे अधि-कार देने चाहे थे···" और यह सब सोचते-सोचते जैसे नीना के शरीर में पिघला हुआ शीशा उतर जाता।

जगन ने उससे एक बदला लेने के लिए विवाह किया था और केवल इतना ही नहीं, नीना को धीरे-धीरे यह भी मालूम हो गया कि नीना के ससुर ने नीना के पिता की पूरी जायदाद पर कब्ज़ा जमाने के लिए यह विवाह रचाया था, उनके ऊपर न-जाने कब का कितना ऋण था और अब वह भी स्पष्ट शब्दों में नीना से कहने लगा था कि वह अपने पिता से दस हज़ार रुपया नकद लाकर दे।

उन दिनों नीना एक प्रकार से जीवन और मृत्यु के बीच लटकी हुई थी और फिर जब उसके पिताजी से साफ-साफ कह दिया गया कि वे नीना को तभी मायके भेजेंगे यदि वे उसे वापस भेजते समय दस हज़ार का प्रबन्ध कर दें, तब उस समय नीना ने फैसला कर लिया था कि अब वह जीवित नहीं रहेगी।

ना को अपने पिताजी के साहस की याद आती थी, उन्होंने
अपने क्रोध को अपनी मुट्ठियों में समेट लिया था, पिस्तौल पर पड़ा
अपना हाथ उन्होंने अपनी जेब में डाल लिया था। फिर चुपचाप
ने नीना को तैयारी करने के लिए कहा और आते समय जगन से
ते आए कि जब तक वे स्वयं न लिखें कोई व्यक्ति नीना को लेने न
ए।

उसके पिताजी उसे ले आए। रास्ता-भर वह उनसे कहती रही कि
दि वे उसके ससुराल वालों को एक रुपया भी देने के बारे में सोचेंगे तं
वह उसी क्षण आत्महत्या कर लेगी। और बातों-बातों में नीना ने उन्हें यह
भी बता दिया कि जगन ने भीतर ही भीतर उससे सब सम्बन्ध तोड़ लिए
हैं।

यह भेद आज एक केवल नीना और उसके पिताजी को ही मालूम
था। तेज जब कभी नीना के पास बैठता, उसकी ससुराल की कई बातें
उससे पूछना चाहता, लेकिन नीना की चुप्पी ने और नीना के चेहरे पर
उभरे हुए दुःख के प्रतिबिम्ब ने अभी तक तेज को ऐसी बातें नहीं पूछने दी
थीं। और अब जबकि चुपचाप दिन व्यतीत होते जा रहे थे, अचानक एक
दिन नीना को लेने के लिए जगन आ पहुंचा।

देवराज घर पर नहीं था, नीना जहां खड़ी थी वहीं की वहीं खड़ी
रह गई।

कृष्णादेवी ने जगन की पीठ पर हाथ फेरा, घर की कुशलता आदि
पूछी, चाय मंगवाई और फिर उसे नीना के कमरे की ओर भेज दिया।

होनी के इस धक्के को सहन करने के लिए अब तक नीना ने अपने-
आप को कुछ संभाल लिया था।

"आप आ गए हैं, बैठिए, लेकिन पिताजी नाराज होंगे।" जगन
आते ही नीना ने कहा और उसके बैठने के लिए एक कुर्सी सरकाई।

"मैं पिताजी को नहीं जानता, मैं तुम्हें लेने आया हूं और तुम्हें जा
पड़ेगा।"

"जरा धीमे बोलिए! माताजी की तबीयत ठीक नहीं है।"

"अगर मांताजी की तबीयत का इतना ही खयाल है तो चुपचाप
हो जाओ, मैं कुछ नहीं कहूंगा।"

नीना मौन रही, फिर धीरे से उसके होंठ हिले, "मैं आपके
की शर्तें पूरी नहीं कर सकती इसलिए मैं जा भी नहीं सकती।"

"ओह..." जगन हंस पड़ा और ऊंचे स्वर में बोला, "दस हजा

कुछ ज्यादा रुपया नहीं है, तुम्हें जाना पड़ेगा, मैं तुम्हें लेने आया हूं।"

"ज़रा धीमे बोलिए। भगवान् के लिए···पिताजी ने आपसे कहा था कि जब तक वे पत्र न लिखें, कोई लेने के लिए न आए···"

"इससे अच्छा और कौन-सा अवसर हो सकता है···अगर रुपया तैयार नहीं है तो मैं अभी जाकर सब कुछ तुम्हारी मां को बताए देता हूं···" और वह कुर्सी से उठ खड़ा हुआ।

"भगवान् के लिए···" नीना ने उसकी बांह पकड़ ली, "मेरी मां को कुछ मालूम हो गया कि मैं इतना दुखी हूं तो वह प्राण दे देगी।"

"मां का इतना दर्द है तो बाप से कहो, रुपये दे दे···" जगन अभी यह कह ही रहा था कि देवराज उसकी आवाज़ सुनकर कमरे में आ गया।

"यह लो रुपया···" और देवराज ने जगन की छाती पर पिस्तौल तान दिया।

जगन का चेहरा पीला पड़ गया लेकिन फिर संभलकर बोला, "मुझे मारना इतना आसान नहीं है, आपकी बेटी का जीवन बर्बाद हो जाएगा।"

"मेरी बेटी का जो जीवन बर्बाद होना था, हो चुका!" देवराज ने कहा और बायें हाथ से जेब में से एक कागज़ निकालकर मेज़ पर रख दिया।

आवाज़ें बाहर के आंगन तक पहुंच चुकी थीं और कृष्णादेवी कांपते-कांपते अपने पलंग से उठकर इधर को आ रही थी।

"यह लो कागज़ और कलम। तुम्हें अभी सब नाता समाप्त करना होगा। तुम आज से कई दिन पहले नीना से कह चुके हो कि अब तुम्हारा-उसका कोई सम्बन्ध नहीं रहा, अब यह सब तुम्हें लिखकर देना होगा।" पिस्तौल पर देवराज की पकड़ और भी मज़बूत हो गई।

"हाय, यहां क्या हो रहा है?" कृष्णादेवी के मुंह से निकला और वह नीना के कंधे का सहारा लेकर खड़ी हो गई।

जगन के शरीर में एक कम्पन-सा उत्पन्न हुआ और उसने देवराज के चेहरे की ओर देखा। देवराज की आंखों में लहू उतर आया था और आंखें सुर्ख हो रही थीं।

कांपते हुए हाथों से जगन ने कलम उठाया और जो कुछ देवराज कहता गया, वह कागज़ पर लिखता गया। आखिर देवराज के कहने पर उसने यह भी लिख दिया कि नीना के होने वाले बच्चे पर जगन का कोई अधिकार नहीं होगा।

देवराज ने कागज़ अपने बायें हाथ से ले लिया और दायें हाथ से उसी प्रकार पिस्तौल ताने दांतों तले होंठ काटकर बोला, "अभी यहां से निकल

ी और अगर फिर कभी इस शहर की ओर तुमने मुंह किया तो मेरी
स के आदमी तुम्हारा सिर उड़ा देंगे।"
कृष्णादेवी होनी के इतने बड़े धक्के के लिए तैयार नहीं थी। जगन
ी समय कमरे से निकल गया लेकिन उस रात···उस रात कृष्णा के
थे की नस फट गई और डाक्टरों ने जिस मृत्यु को कुछ पीछे डाल दिया
वह मृत्यु उसी रात आ धमकी।

फूलों-पत्तियों की कहानी

नीना से मां की जुदाई सहन नहीं हो रही थी और तेज के लिए नीन
का दुःख असह्य था। दोनों के दिन और दोनों की रातें दिल के दुःखों
जूझती रहीं। कई महीने व्यतीत हो गए···
···कई महीने व्यतीत हो गए। नीना का स्वास्थ्य उसी प्रकार बिगड़ा
हुआ था लेकिन फिर भी उसके चेहरे पर पिछले महीनों में जो गहरी
उदासियों की धूल जम गई थी, धीरे-धीरे उतरती जा रही थी और धीरे-
धीरे चेहरा का निखार लौट रहा था।
देवराज के बंगले में एक नीम का पेड़ था। जब नीना अपने पिता को
सुबह का नाश्ता कराकर दफ्तर भेज देती तो स्वयं उसी पेड़ के नीचे पलंग
बिछवाकर लेट जाती। देवराज ने विशेष रूप से उसके लिए एक दासी रख
दी थी जो हर समय नीना की देखभाल करती रहती थी। नीम के पेड़ तले
लेटी हुई नीना को वह हल्के-हल्के दबाती, उसके सिरहाने बैठकर घण्टों
उसके बालों को संवारती और हर प्रकार से उसका दिल बहलाने की
कोशिश करती।
"डाक्टर बाबू आए हैं!" नीना के पास बैठे हुए बाहर के फाटक की
ओर देखकर दासी ने कहा।
"जाओ, अन्दर से एक कुर्सी ले आओ।" नीना ने उससे कहा और
फाटक की ओर से आते हुए तेज को देखने के लिए तकिये पर दाहिनी बांह
की कुहनी के सहारे जरा ऊंची उठ गई।
नीना अपनी ओर आते हुए तेज को देखती रही। उसे कुछ ऐसा लगा
कि उस पेड़ की छांह गहरी हो गई थी और नीम की पत्तियों ने वायु में
और भी सुगन्ध भर दी थी।
"क्या हाल है?" तेज ने आते ही पूछा।
नीना के चेहरे पर प्रभात के पहले प्रकाश जैसी एक रोशनी उत्पन्न

हुई और उसने पलंग पर पड़ी हुई नीम की पत्तियों की एक मुट्ठी भरकर पलंग पर बैठे हुए तेज के हाथ पर पलट दी।

तेज के लिए कुर्सी आ गई थी। नीना ने दासी से सम्बोधित हो धीमे से कहा, "थोड़ी देर बाद चाय ले आना।"

तेज कुर्सी पर बैठ गया और नीना की दी हुई नीम की पत्तियों को अपने दोनों हाथों में मसलने लगा।

"हाथ कड़वे हो जाएंगे।" नीना ने हंसकर कहा।

"लेकिन इनकी कड़वाहट से सेहत अच्छी हो जाती है।" तेज भी हंस दिया।

"आपको एक चीज़ दिखाऊं"—और नीना ने अपने तकिये के नीचे से एक छोटी-सी पोटली निकालकर खोली।

"यह क्या है?"

"अब तो सूख गया है।"

"लेकिन यह है क्या?"

"आमों का बौर।"

"कब से संभालकर रखा हुआ है?"

"बहुत दिन पहले का है···आज सुबह जब मैं ट्रंक में से कपड़े निकालने लगी तो यह निकल आया···आज मैं आपको इसकी कहानी सुनाऊंगी।"

"इसकी कहानी?"

"बहुत लम्बी कहानी है।"

"नीना, शायद तुम्हें याद होगा कि खट्टों की बाड़ के पास भी एक कहानी ने जन्म लिया था···"

"तेज!"

"क्या उस कहानी को भूल चुकी हो नीना?"

"वह कहानी अब नीम की पत्तियों की कहानी बन गई है···नीम की पत्तियों जैसी कड़वी और कसैली···आप मेरी बात सुनेंगे या नहीं?"

"मुझे तो एक ही कहानी आती है नीना! जो कहानी खट्टों की बाड़ से शुरू हुई थी और अब नीम की पत्तियों में से गुज़र रही है···"

"तेज, क्या तुम्हें मालूम है कि यह कहानी कहां समाप्त होगी?" नीना ने मुस्कराकर पूछा।

"कहां?"

"जब खट्टों की बाड़ के पत्ते और नीम के पेड़ की पत्तियां एक दिन

न जाएंगी।" नीना की मुस्कराहट में एक वेदना-सी आ गई।

"फूल ?"

"हां"

"किस तरह ?"

"जब मनुष्य जीवित होता है तो लोग उसकी हड्डियों को हड्डियां
हते हैं लेकिन जब वह मर जाता है तो लोग उसकी हड्डियों को फूल
कहते हैं।"

"नीना !"

"मैंने ठीक कहा है तेज ! जब खट्टों की बाढ़ के पत्ते और नीम के पेड़
की पत्तियां मेरे शरीर के फूल बन जाएंगी तब···"

"नीना···" तेज की आंखें सजल हो उठीं।

"छोड़िए इस कहानी को···अभी इसे नीम के पेड़ के नीचे ही सस्ताने
दीजिए···आज मैं आपको आमों के बौर की कहानी सुनाऊंगी···"

"नीना···!"

"जब मैं गांव में थी···एक दिन मेरा बिल्कुल जी नहीं लग रहा
था···गर्मियों की तपती दोपहर थी···हमारी गली के पिछवाड़े में आमों
का एक बाग था, मैं अकेले ही उस बाग में चली गई···"

"फिर ?"

"पूरे बाग में जैसे किसी ने बौर की चादर बिछा दी थी···लेकिन
वहां मैंने देखा कि एक पेड़ के इर्द-गिर्द किसी ने फूल बिखेरे हुए थे और पेड़
की जड़ों में किसी ने दूध डाला हुआ था···पहले तो मैं डर गई शायद किसी
ने कोई जादू-टोना किया हुआ है लेकिन इतने में वहां एक बूढ़ा-सा माली आ
गया और वह मुझसे कहने लगा कि बेटी डरो नहीं···यहां कोई जादू-टोना
नहीं किया गया, लोग इस पेड़ की पूजा करते हैं···।"

"पूजा ?" तेज ने पूछा।

"हां, माली कहने लगा कि इस पेड़ से गिरे हुए बौर को लोग मा
टेकते हैं, इसकी मन्नत मनाते हैं कहते हैं। इसकी पूजा करने वालों की म
कामनाएं पूरी हो जाती हैं। लोग उस पर दूध की लस्सी चढ़ाते हैं,
और फूलों के साथ शीश झुकाते हैं···उस वृक्ष की छाया सब पे
ज्यादा घनी थी, उसकी टहनियों में सबसे ज्यादा बौर लगा हुआ था
उस पेड़ को फल नहीं लगता था···।"

"फल नहीं लगता ? यह कैसे हो सकता है !" तेज ने कहा।

"माली भी कहने लगा कि कभी किसी ने ऐसी बात नहीं

लेकिन इस पेड़ को सबने अपनी आंखों से देखा है और फिर माली ने मुझे उस पेड़ की कहानी सुनाई।"

"क्या ?"

"माली कहने लगा कि कई साल पहले, जब उसके बाप का बाप उस बाग का माली था, बाग के मालिक की एक बहन थी, राजी···।"

"राजी ?"

"हां ! और माली कहने लगा कि राजी गर्मियों की तपती दोपहर को अपने भाइयों से चोरी से इस बाग में अपने प्रेमी से मिलने आया करती थी। उसके प्रेमी का नाम पूरन था।"

"पूरन ?"

"राजी और पूरन उस पेड़ की छांह में बैठकर अपने-अपने दिल की बातें करते थे, बौर की मुट्ठियां भर-भरकर उससे खेलते थे, और राजी उस बौर की मुट्ठियां भर-भरकर पूरन की हथेलियों पर उड़ेला करती थी···और माली कहने लगा, लोगों का कहना है कि राजी के चेहरे का रंग केसर के फूलों जैसा था और वह अलसी के फूलों जैसी कासनी चुनरी ओढ़ा करती थी। एक दिन पूरन ने राजी से कहा कि वह साल-भर के लिए कहीं बाहर जा रहा है और लौटती गर्मियों तक वह फिर अपनी राजी के पास वापस आ जाएगा।"

"फिर ?" तेज ने पूछा।

"और राजी ने बौर से लदी हुई उन टहनियों की सौगन्ध खाकर कहा कि वह पूरन के बिना उस पेड़ का फल नहीं चखेगी।"

"फिर ?"

"असल में बात यह थी कि राजी के भाइयों ने पूरन से कहा था कि अगर वह गांव में पक्का घर बनवा ले तो वे राजी का ब्याह उससे कर देंगे।"

"और पूरन रुपया कमाने के लिए शहर चला गया ?" तेज ने पूछा।

"हां, कहते हैं राजी उससे कहती रही कि उसके लिए पूरन की झोंपड़ी भी महलों के बराबर है लेकिन पूरन ने उसके भाइयों को वचन दिया था कि वह शहर से लौटते ही गांव में पक्के मकान की नींव डाल देगा···कहते हैं पूरन ने गांव-भर से कहा कि उसने राजी से सच्चा प्रेम किया है और वह राजी को शहनाइयों के साथ ब्याहकर ले जाएगा।"

"फिर ?"

"पूरन शहर चला गया लेकिन फिर कभी लौटकर न आया।"

यों ?"
माली कहता था कि असल में राजी के भाइयों ने पूरन के साथ धोखा
···गांव वालों को यही आशा लगी रही कि पूरन शहर गया हुआ है
न राजी के भाइयों ने पूरन को जान से मार डाला था···"
"ओह···"
"कहते हैं पूरन का इन्तजार करते-करते राजी का चेहरा सूखे पत्तों
ा पीला पड़ गया।"
"फिर ?"
"एक दिन उसके भाइयों ने जबर्दस्ती उसका ब्याह रचा दिया और
जिस दिन राजी की बारात आई राजी घर से भागकर उस बाग के उसी
पेड़ के नीचे आई और बड़ी ऊंची आवाज में पूरन को आवाजें देने लगी···"
"फिर नीना···?"
"फिर, माली कहता था, उसके दादा ने अपने कानों से वह आवाजें
सुनी। पूरन का नाम ले-लेकर वह बैन करती रही और कहती रही कि इन
टहनियों का सारा बौर झड़-झड़कर मिट्टी हो जाएगा, लेकिन पूरन ! तुम्हारे
बिना इनमें फल नहीं आएगा···"
"ओह···।"
"और माली कहता था कि राजी ने यह भी कहा था कि उस पेड़ की
बौर-भरी टहनियां सदा उसके और पूरन के सच्चे प्रेम की कहानी सुनाएंगी
···और कहते हैं, पूरन को आवाजें देते-देते राजी ने वहीं जान दे दी···"
"ओह···"
"माली कहने लगा कि जब से तब तक जब भी वह रुह आती है, उस
पेड़ की टहनियां बौर से लद जाती हैं लेकिन सारा बौर झड़ जाता है और
उस पेड़ में फल नहीं आता।" नीना ने अपनी चुनरी के पल्लू से अपनी आंख
पोंछ लीं।
"नीना !"
"हां तेज, उस पेड़ की टहनियों में से कोयल की आवाज आ रही
लेकिन मैंने बहुत देखा, मुझे कोयल कहीं नजर नहीं आई। माली कहने
कि उन टहनियों के झुरमुट में से हमेशा कोयल की आवाज आती रह
लेकिन कोयल कभी दिखाई नहीं देती और लोगों का कहना है कि
की आत्मा कोयल का रूप धारकर अभी तक वहां कूकती है···।"
"नीना, यह ठीक है कि हमारी बुद्धि इस बात को स्वीक
करती कि उस पेड़ में बौर आता है लेकिन फल नहीं आता फि

बात को मानने को जी चाहता है।"

"उस पेड़ से इतना बौर झड़ रहा था तेज, कि थोड़ी-सी देर में ही मेरे हाथों पर, मेरे सिर पर बौर ही बौर हो गया। मैं उस बौर की मुट्ठियां भर-भरकर अपनी आंखों से लगाती रही और बौर की एक मुट्ठी भरकर मैंने अपने इस रूमाल में बांध ली।"

"और फिर नीना, तुमने वहां क्या मन्नत मानी थी?" तेज ने अपने आंसू पोंछते हुए पूछा।

"मैंने?" नीना हंस पड़ी और कहने लगी, "मैंने यह मांगा था तेज, कि जिस तरह राजी के होंठों पर भी उसके अन्तिम श्वास तक पूरन का नाम रहा था, मेरे होंठों पर भी मेरे अन्तिम श्वास तक वही नाम रहे जो नाम पहली बार मेरे होंठों पर आया था।"

"नीना!",

"तेज, विरहा की मंज़िल भी प्यार की मंज़िल है तेज···जिस रात विवाह के मंडप के गिर्द मेरे पैरों ने फेरे लिए थे उस रात मैंने अपने शरीर से अपनी आत्मा को चीरकर अलग कर दिया था···और वह अब तक···"

"बस-बस नीना···तुमने तो मुझे पागल कर दिया है।" तेज कुर्सी पर से उठ खड़ा हुआ और यों ही नीम की झुकी हुई शाखाओं से पत्ते तोड़ने लगा।

"बीबीजी!" चाय ले आऊं?" दासी ने आकर पूछा।

"हां।" नीना ने कहा और फिर तेज की ओर देखकर बोली, "अब तो कुछ ही महीने रह गए हैं तेज! फिर मुझे आमों के बौर से मांगी हुई मुराद मिल जाएगी।"

"नीना, क्या अब कोई और दुःख बाकी है मुझे देने के लिए लिए?" तेज ने फिर से नीना के पास बिछी हुई कुर्सी पर बैठते हुए कहा।

"हां···अभी एक पड़ाव और रहता है···फिर बस···"

"नीना, तुम्हें भ्रम हो गया है।"

"नहीं तेज, मुझे विश्वास हो गया है कि अभी तक मेरी मां की आत्मा भटक रही है। उसका प्यार आयु-भर अपनी मंज़िल को ढूंढता रहा लेकिन एक धोखा खाकर रह गया और उसने अपनी मंज़िल ढूंढने के लिए मेरे शरीर में दूसरा जन्म लिया है तेज। मैंने तुम्हें देखा और प्यार को अपनी मंज़िल दिखाई दे गई। लेकिन इस जन्म में भी प्यार के पैरों को मंज़िल पर पहुंचने का मार्ग न मिला और वह विरह के अंधेरों में बिलखने लगा—लेकिन मुझे विश्वास हो गया है तेज, कि अब उस प्यार की भटकती हुई

तीसरा जन्म लेगी और अपनी मंजिल का मार्ग भी ढूंढ़ लेगी···

"नीना, तुम यह सब क्या कह रही हो···?"

"मैं भी अपनी मां की तरह जब एक बच्ची को जन्म दूंगी, मेरा यहां सफर समाप्त हो जाएगा।"

"नीना···" तेज रो उठा।

"आप लोग उसका नाम भी नीना रख दीजिएगा।"

"उफ नीना···"

"वह मेरी उस मां का तीसरा जन्म होगा···और इस बार उसका प्यार अपनी मंजिल पा लेगा।" नीना ने बड़े सन्तोषपूर्वक ये शब्द कहे। छोटी मेज पर चाय आ चुकी थी। नीना ने दो तकियों का सहारा लिया और पलंग पर बैठकर चाय बनाने लगी।

"नीना, यह तुम्हारे भ्रम की कहानी है···जन्म-वन्म कुछ नहीं है··· तुम्हें जीना होगा···।"

"भ्रम ही सही तेज! लेकिन उस भ्रम में से मुझे शान्ति मिलती है।"

"नीना···"

"अब इस जीवन में मुझे अंधेरा ही अंधेरा नजर आता है···लेकिन मैं यह सोचकर खुश हो जाती हूं कि अब मेरे अगले जन्म में एक प्रकाश जन्म लेगा···"

"मैं कह रहा हूं नीना कि तुम्हें जीना, पड़ेगा···" तेज तड़पकर बोला। "अंधेरे मार्ग को पार करना बहुत कठिन होता है तेज। तुम क्यों यह सोचते हो कि यह मार्ग और लम्बा हो जाए···"

"उफ···नीना···"

"उस छोटी नीना के भाग्य को तुम अपने हाथों से बनाना तेज।"

"भगवान् के लिए चुप हो जाओ नीना···" तेज की आंखों से आ गिरकर उसकी चाय की प्याली में मिल गए।

कच्चे धागे

"वीणा!" तेज ने धीमे स्वर में आवाज दी और वीणा के क दरवाजा खटखटाया।

पहचाने हुए हाथों की थपक के साथ वीणा के दिल के सब त उठे और पहचाने हुए स्वर के साथ उसके मन के सब स्वर जाग "आप?" वीणा के हृदय का समस्त स्वागत आश्चर्य का

बन गया।

"वीणा !"

"जी !"

"मुझे मालूम होता है मैं दिन-प्रतिदिन बुजुर्ग बनता जा रहा हूं। 'तुम' से 'आप' बन गया हूं···" तेज हंस पड़ा।

"जब मनुष्य, मनुष्य से देवता बन जाए तब वह 'तुम' से 'आप' बन ही जाता है।" गम्भीर-सी होकर वीणा ने कहा।

"देवता ! क्या अब मैं देवता बन गया हूं वीणा ?"

"···" वीणा बोली नहीं लेकिन उसकी आंखों में कुछ ऐसा आदर-सा उत्पन्न हो गया कि तेज की नज़रें झुक गईं।

"इतनी ऊंची पदवी पर पहुंचकर मैं क्या करूंगा वीणा।" तेज ने संभलकर उत्तर दिया और एक कुर्सी को खिड़की के पास सरकाकर उस पर बैठ गया।

"पत्थर बनकर बैठे रहिएगा।" वीणा ने मुस्कराकर कहा और वह अपने पलंग की बांही पर बैठ गई।

"पूजा कौन करेगा ?" तेज ने हंसकर कहा।

"हम ! जिनके भाग्य में पुजारी बनना लिखा है।" वीणा ने उत्तर दिया।

"अच्छा पुजारीजी ! बहुत पूजा हो चुकी, अब अपने देवता से वरदान तो ले लीजिए।"

"एक जन्म तो बहुत नहीं होता। इस जन्म में पूजा कर लूं, वरदान किसी दूसरे जन्म में ले लूंगी।"

"अगर इतनी-सी पूजा से ही वरदान मिल जाए तो···"

"मुझे वरदान देने से पहले ही मेरे देवता के हाथ खाली हो गए हैं—अब खाली हाथों से किसी को क्यों आजमाते हो देवता ! मुझे वरदान नहीं चाहिए।" और वीणा ने नज़रें झुका लीं।

तेज के स्वर में कुछ कम्पन-सा आया लेकिन फिर उसने अपने स्वर को संभालकर कहा, "मेरे एक मित्र हैं डाक्टर प्रतापकृष्ण। वे कालेज में मुझसे एक साल आगे थे, यह है उनका चित्र···"

"क्या आप उन्हें अपने हस्पताल में बुला रहे हैं ?"

"हस्पताल में भी बुला लेंगे···लेकिन पहले अपने घर में···"

"घर में ?"

"और मैं तुम्हें वरदान दूंगा वीणा···"

"मेरे देवता ! अगर आप मुझे वरदान नहीं दे सकते तो कम-से-कम
तो न दीजिए···" वीणा की दोनों पलकों में दो आंसू कांपने लगे
से तेज के पूरे शरीर में एक कंपकंपी-सी दौड़ गई।

"वीणा···"

"तेज, ये बड़े कच्चे धागे हैं···दोनों हाथों से पकड़कर तोड़
लिए···" और वीणा रो उठी।

"वीणा !"

"हां तेज, किसी के हाथों में मेहंदी का रंग नहीं लगा, किसी की बांहों
में चूड़ियां नहीं छनछनाईं और किसी के कानों ने बाजों की आवाज नहीं
सुनी। इसीलिए तो ये धागे बहुत कच्चे हैं तेज। बहुत कच्चे···तोड़
डालिए···तोड़ डालिए···" और वीणा के होंठ बेतरह तड़पने लगे।

"वीणा···"

"भगवान् इनका साक्षी थोड़े ही है···तोड़ डालिए और फिर आपके
हाथों का दोष तो है नहीं, आपने तो इन धागों को नहीं बिखेरा था···
इन्हें तो स्वयं मैंने मकड़ी के जाल की तरह बुना है···और अब स्वयं इनके
जाल में फंसी हुई हूं। मैं आपसे कुछ भी नहीं कहती तेज, लेकिन आप
मुझे इस जाल में फंसा रहने दीजिए···"

वीणा के दिल का गुबार उसके होंठों से जूझ रहा था।

"जीवन की डोर बहुत लम्बी होती है वीणा···"

"हां, बहुत लम्बी होती है तेज, लेकिन ये कच्चे धागे उससे भी लम्बे
होते हैं···बाकी वर्षों को मैं मीती बना-बनाकर इस डोर में पिरोती
रहूंगी···और जीवन का अन्तिम श्वास लेते समय यह माला मैं आपके
अर्पण करूंगी···अगर आप मुझे वरदान देना चाहते हैं तो यही वरदान
दीजिए कि जिस माला को आप मेरे जीवन के हाथों से न ले सके, उ
मेरी मृत्यु के हाथों से स्वीकार करेंगे।" न जाने वीणा किस प्रक
यह सब कह गई। आज तेज के सामने उसने अपना हृदय खोलकर
दिया।

"सुना है कि पुराने जमाने में राजा लोग वेश बदलकर
महलों में आ जाते थे। छलावा बनकर अपनी रानियों को छला करते
मालूम होता है जमाना बदल जाता है लेकिन मनुष्य नहीं बदलता।
को किसी की परीक्षाएं लेने में न जाने क्या आनन्द आता है···" व
होंठों पर कुछ इस प्रकार की हंसी ऊभरी कि उस हंसी के स
उसकी आंखों में दो मोटे-मोटे आंसू भी कांपने लगु। उसने अपने

लिया हुआ चित्र तेज को लौटा दिया।

"ये हाथ बड़े कीमती हैं वीणा! ये पूजा करने के योग्य नहीं हैं, पूजा कराने के योग्य हैं।" वीणा के हाथों से चित्र लेते हुए तेज ने कहा।

"लेकिन इन हाथों पर खून के छींटे पड़े हुए हैं···" वीणा ने अपनी श्वेत और कोमल हथेलियां तेज के सामने पसार दीं।

"वीणा!"

"मैंने जान-बूझकर यह खून नहीं किया तेज, बिल्कुल अनजाने में हो गया है···फिर भी मेरे हाथों को खून तो लगा ही हुआ है···"

"ऐसा मत कहो वीणा।"

"कैसे न कहूं—नीना की ओर तो देखिए, घुल-घुलकर जान दे रही है···अब मेरा कोई बस नहीं चलता···" और उसने दोनों हाथों से अपना मुंह ढांप लिया।

तेज ने आंखें भरकर वीणा के ढंपे हुए चेहरे की ओर देखा, और फिर उसकी आंखों के सामने नीना का चेहरा भी उभर आया। तेज को कुछ समझ नहीं आ रही थी कि आखिर ये कौन-से धागे थे जिन्होंने उन तीनों को अपनी लपेट में ले लिया था। तीनों के पैरों से खून रिस रहा था, तीनों के मुंह-सिर घायल हो गए थे लेकिन कोई धागा टूट नहीं रहा था। कैसे धागे थे ये?

भाग्य का खेल

नीना मां बनने वाली थी और अपने पिछले दिन उसने ऐसे स्वाभाविक रूप से व्यतीत किए थे कि उसके चेहरे पर किसी प्रकार के चाव या निराशा का पता न चलता था। उसके स्वास्थ्य में कोई विशेष बिगाड़ नहीं था लेकिन एक बड़ी निढाल-सी कमजोरी उसके अंग-अंग में रच गई थी।

प्रसवकाल की पहली पीड़ाओं के साथ ही उसे हस्पताल में पहुंचा दिया गया।

"भाग्य के खेल बड़े निराले हैं, तेज।" हस्पताल के कमरे में पहुंचकर उसने धीमे स्वर में तेज से कहा।

"नीना!"

"समय एक कहानी को दोहरा रहा है।" नीना बिस्तर पर लेट गई। नर्स उसे लिटाकर बाहर चली गई और तेज एक कुर्सी को नीना के पलंग

ाकर बैठ गया।
···बस आज की रात कठिन है···फिर कल से तुम्हारा नया
रम्भ होगा···"तेज ने नीना के हाथों को अपने हाथों में लेकर
से से कहा।
जानती हूं तेज, नया जीवन। बिल्कुल नया जीवन···नया
।"
नीना !"
जरा सोचिए···जरा भाग्य के खेलों को देखिए···जब मेरी मां ने
जन्म दिया था—यही हस्पताल था···शायद यही कमरा होगा···
आज ऐसी ही रात थी···तब मेरी मां का दूसरा जन्म हुआ था···
आज उसी हस्पताल में, शायद उसी कमरे में···मेरी मां का तीसरा
ा होगा···"
"नीना, भगवान् के लिए उस भ्रम को मन से निकाल दो···व
हें मुझपर दया नहीं आती ?"
"भाग्य के खेलों को किसी पर दया नहीं आती···मेरे तो बस में ए
कुछ नहीं है···ये तो भाग्य के खेल हैं···जो खेल वह खिलाएगा, हम
देखेंगे···मेरी एक बात याद रखना तेज।"
"नीना !"
"आप मेरी बच्ची का नाम भी नीना ही रखिएगा।"
"···भगवान् करे तुम्हारा भ्रम आज रात ही टूट जाए।" तेज के
होंठों पर एक दर्द-भरी मुस्कराहट उभरी।
"कैसे ?"
"तुम्हारे यहां लड़का उत्पन्न होगा नीना।" तेज फिर मुस्करा
दिया।
"नहीं तेज, भाग्य की कहानी अभी बदली नहीं है···अभी मेरी मां
की आत्मा भटक रही है···वह पहले जन्म में सुखी नहीं रह सकी···दूसरे
जन्म में भी उसे सुख नहीं मिला···अब वह तीसरा जन्म लेगी···उसे नया
जन्म लेना पड़ेगा···और जब तक उसकी आत्मा अपने प्यार के लिए
भटकती रहेगी···वह बार-बार नीना ही बनेगी···वह बार-बार जन्म लेती
रहेगी।"
"भ्रम की कोई तो सीमा होती है नीना।" तेज घबराकर कुर्सी से उठ
खड़ा हुआ।
"हां तेज, अब मेरे दुःखों की कोई सीमा नहीं रही। भगवान् से

कहिए कि अब तीसरे जन्म में नीना के दुःख समाप्त हो जाएं···कितना अभागा नाम है, नीना···भाग्य हाथ धोकर इसके पीछे पड़ गया है···तेज, डाक्टर को बुलाइए···मैं चली···" और नीना पीड़ाओं से बेहाल हो गई।

···उस रात पीड़ाओं से और दुःखों से चरमराती हुई नीना की कोख से एक नन्ही-सी बच्ची ने जन्म लिया।

अभी नीना अपने आपे में नहीं लौटी थी जब हस्पताल की लेडी डाक्टर ने जाकर तेज को बच्ची के जन्म की सूचना दी। उस समय वीणा भी इसी खबर की प्रतीक्षा में तेज के पास बैठी थी। चढ़ती सर्दियों की ठंडी रात थी···"लड़की···लड़की" तेज के होंठ कांपे और उसके माथे पर पानी की बूंदें आ गईं।

"नीना का क्या हाल है?" वीणा ने डाक्टर से पूछा।

"बहुत कमजोर है, अभी होश में नहीं···लेकिन ठीक है···" और लेडी डाक्टर चली गई।

"एक···और···नीना···" तेज के होंठ हिले।

"आप इतना घबरा क्यों गए हैं···नीना ठीक हो जाएगी···क्या मैं नीना के पास जाऊं?" वीणा बोली।

"वीणा···!"

"आप इतना क्यों घबरा गए हैं!"

"वीणा···मालूम नहीं क्या होने वाला है···"

"तेज!"

"शायद नीना बचेगी नहीं···वीणा!"

"यह आप क्या कह रहे हैं?"

"वह बच सकती थी···अगर···"

"अगर···"

"अगर उसके यहां बेटा जन्म लेता।"

"आप यह सब क्या कह रहे हैं?"

"मैं ठीक कह रहा हूं वीणा···नीना यही कहती थी···उसे इस बात का पूरा विश्वास था कि उसके यहां बच्ची जन्म लेगी···और उसे इस बात का पूरा विश्वास है कि वह ज़िन्दा नहीं रहेगी···वीणा, मुझे भी भ्रम हो गया है···उफ!" और तेज के पूरे शरीर में एक कम्पन-सा आ गया।

"यह एक संयोग की बात है तेज, कि नीना के कथनानुसार लड़की ने जन्म लिया है···आपको क्यों ऐसा भ्रम हो गया है···आइए उसके

चलें..." वीणा ने कहा और तेज को लेकर नीना के कमरे में चली

तेज के पैरों में जैसे किसी ने सिक्का भर दिया हो और पत्थर जैसे पैरों के साथ जब तेज उस कमरे के दरवाजे के पास पहुंचा, डाक्टर मुस्कराकर कहा, "नीना अपने होश में आ गई है।"

नवजात बच्ची को डाक्टर ने एक दूध जैसे श्वेत कपड़े में पालने में ल दिया था। बच्ची नहलाई जा चुकी थी और जुबान पर लगाए हुए हद को अभी तक चाट रही थी।

तेज ने नीना के पसीने से भीगे हुए माथे पर अपना हाथ रख दिया। पालने के पास खड़ी राजवंती ने मुस्कराकर कहा, "बिल्कुल नीना जैसा चेहरा है...मुझे वे दिन याद आ गए हैं जब मैं वीणा के साथ-साथ नीना को भी अपना दूध पिलाया करती थी...हूबहू नीना है..."

वीणा ने पालने में से बच्ची को उठाकर गोद में ले लिया और नीना के करीब ले जाकर बोली, "देखो नीना, कितनी सुन्दर है।"

नीना के कमजोर होंठों पर एक मुस्कराहट आई और उसने एक नजर तेज पर डाली। धीरे से बच्ची की ओर देखकर बोली, "तुम आ गईं नीना?"

तेज के कानों में यह स्वर गूंजा और उसके पैरों में भरा हुआ सिक्का उसके अंग-अंग में फैलने लगा।

जीवन बाबा

तेज डाक्टर बन चुका था और पूरे हस्पताल का इन्चार्ज था, लेकिन जीवन बाबा के लिए अब भी वही तेज था, राजवंती के लिए वही नन्हा बच्चा था और नीना और वीणा के लिए उनका वही पुराना साथी।

नीना के मन का भ्रम जैसे एक भूत की बीमारी थी, उसके कीटाणु धीरे-धीरे नीना के मन में से उठकर तेज के मन में भी चले गए थे। ते अपने-आप को संभाल-संभालकर थक चुका था लेकिन यह विचार कि प्रकार उसके मन से नहीं निकल रहा था कि नीना अब बचेगी नहीं।

इस विचार ने तेज को साहसहीन-सा बना दिया था और उसे प्रतीत होता था कि उसका आशा-दीपक प्रतिक्षण बुझता चला जा रह और उसके सामने अंधकार और अंधकार फैलता चला जा रहा था। अपनी असीम उदासियों में घिरा हुआ वह अपने कमरे की एक

र बैठा हुआ था, जब जीवन बाबा उसके कमरे में आए। उनके हाथ में चाय की ट्रे थी।

"बाबा।"

"तेज बेटा।"

"आपने अपने गले में यह क्या बन्धन डाल रखा है···आप तो एक स्वतन्त्र मनुष्य थे···आपने क्यों ये तार अपने गिर्द लपेट लीं···?"

"मनुष्य के बस में कोई बात नहीं होती तेज। जो सम्बन्ध किसी से बनना होता है, वह किसी-न-किसी तरह ज़रूर बन जाता है।"

"और आंखें रोकर रहती हैं···क्यों बाबा?" दुःख-भरे स्वर में तेज ने कहा।

"तुम ऐसा क्यों कह रहे हो तेज?"

"इसलिए कि शायद आपकी आंखों को भी···।"

"तेज!"

"आप स्वयं ही कहते हैं ना कि मनुष्य के बस में कुछ नहीं होता··· आपने मुझे कभी अपने दिल की बात नहीं बताई···लेकिन एक दिन आप कह रहे थे, आप एक स्वतन्त्र पक्षी हैं···आपका अपना कोई नहीं है···कभी आपका भी एक घोंसला होता था लेकिन फिर आपके घोंसले के सब तिनके बिखर गए, लेकिन मैं कहता हूं आपने फिर क्यों मुझसे सम्बन्ध स्थापित कर लिया, आपने फिर से घोंसला बनाने की कोशिश क्यों की···तिनके फिर बिखर जाएंगे···"

"तेज!" जीवन बाबा के होंठों से निकला और जब तेज ने नज़रें उठाकर बाबा के चेहरे की ओर देखा, उनका चेहरा खोए हुए बच्चे की तरह सहमा हुआ था।

"मैं इसलिए तो कहता हूं बाबा···आपने अपनी आंखों को क्यों फिर से रोने पर मजबूर किया···"

"तेज···" जीवन बाबा के होंठ फड़फड़ाकर रह गए।

"जिनके भाग्य में आंधियां ही आंधियां लिखी हों···उनके घोंसले घोंसले नहीं रह सकते बाबा···अच्छा एक प्याली चाय तो बना दीजिए··· और देखिए···कई लोगों का भाग्य कैसे एक-दूसरे से टकरा जाता है··· डाक्टर सलूजा कितने अच्छे थे···पराये पक्षियों को भी अपनी छत्रछाया में ले लेते थे। आज शायद उनका घोंसला भी घोंसला नहीं रहेगा···उनकी वीणा ने व्यर्थ ही अपना भाग्य ऐसे तिनके के साथ जोड़ लिया है, जिसके भाग्य में घोंसला बनाना लिखा ही नहीं है···!"

"मेरे तेज !"

"और देखिए बाबा, जब देवराज ने भी नीना को अपनी बेटी बना
ा तो उसने समझा कि उसका घोंसला आबाद हो गया है लेकिन जिनके
य में ही वीरानियां लिखी हों वे···कृष्णा देवी चली गईं और अब
ना भी जा रही है।"

"तुम क्या कह रहे हो तेज !"

"मुझे ऐसा मालूम होता है बाबा, कि नीना बचेगी नहीं···आज लेडी
डाक्टर कह रही थी कि नीना की हालत अच्छी नहीं है···"

"तुम्हारी डाक्टरी किस दिन काम आएगी तेज !"

"भाग्य के हाथ डाक्टरियों के मोहताज नहीं होते बाबा। खेल खत्म
हो रहे हैं···और मैं···तो शुरू से ही पेड़ से गिरा हुआ एक पत्ता हूं···
एक पत्ता···एक तिनका···"

"तिनका-तिनका जोड़कर ही घोंसला बनता है बेटा।" जीवन बाबा
का स्वर कांप गया।

"हां बाबा, लेकिन नीना जा रही है···और तेज भी नहीं रह
सकेगा।"

"तेज !" और जीवन बाबा के हाथों से चाय का प्याला छूट गया।

"मेरे साथ अपने भाग्य को मत जोड़िए बाबा, प्यार के इन धागों को
तोड़ डालिए···वीणा से भी कहिए कि वह भी प्यार के इन धागों को अपने
हाथों तोड़ डाले···" और तेज ने अपने हाथों से अपनी आंखें ढांप लीं।

"लेकिन मैं खून के उन धागों को क्या करूं तेज ! जिन धागों ने मुझे
आयु-भर तुम्हारा मुंह देखने के लिए यहां-वहां भटकाया है···"

"बाबा !" तेज घबराकर कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और उसने
जीवन बाबा के दोनों कंधों पर हाथ रखकर बड़ी आश्चर्य-भरी नजरों से
उनकी आंखों में झांका।

"तेज···तेज···" जीवन बाबा अपने आपे में न रहे।

तेज ने जीवन बाबा को अपनी चारपाई पर लिटा दिया और दो
हाथों से उनके हाथ-पैर दबाने लगा। जीवन बाबा अभी संभले नहीं
अचानक तेज को खयाल आया कि पिछली बार जब जीवन बाबा
बीमार पड़ गए थे तो उन्होंने तेज से कहा था कि अगर किसी प्रक
स्वस्थ न हुए तो उनके बाद वह उनके ट्रंक में से चमड़े का एक थैला नि
कर उसमें रखे हुए कुछ कागजों को पढ़ ले···लेकिन जीवन बाबा
हो गए थे और फिर उन्होंने उन कागजों के बारे में तेज से कभी कु

कहा था।

तेज इस ख्याल के आते ही लपककर उनके कमरे में गया लेकिन अभी उसने ट्रंक खोला ही था कि बाहरी सीढ़ियों में से किसी के ऊपर चढ़ने की आवाज़ सुनाई दी। तेज को लगा कि कोई उसके कमरे की ओर जा रहा है, उसने बाहर की ओर झांका; आने वाला कोई दूसरा नहीं था, वीणा थी।

"वीणा, जीवन बाबा अचानक बीमार हो गए हैं, तुम जाकर उनके पास बैठो, मैं अभी आता हूं।" तेज ने सीढ़ियों में जाकर वीणा से कहा और फिर जीवन बाबा के कमरे में लौट आया।

तेज के दोनों हाथ ट्रंक में रखे हुए किसी चमड़े के थैले के लिए भटक रहे थे। कपड़ों की तहें खुल गईं। कुछ खुले हुए कागज़ बिल्कुल गडमड हो गए और जब एक चमड़े का थैला सचमुच तेज के हाथों से छुआ तो तेज के पूरे शरीर में एक झनझनाहट-सी फैल गई।

थैले की भीतरी तह में केवल एक लम्बा-सा पत्र पड़ा था जिसके पुराने और मैले कागज़ों को तेज के कांपते हुए हाथों ने खोलकर सीधा किया। पत्र इस प्रकार था:

मेरे तेज बेटा,

मैं तुम्हारा अभागा बाप हूं। मैंने तुम्हें जन्म दिया था। मेरा कर्तव्य था कि मैं संसार की हर वस्तु तुम्हारे कदमों में ढेर करता। जब मैं तुम्हें छाती से लगाकर प्यार करता तो तुम्हें मालूम होता कि पिता का प्यार किसे कहते हैं। लेकिन मैं तुमसे कितनी दूर था। इतनी दूर कि मैं कभी तुम्हें दो होंठों से पुचकार भी नहीं सकता था।

आज मेरी आंखें आंसुओं से भरी हुई हैं। मेरा हृदय उनसे भी अधिक भरा हुआ है। मैं किसे कुछ कहूं? इस भरी दुनिया में एकमात्र तुम ही मेरे अपने हो और तुम भी अभी इतने छोटे हो कि मेरा पत्र नहीं पढ़ सकते। फिर भी मैं तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूं। मैं जानता हूं कि मैं तुम्हें डाक द्वारा यह पत्र नहीं भेजूंगा फिर भी मैं तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूं। मैं भला और किससे अपने मन की बात कहूं?

मैं यह पत्र लिखकर कहीं सम्भाल रखूंगा। जब तुम बड़े हो जाओगे तो उस समय शायद तुम्हें यह पत्र मिल जाए या शायद कभी न मिले। न जाने मैं कभी तुम्हारा मुंह देख भी सकूंगा या नहीं। लेकिन अगर मैं जीवित रहा, वर्ष हा वर्ष तक मेरी आंखों में तुम्हारी वह शक्ल घूमती रहेगी, जिस शक्ल को मैंने अन्तिम बार देखा था। उस समय तुम दो वर्ष और तीन

नों के थे। तुम्हारे सिर पर सुनहले रंग के लच्छेदार बाल थे जो तुम्हारे
ये पर लुढ़क आते थे और बड़े सुन्दर लगते थे। तुम अपने पूरे दांत
काल चुके थे। जब तुम हंसते थे, तुम्हारे दूध के दांत मुझे बहुत ही प्यारे
गते थे। मेरा दिल चाहता था कि दोनों जहान तुम पर न्योछावर कर
दूं लेकिन मैं कितना अभागा हूं कि मैं जी भरकर तुम्हारी हंसी को भी
नहीं देख सका और जब अन्तिम बार मैंने तुम्हारी ओर देखा तो तेज !
बुखार के कारण तुम्हारी हंसी चुरमुरा चुकी थी। तुम्हारी दोनों बड़ी-
बड़ी आंखें पीड़ावश रो उठती थीं और कभी थककर बन्द हो जाती थीं...
भला कोई बाप उस हालत में बेटे को अपने से जुदा कर सकता था जिस
हालत में मैं तुम्हें छोड़ आया था, मेरे बच्चे ! तुम दिल ही दिल में मुझे
क्या कहते होगे ? तुम्हारे पिता ने क्या किया ? तुम कितने ही दिनों तक
"बापू...बापू" करते रहे होगे लेकिन तुम्हारे बापू ने अपने कानों को पत्थर
कर लिया...तुम्हारी एक आवाज भी नहीं सुनी...तुम्हें अपनी छाती से
तोड़कर वहां डाल आया...मेरे बेटे, मुझे क्षमा कर देना...इसमें मेरा
कोई दोष नहीं, मैं बेवस था।

मेरे बच्चे, मैं यह पत्र तुम्हें अपनी फौजी नौकरी करते हुए किसी
फुर्सत के समय में नहीं लिख रहा बल्कि इस समय मैं कैदी हूं और यह पत्र
मैं कैदखाने से ही लिख रहा हूं।

इसीलिए तो मैं कहता हूं कि शायद मैं कभी तुम्हारा मुंह नहीं देख
सकूंगा। मैं पत्थर की इन ऊंची दीवारों के अंधकार में ही समाप्त हो
जाऊंगा। वे मुझे अपराधी ठहराते हैं जिन्होंने मुझे इन ऊंची पथरीली
दीवारों के पीछे डाल दिया है। वे मुझे विद्रोही कहते हैं क्योंकि एक दि
मैं अपने फौजी साथियों से यह कह बैठा था कि ये लड़ाइयां गलत हैं,
लड़ाइयां भयानक हैं, मैं और आप सब जीना चाहते हैं। हम अपने बी
बच्चों से बिछुड़ना नहीं चाहते। हम किस चीज के लिए परदेशे
मारे-मारे फिरते हैं ? हम क्यों एक-दूसरे को मारते हैं और एक-दूस
खून से खेलते हैं। हम मौत बिखेरते हैं और मौत को मोल लेते हैं...य
कितना गलत है, हम तो जीना चाहते हैं...

मैं क्या करूं मेरे तेज, मुझे बुरी तरह तुम्हारी याद सता रही
मुझे समझ नहीं आता था कि मैं अपने बच्चे को भटकता छोड़कर
देश का क्या संवार दूंगा। मैं सच कहता हूं, मेरे तेज, मैं अपनी
विद्रोही नहीं हूं। मैं अपनी फौज को तो भला क्या हानि पहुंचा स
मैं तो दुश्मन की फौज को भी कोई हानि नहीं पहुंचाना चाहत

नुष्य को कोई हानि नहीं पहुंचा सकता। भला एक मनुष्य दूसरे
का दुश्मन क्यों बनता है ? मुझे समझ नहीं आती।
तो सदके लिए शान्ति का इच्छुक हूं, वे मुझे अपराधी ठहराते हैं।
तुम्हारा मुंह देखना चाहता हूं, अपने बेटे का मुंह···उन्होंने मुझे
ाने में डाल दिया है। मैं तो अपने खेतों में असाढ़ की नई फसल के बीज
चाहता हूं, उन्होंने मेरे हाथ-पैरों में बेड़ियां डाल दी हैं···
मेरा जी चाहता है, मैं तुम्हें यह पत्र इतना लम्बा लिखूं कि यह मेरे
स्त दुःखों की एक पुस्तक बन जाए···मैंने कैदखाने के एक कर्मचारी की
ायता से ही यह कागज और पेंसिल प्राप्त की है। वह मेरे कागजों को
म्भालकर रखेगा और इन पन्नों को कभी वही तुम तक पहुंचाएगा। मैं
पना सब कुछ तुम्हारे सामने रखना चाहता हूं, न जाने किनने दिनों तक
ह पत्र लिखता रहूंगा। जब कभी कोई पहरेदार मेरी कोठरी के पास से
गुजरेगा मैं इन कागजों को इस प्रकार छुपा लूंगा जैसे कोई चील के पंजों से
मांस की बोटी को छुपा लेता है।
हां, मैं तुम्हें लिख रहा था कि इस समय मेरी दोनों आंखें आंसुओं से
भरी हुई हैं और मेरा हृदय उससे भी अधिक भरा हुआ है। अपनी आंखें
बार-बार मैं अपने हाथों से पोंछ चुका हूं लेकिन वे फिर भर आती हैं···
तुम्हारी और मेरी आयु में पूरे छब्बीस वर्ष का अन्तर है···लेकिन फिर भी
आज मैं तुम्हारे साथ अपनी सब यादों को सांझा करना चाहता हूं···।
पाठशाला से निकलकर मैं घंटों खेतों में घूमा करता था, कुओं पर बैठा
रहता था। मैं साथियों की टोलियां बना-बनाकर दिन-दिन-भर गीत गाता
विवश कर देता था।
उन्हीं दिनों जमना से मेरी मुलाकात हुई। जमना उसी गांव की
सुन्दरी थी और भगवान् ने जो रूप उसे दिया था, मैं और क्या कहूं, उसका
साक्षात् रूप तुम हो। तुम्हारी तरह ही उसके बाल लच्छेदार थे, तुम्हारी
तरह ही श्वेत उज्ज्वल उसका चेहरा था और बिल्कुल तुम्हारी जैसी उसकी
बड़ी-बड़ी आंखें थीं। जमना तो मेरे मन को भाई ही थी, मैं भी उस
मन को भा गया।
जब मैं 'मिर्जा' की लै उठाता था, जमना कहती थी, उसके हाथों
चर्खे की पूनी छूट जाती थी और बोखला जाने से उसकी पोरों में तक
की सुई चुभ जाती थी। मेरी तो उससे भी बुरी हालत थी। जब-जब
'मिर्जा' गाता था तो मैं जमना को 'साहिबां' समझ लेता था और अ

'मिर्जा'। लेकिन मुझे पूरा विश्वास था कि जब मैं अपनी साहिबा
ाकर ले जाऊंगा तो मैं तीरों से मारा नहीं जाऊंगा बल्कि साहिबा
तकर ले जाऊंगा। मिर्जा-साहिबा की कहानी को अब रोना नहीं
—उन दिनों मिर्जा और हीर गाते हुए मैं कई-कई बोल अपनी ओर
नमें जोड़ देता। कभी-कभी अकेले में अपने मन से कुछ बोल निकाल
ा अर्थात् मैं कवि बनता जा रहा था। धीरे-धीरे मेरे साथियों को भी
ो कवि श्री का पता चल गया। कई आकर मुझसे मेरी कविता सुनते
ार मजाक करते, "जमना के दरवाजे के सामने धूनी रमा लो।" "रां
ो तरह जोगी बन जाओ और अलख जगाया करो।" "मिर्जा की तर
ोड़ी पर चढ़कर धावा बोल दो..."

जमना के घर वाले बिल्कुल कान नहीं धरते थे बल्कि धीरे-धीरे मैं
गांव के बड़े-बूढ़ों की नजरों में भी खटकने लगा। मैं बचपन ही में अनाथ
हो गया था और अपने चचों की दया पर पल रहा था। मेरी पीठ ठोकने
वाला कोई नहीं था, बस हृदय की वेदना को कुछ कम करने के लिए
कविताएं कहता रहता था।

जमना मुझे छुपे चोरी-चोरी मिला करती थी लेकिन मेरे साथ निकल
भागने को वह बिल्कुल तैयार नहीं थी। उसे अपने बूढ़े पिता से बहुत प्यार
था। अब हर जबान पर हमारी चर्चा थी जमना के चचों-तायों ने उसके लिए
कई लड़के ठीक किए लेकिन न जाने किस प्रकार जमना के पिता के मन में
दया जगी और उसने मेरी पीठ पर हाथ रख दिया। घर में जमना अपने
पिता की दूसरी पत्नी से उत्पन्न हुई थी। जमना के दो बड़े भाई थे और
सौतेली भाभियां थीं। उसकी मां मर चुकी थी शायद इसी कारण से बूढ़े
पिता को भी जमना से अत्यन्त प्रेम था। वह जमना के मन की बात जान
गया था और पूरी बिरादरी के सामने तनकर खड़ा हो गया था।

जैसे भी हुआ जमना के साथ मेरा ब्याह हो गया। यों उस ब्याह में न
तो जमना के भाई शामिल हुए और न ही उसके चचे-तायें। लेकिन जमना
के पिता के जीतेजी किसी ने हम पर तीखी नजर नहीं डाली। मैं कविता
आदि छोड़कर खेती-बाड़ी में दिल लगाने लगा। मेरे लिए फसलों के
सुच्ची सुगन्धित और घर में जमना के हाथों से पकी हुई रोटी स्वर्ग समा
थी। मुझे इससे अधिक और किसी वस्तु की इच्छा नहीं थी। मेरी मन
कामना पूर्ण हो गई थी।

साल के पूरे तीन सौ पैंसठ दिन भी नहीं गुजरे थे, जब जमना के
का देहान्त हो गया। जाते समय उसे भी यह भय खाए जाता था कि

बाद वे लोग हमारे साथ न जाने क्या सलूक करेंगे। और उसका वह भय बिल्कुल ठीक निकला। उसके आखें बंद करते ही गांव-भर की आंखें बदल गईं। उसके भाइयों ने हमारी हर चीज़ छीन ली। उनका कहना था कि उनके पिता ने बेटों के हक को ज़बर्दस्ती बेटी को दे दिया था। हमने इस सबको सहन किया लेकिन उनकी दुश्मनी ने मेरा समय-असमय घर से बाहर निकलना मुश्किल बना दिया।

पहले तो हमने सोचा कि गांव छोड़कर किसी शहर में चले जाएं और कोई काम-धाम करके अपना समय बिताने लगें। लेकिन उन्हीं दिनों तुम अपनी मां की कोख में आ चुके थे। मैं सोचता था इस हालत में जमना को कहां भटकाता फिरूंगा, यहां सिर छुपाने के लिए जगह तो है। लेकिन जमना के भाइयों की शह पाकर गांव का हर प्राणी हमारा दुश्मन बन गया था। वे मेरे खेतों में पानी न जाने देते, मेरी फसलें उजाड़ डालते, उनमें अपने ढोर-डंगर छोड़ देते। गांव की भरी पंचायत के सामने यह अन्याय होता रहा।

पहला महायुद्ध छिड़ चुका था। गांव में भरती अपने ज़ोरों पर थी। मेरा दिल बिल्कुल टूट गया था। मुझसे जमना का सहमा हुआ चेहरा देखा नहीं जाता था जिस जमना के चेहरे के लिए मैं सहमता था और कविता करता था, वह चेहरा आज मेरे पास था लेकिन दिन-प्रतिदिन पीला पड़ता जा रहा था। मुझे समझ नहीं आ रही थी कि मैंने किसी का क्या बिगाड़ा था। मैंने भी भरती के लिए अपना नाम दे दिया। जमना बहुत रोई, बहुत रोई। मैंने उसे और भी बेसहारा बना दिया था। उस रात शिकारी कुत्तों से डरे हुए हिरनों की तरह हम एक-दूसरे के साथ दुबके बैठे रहे।

जमना के नौ महीने पूरे हो चुके थे···जमना की चीखों और केसरो दाई के दिलासों में रात का पहला पहर निकल गया। दूसरा पहर गुज़रते ही तुम्हारे रोने की आवाज़ से मुझे और जमना को एक विचित्र प्रकार की प्रसन्नता प्राप्त हुई। मैंने अपने हाथ से तुम्हें गुड़ चटाया और दीये के हल्के प्रकाश में तुम्हारे चेहरे में से अपना और जमना का चेहरा देखा।

मैं होऊं, जमना हो और हम दोनों का एक सांझा बुत तुम होओ। मैं अनाज उगाऊं, जमना उसे पीसकर और गूंधकर रोटियां पकाए और हम दोनों रोटी का छोटा-सा टुकड़ा तोड़कर तुम्हारे नन्हे-से मुंह में डालें···बस, इससे बड़ा मेरा और कोई स्वप्न नहीं था। अमन मेरा जीवन था और मैं अमन, प्यार और पेट भर खाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहता था··· लेकिन···भाग्य कुछ और ही चाहता था। तुम अभी पूरे चालीस दिन के भी

नहीं हुए थे, जब मुझे अपनी फौजी नौकरी पर हाजिर होना पड़ा। तुम दोनों मां-बेटा मुझसे बिछुड़ गए।

जब भयानक अकाल पड़ जाता है, आंतें रस्सियों की तरह बल खाने लगती हैं। फौजी नौकरी करते हुए जब मैं रोटी और फलों के टुकड़े अपने मुंह में डालता, मेरे भीतर मेरे हृदय की भूख से बल पड़ने लगते। मेरे भीतर सोई हुई कविता फिर से जाग उठी थी। पहले मैं प्यार की कहानियां कहा करता था, जमना के रूप को देखकर मुझे कविता सूझती थी, मैं उसके चेहरे और होंठों की तुलना फूलों से किया करता था, लेकिन अब मुझे अनुभव हुआ, मेरे साथ अन्याय हो रहा है, मुझसे जबर्दस्ती मेरी जमना का चेहरा छीन लिया गया था। अब मैं जमना के चेहरे की कल्पना करके प्यार गाथाएं नहीं गाता था, अब मेरा जी चाहता था, मैं इस अन्याय की कहानियां लिखूं, मैं इस अत्याचार की कहानी लोगों को बताऊं। मेरे जैसे और भी तो लाखों थे जिनसे उनके पुत्रों और पत्नियों के चेहरे छीन लिए गए थे और लड़ाई के मैदान में हम जिन दुश्मनों को मारते थे उन्हें भी तो अपने पुत्र उतने ही प्यारे थे। वे भी तो हम जितने ही निर्दोष थे। वे भी शायद दिल से मेरी तरह शान्ति के इच्छुक थे, वे भी शायद अपनी किसी जमना के पास बैठना चाहते थे···

तुम्हारी मां बहुत सुन्दर पत्र लिखना जानती थी। मैं आते समय उससे वचन लेकर आया था कि वह मुझे बराबर पत्र लिखती रहा करेगी। उसने अपने वचन को निभाया और जो पहला पत्र उसने मुझे लिखा, वह केवल लोकगीत था :

* वे चैत दे महीने चित्त लगदा न मेरा
पत्तन तो पार मेरे माहिए दा डेरा
वैसाख पक्की दाख, वै मैं तोड़ न सकां
वै लाल तूं परदेस, दाखां किस विध चखां

---

* ऐ मेरे प्यारे, चैत के महीने में मेरा दिल नहीं लगता नदी पार मेरे माही (प्यारे) का डेरा है
वैशाख का महीना है और अंगूर पक गए हैं लेकिन मैं उन्हें अकेले नहीं तोड़ सकती।
ऐ मेरे प्यारे, तुम तो परदेस में हो भला मैं अंगूर कैसे चख सकती हूं।
जेठ का महीना है, बला की धूप पड़ रही है और तुम तो घोड़े पर सवार हो।
मैं सूत कातता करूंगी (काम करूंगी) और तुम घर बैठे खाया करना। (अर्थात् नौकरी छोड़कर आ जाओ)

जेठ घोड़ा हेठ, धुपां पैन वलाईं
वै कत्तांगी निकडा, घर बैठा खाईं

पत्र के कागज़ से साफ मालूम होता था कि जब वह पत्र लिख रही थी, उसकी आंखों से आंसू निकल-निकलकर कागज़ पर गिरते रहे थे. जिन्हें शायद वह अपने दुपट्टे के पल्लू से पोंछने का प्रयत्न करती रही थी। मेरी और जमना की वेदनाएं पूछी या बताई नहीं जा सकती थीं—मुझे वेदनाओं से परिपूर्ण कई छन्द सूझे, फिर मैंने सोचा कि मैं तो पुरुष हूं, मेरे इस प्रकार के पत्रों से तो जमना का दिल और भी डोल जाएगा। मैंने अपने पत्रों में जमना को बड़े दिलासे देने शुरू किए और एक साल के बाद मैं वापस अपने गांव लौटा···

जमना के आंसू मुझसे देखे नहीं जाते थे। उसके दुपट्टे का और मेरी पगड़ी का पल्लू बार-बार आंखों से लगता रहा। तुम मेरी ओर एक जानी-पहचानी नज़र से देखते थे और फिर मां के कंधे से चिपट जाते थे। तुम्हारे और मेरे लहू की सांझ ने कुछ क्षणों में ही तुम्हें मेरी पहचान करा दी। दो दिन तक तुमने मेरी गोद से उतरने का नाम न लिया। मैं और जमना अपने दुःख-सुख की बातें करते रहे। जब जमना तुम्हें अपनी गोद में लेती थी मैं बड़ी उत्सुक नज़रों से उसकी ओर देखता था कि वह किस प्रकार मेरे बेटे को उठाती थी और जब मैं तुम्हें अपनी बांहों में लेता था, जमना कहती थी, देखे से उसकी भूख नहीं मिटती। अब तुम मुझे बापू···बापू कह-कर पुकारने लगे थे।

हमारी कहानियां अभी हमारे होंठों पर जमी हुई थीं कि मेरी छुट्टियां समाप्त हो गईं। वह हमारी अन्तिम रात थी और मैं चारपाई पर सोया पड़ा था कि मेरी नींद जमना के एक हलके से स्वर से खुल गई। वह अपनी चारपाई पर दाहिने पहलू पर लेटी धीमे स्वरों में गा रही थी :

* जे टुर चलयों चाकरी, वै नीले घोड़े वालया
सानू वोझे पा।
जित्थे ते आवे रातड़ी, वै नीले घोड़े वालया
कढ़ कलेजे ला।

मैंने धीरे से उठकर और उसके सिरहाने की ओर जाकर जब उसके

---

* ऐ नीले घोड़े वाले, अगर तुम नौकरी पर जा रहे हो तो मुझे अपनी जेब में डाल लो।
ऐ नीले घोड़े वाले, जहां कहीं रात पड़ेगी (जेब से निकालकर) मुझे छाती से लगा लेना।

नहीं हुए थे, जब मुझे अपनी फौजी नौकरी पर हाजिर होना पड़ा। तुम दोनों मां-बेटा मुझसे बिछुड़ गए।

जब भयानक अकाल पड़ जाता है, आंतें रस्सियों की तरह बल खाने लगती हैं। फौजी नौकरी करते हुए जब मैं रोटी और फलों के टुकड़े अपने मुंह में डालता, मेरे भीतर मेरे हृदय की भूख से बल पड़ने लगते। मेरे भीतर सोई हुई कविता फिर से जाग उठी थी। पहले मैं प्यार की कहानियां कहा करता था, जमना के रूप को देखकर मुझे कविता सूझती थी, मैं उसके चेहरे और होंठों की तुलना फूलों से किया करता था, लेकिन अब मुझे अनुभव हुआ, मेरे साथ अन्याय हो रहा है, मुझसे जबर्दस्ती मेरी जमना का चेहरा छीन लिया गया था। अब मैं जमना के चेहरे की कल्पना करके प्यार गाथाएं नहीं गाता था, अब मेरा जी चाहता था, मैं इस अन्याय की कहानियां लिखूं, मैं इस अत्याचार की कहानी लोगों को बताऊं। मेरे जैसे और भी तो लाखों थे जिनसे उनके पुत्रों और पत्नियों के चेहरे छीन लिए गए थे और लड़ाई के मैदान में हम जिन दुश्मनों को मारते थे उन्हें भी तो अपने पुत्र उतने ही प्यारे थे। वे भी तो हम जितने ही निर्दोष थे। वे भी शायद दिल से मेरी तरह शान्ति के इच्छुक थे, वे भी शायद अपनी किसी जमना के पास बैठना चाहते थे···

तुम्हारी मां बहुत सुन्दर पत्र लिखना जानती थी। मैं आते समय उससे वचन लेकर आया था कि वह मुझे बराबर पत्र लिखती रहा करेगी। उसने अपने वचन को निभाया और जो पहला पत्र उसने मुझे लिखा, वह केवल लोकगीत था :

* वे चैत दे महीने चित्त लगदा न मेरा
पत्तन तो पार मेरे माहिए दा डेरा
वसाख पक्की दाख, वै मैं तोड़ न सकां
वै लाल तूं परदेस, दाखां किस विध चखां

---

* ऐ मेरे प्यारे, चैत के महीने में मेरा दिल नहीं लगता नदी पार मेरे माही (प्यारे) का डेरा है
वैशाख का महीना है और अंगूर पक गए हैं लेकिन मैं उन्हें अकेले नहीं तोड़ सकती।
ऐ मेरे प्यारे, तुम तो परदेस में हो भला मैं अंगूर कैसे चख सकती हूं।
जेठ का महीना है, बला की धूप पड़ रही है और तुम तो घोड़े पर सवार हो।
मैं सूत काता करूंगी (काम करूंगी) और तुम घर बैठे खाया करना। (अर्थात् नौकरी छोड़कर आ जाओ)

से लगाकर नहीं रख सकता था···और मैंने डाक्टर सलूजा और उनकी दयालु धर्मपत्नी के सामने अपने कलेजे का टुकड़ा डाल दिया···अब मुझसे और कुछ नहीं लिखा जाता, न जाने मैं कब तुम्हारा मुंह देखूंगा···तुम मुझे पहचान भी नहीं सकोगे, लेकिन जब तुम्हें मालूम होगा, हमारे धैर्य के बन्द टूट जाएंगे···मेरे बच्चे···मेरे तेज···मेरे बेटे ! मेरी जमना के सुपुत्र···!

तुम्हारा अभागा बाप
जीवन

"जीवन बाबा···" तेज के मुंह से निकला और उसकी आंखों के आंसू लुढ़ककर उसके होंठों के कोनों तक जा पहुंचे। तेज ने पत्र के पुराने और मैले कागज़ों को अपने माथे से लगाया और फिर दौड़कर अपने कमरे में पहुंचा और जीवन बाबा की छाती से लग गया।

"यह आप क्या कर रहे हैं···जीवन बाबा अभी-अभी होश में आए हैं।" वीणा ने घबराकर कहा।

"बाबा···बाबा !" तेज ने बाबा की छाती को सिर के पूरे बोझ से मसलकर कहा।

"आप तो अब भी बच्चे ही हैं···" वीणा फिर बोली।

"वीणा !" तेज ने इतनी बड़ी होनी के अचंभे को अपने स्वर में भरकर कहा।

"पिछले जन्म में आप इनके बेटे होंगे···भला ऐसा भी क्या प्यार···।" वीणा ने कहा।

"पिछले जन्म में नहीं वीणा, इसी जन्म में···इसी जन्म में···बाबा ! मैंने आपका पूरा पत्र पढ़ लिया है···"तेज ने हाथ में लिए हुए कागज़ बाबा के आगे कर दिए।

"तेज···!" जीवन बाबा कुछ घबरा गए।

"क्यों बाबा···?"

"इसलिए कि मैं हुकूमत की कैद से भागा हुआ अपराधी हूं···इसलिए कि मैं फिर से अपने पहले नाम के साथ नहीं जी सकता···इसलिए कि मैं दुनिया के सामने सुर्खरू होकर तुम्हें अपना बेटा नहीं, कह सकता···"

"और आप इसीलिए वर्ष हा वर्ष मुझसे छुपे रहे बाबा ?"

"खून के इन धागों ने मुझे लड़ाई न लड़ने दी···खून के इन धागों ने मुझे कैद भी न काटने दी···खून के इन धागों ने मुझे जीने पर मजबूर किया···मैं जेलों में से भागा, मैं देशों में से भागा और छुप-छुपकर तुम्हारा मुंह देखता रहा···और अब कितना कठिन था, जब हर समय मैं तुम्हारे

मुंह को छुआ तो उसका मुंह आंसुओं से लथपथ था। रात निकल गई। सुबह उठकर जमना ने घी डालकर आटा गूंधा और मुझे अपने सामने बिठा-कर रोटी खिलाई। कुछ रोटियां एक कपड़े में बांधकर उसने मेरे साथ कर दीं। अब तुम्हें गले से अलग करना बहुत मुश्किल हो रहा था। तुम्हारा मुलायम-मुलायम गाल मेरे गाल से लगा हुआ था लेकिन भाग्य हमारे हाथ पकड़-पकड़कर हमें एक-दूसरे से अलग कर रहा था।

मैं अब तक हवलदार बन चुका था। बिरादरी के रूठे हुए लोग भी कुछ-कुछ मन गए थे लेकिन अब वहां रहना मेरे लिए असम्भव था। जमना की पकाई हुई रोटियों को पल्लू में बांधकर मैं गांव से चल दिया और जब फिर सवा साल के बाद छुट्टी लेकर गांव लौटा तो सब खेल समाप्त हो गए।

जमना एक समय से मुझे लिख रही थी कि उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। अन्दर ही अन्दर वह घुलती चली जा रही थी और जब मैं गांव पहुंचा मेरे आगमन से भी उसके स्वास्थ्य में कोई फर्क न आया। उसके होंठों पर अगने बिछोड़े की कहानियां थीं और उसके चेहरे पर से वह पहली चमक-दमक उतर चुकी थी।

बड़ा सख्त पाला पड़ रहा था। जमना की छाती में कुछ ऐसा दर्द उठा कि जब मेरे नौकरी पर जाने मे सात एक दिन रह गए जमना मुझे हमेशा-हमेशा के लिए छोड़ गई···।

अब मैं हर समय तुम्हें छाती से लगाए फिरता था। अब जमना के सौतेले भाई और अन्य सम्बन्धी भी मुझसे सहानुभूति जताते थे लेकिन मैं उन झूठी सहानुभूतियों को लेकर क्या करता, मैं तो हमेशा के लिए ठगा गया था। उनके अन्याय ने मुझे हमेशा के लिए समाप्त कर दिया था। मुझे कुछ समझ न आती थी। मैं तुम्हें उनके हवाले करके उनकी दया पर नहीं छोड़ना चाहता था, इसके अतिरिक्त तुम्हें अपने पास रखने के लिए उन्होंने एक बार भी अपने मुंह से हामी नहीं भरी थी। छुट्टियां समाप्त हो रही थीं, मैंने तुम्हें गोद में उठाया और लाहौर का टिकट कटा लिया। तुम्हें पिछली रात से बुखार आया हुआ था, शायद अपनी मां के कहीं नज़र न आने के कारण।

मैंने एक बार अपनी नौकरी के दिनों में ही यह खबर सुनी थी कि लाहौर में एक ऐसा हस्पताल है जहां अनाथ बच्चों की पालना की जाती है। मेरे तेज बेटा, अब तुम भी तो अनाथ ही थे, मैं तो न होने के बराबर ही था। मैं देशों, मुल्कों के लिए लड़ रहा था लेकिन मैं अपने बच्चे को गले

नीना के समाप्त होते हुए शरीर में डाल दे। नीना जी उठे, अपनी बच्ची की मां जी उठे, अपने तेज की प्रेमिका जी उठे···।

तेज का माथा झुकते-झुकते नीना के माथे के पास जा पहुंचा और दूसरे ही क्षण में उसके होंठों ने नीना के माथे को छू लिया। नीना को ऐसा लगा जैसे उसकी पूरी आत्मा तेज के दोनों होंठों में घुल गई हो और घुली हुई जर्जर नीना ने वीणा के दोनों हाथों को पकड़कर तेज के हाथों पर रख दिया···"नन्ही नीना तुम दोनों की बेटी है···"

नीना के शरीर में से कोई उसकी आत्मा निकाले लिए जा रहा था। तेज ने अपनी दोनों बांहों में उसके शरीर को समेटा लेकिन नीना के श्वास पहले से भी अधिक टूटे जा रहे थे। रात-भर राजवंती नीना के पायेतें बैठी रही थी लेकिन अब उससे नीना का टूटता श्वास नहीं देखा जाता था। उसे ऐसा लग रहा था कि उसकी आंतें एक रस्सी का रूप धारकर बल खाए चली जा रही थीं। वह छोटी आयु में नीना को चिड़िया के बच्चे की तरह गले से लगाया करती थी। उसके शरीर में से दूध की बूंदें रिस-रिसकर नीना के कंठ में उतरती रही थीं और आज उसकी नीना का जवान मुंह उसकी छाती से टूटा जा रहा था।

"नीना···तीसरा जन्म···नीना···" नीना के श्वेत पड़ते हुए होंठों में से बार-बार और टूट-टूटकर कुछ शब्द निकलते रहे। उसके श्वास और भी उखड़-खाबड़ हो गए···श्वास ऊबड़-खाबड़ होते चले गए और फिर श्वासों की लड़ी टूट गई।

जीवन बाबा पत्थर के बुत की तरह खिड़की की सलाखों का सहारा लिए खड़े थे। उन्होंने तेज के चेहरे की ओर देखा। उन्हें लगा कि तेज के चेहरे पर उनके अपने चेहरे का प्रतिविम्ब था और नीना के चेहरे पर जमना के चेहरे का भ्रम होता था···। बिल्कुल इसी प्रकार उनकी जमना उनका साथ छोड़ गई थी···और आज तेज की नीना उससे बिछुड़ गई थी···जीवन बाबा के माथे में एक दर्द-सा उठा···ये कैसे तिनके हैं··· बिखर-बिखर जाते हैं···टूट-टूट पड़ते हैं···घोंसला नहीं बनाते···घोंसला नहीं बनाते···घोंसला नहीं बनाते।

रहती थी, लेकिन तुमसे कह नहीं सकता था कि मैं तुम्हारा…"

"बस कीजिए बाबा…बस कीजिए।"

"एक तुमसे मेरी दुनिया आबाद है तेज, मुझसे यह मुंह मत छीनो…
मुंह में मेरी जमना का मुंह है…और इस मुंह के साथ वीणा की भी
नया आबाद है।" जीवन बाबा ने अपने दाहिने हाथ से वीणा के सिर पर
ार दिया, वीणा उसके पैरों के पास खड़ी सिसकियां भर रही थी।

घोंसला

दीये की बत्ती क्षण-प्रतिक्षण मध्यम पड़ती जा रही थी। तेल समाप्त
हो रहा था और नीना की आत्मा उसके शरीर से जुदा हो रही थी।
सिरहाने बैठे हुए देवराज की आंखों के आंसू निकल-निकलकर नीना
के माथे पर गिरते रहे। नीना ने अपने कांपते हुए हाथ से अपने माथे को
छुआ और फिर कठिनतापूर्वक अपने होंठ हिलाए।

"नहीं पिताजी…"

"नीना!"

"आपके पास एक और नीना आ गई है।"

"मैंने यह तो कभी नहीं सोचा था कि किसी दिन नीना को नये सिरे
से पालना पड़ेगा…।"

"पिताजी!"

"मेरी नीना…।"

"तेज कहां है और वीणा…?"

"तुम्हारे पास खड़े हैं…" देवराज ने कहा। तेज और वीणा ने रात-
भर पलक तक न झपकी थी लेकिन तेज से शायद नीना का टूटता हुआ
श्वास नहीं देखा जाता था, वह नीना की पीठ की ओर बैठा रहा था।

तेज से बोला नहीं गया लेकिन उसने अपनी हथेली से नीना के माथे क
छुआ।

"अब पिताजी की जगह आप नीना को पालिएगा…यह आपके प
मेरी अमानत है…वीणा…वीणा…" नीना के होंठ कांप उठे।

"नीना…"

"वीणा, तुम इसकी मां बनोगी ना?"

वीणा ने नीना को अपनी कांपती बांहों में ले लिया। उसके
एक ज्वाला-सी उत्पन्न हुई कि किसी प्रकार वह अपनी जान निक